دیوان غالب

दीवान
-ए-
ग़ालिब

مرتبہ

سردار جعفری

ہندستانی بک ٹرسٹ

۳-اے، ناز بلڈنگ، بمبئی ۴

दीवान-ए-ग़ालिब

संकलन

सरदार जा'फ़री

हिन्दुस्तानी बुक ट्रस्ट,
३—अे, नाज़ बिल्डिंग,
बम्बई ४.

نام   مرزا اسد اللہ خاں

عرف   مرزا نوشہ

تخلص   اسد اور غالب

خطاب   نجم الدولہ، دبیر الملک

پیدائش   آگرہ، ۲۷ دسمبر ۱۷۹۷ء

وفات   دہلی، ۱۵ فروری ۱۸٦۹ء

مدفن   خاندان لوہارو کا قبرستان،
سلطان جی چونسٹھ کھمبا، نظام الدین، دلّی.

नाम   मिर्ज़ा असदुल्लाह ख़ाँ

उपनाम   मिर्ज़ा नौशः

कविनाम   'असद' और 'ग़ालिब'

पदवि   नज्मुद्दौलः, दबीरुलमुल्क

जन्म   आगरा, २७ दिसम्बर १७९७

मृत्यु   देहली, १५ फ़रवरी १८६९

मज़ार   लोहारू वंश का क़ब्रिस्तान,
सुलतानजी, चौंसठ खंबा निज़ामुद्दीन, दिल्ली।

دیباچہ

انسانی ذہن کی وسعتیں لامحدود ہونے کے باوجود ایک فرد کا ذہن کتنا ہی وسیع کیوں نہ ہو پھر بھی محدود رہتا ہے۔ بڑے سے بڑا شاعر اور مفکر بھی اس کلیے سے آزاد نہیں، لیکن اس کی تخلیق، شعر یا خواب جسے وہ اپنی ذات سے الگ کر کے آئینے کی طرح دنیا کے سامنے رکھ دیتا ہے، انسانی ذہن کی لامحدود وسعتیں اختیار کرلیتا ہے۔ آنے والی نسلوں کا ہر پڑھنے والا اپنی ذہنی استعداد اور جذباتی شدت کے اعتبار سے اس تخلیق میں نئے معنوں اور کیفیتوں کا اضافہ کر دیتا ہے۔ چنانچہ غالب یا شیکسپیر کا ایک مصرعہ ہزار مواقع پر ہزار نئے معنی پیدا کر سکتا ہے، اس کے دامن میں اتنی وسعت ہوتی ہے کہ وہ آنے والی زندگی کے ہنگاموں کو سمیٹ سکے۔ اس کو تنقید کی زبان میں تعمیم، ہمہ گیری اور تہہ داری کے نام دیئے جاتے ہیں، جو جذبات سے عاری اور خیالات سے خالی لفظی بازی گری سے مختلف چیز ہے اور صرف اس وقت پیدا ہوتی ہے جب شاعر اپنے عہد پر حاوی ہونے کے ساتھ ساتھ لفظوں کے صوتی آہنگ اور معنوی کیفیت سے بھی پوری طرح واقف ہو اور ان کو اس طرح چھیڑ سکے جیسے مطرب ساز کے تاروں کو چھیڑتا ہے۔ ادب کی طویل تاریخ میں چند گنی چنی شخصیتیں اس معیار پر پوری اُترتی ہیں، غالب اُن میں ایک ہے۔

غالب اردو کا محبوب ترین شاعر ہے جسے اقبال نے گوئٹے کا ہمنوا قرار دیا ہے۔ گذشتہ سو سال میں دیوانِ غالب کے متعدد ایڈیشن شائع ہوئے ہیں اور بے شمار مضامین لکھے گئے ہیں۔ ہر نقاد اور پڑھنے والے نے اپنے مذاق اور مزاج کے لئے غالب کے اشعار میں گنجائش دیکھی۔ کبھی خراج تحسین نے عقیدت کی شکل اختیار کی، کبھی ایک سنجیدہ تجزئے کی اور کبھی اس مبالغے کی جو آرٹ کا حسین زیور ہے۔

غالب کی شخصیت انتہائی دلاویز اور ہمہ گیر تھی۔ نسل کے اعتبار سے وہ ایبک ترک تھا جس کا دادا اس کی پیدائش (آگرہ ۲۷ دسمبر سنہ ۱۷۹۷ء) سے تقریباً نصف صدی پہلے سمر قند سے ہندستان آیا تھا۔ اس خاندان نے غالب کو «چوڑا چکلا ہاڑ۔ لانبا قد، سڈول اکہرا جسم، بھرے بھرے ہاتھ پاؤں، کتابی چہرہ، کھڑا نقشہ، چوڑی پیشانی، گھنی لانبی پلکیں اور بڑی بڑی بادامی آنکھیں، اور سرخ و سپید رنگ» دیا تھا جس میں شراب نوشی نے چمپئی دمک پیدا کردی

भूमिका

मानव मस्तिष्क का विस्तार असीमित होने के बावुजूद एक व्यक्ति का मस्तिष्क कितना ही विशाल क्यों न हो फिर भी सीमित रहता है। बड़े से बड़ा कवि और चिन्तक भी इस नियम का अपवाद नहीं। लेकिन उसकी रचना, कविता या स्वप्न जिसे वह अपने व्यक्तित्व से अलग करके आइने की तरह दुनिया के सामने रखदेता है, मानव-मस्तिष्क का असीमित विस्तार धारण करलेता है। आनेवाली पीढ़ियों का हर पाठक अपनी बौद्धिक योग्यता और भावना की तीव्रता के अनुसार उस रचना में नये अर्थों और गुणों की वृद्धि कर देता है। अत:एव ग़ालिब या शेक्सपियर की एक पंक्ति हज़ार अवसरों पर हज़ार नये अर्थ पैदा कर सकती है। उस के दामन में इतना विस्तार होता है कि वह आनेवाली जिन्दगी की ख़ुशियों और ग़मों को समेट सके। इसको समालोचना की भाषा में साधारणीकरण, सर्व व्यापकता, और तहदारी के नाम दिये जाते हैं, जो भावनारहित और विचारशून्य शाब्दिक बाज़ीगरी से भिन्न है और केवल उस समय पैदा होती है जब कवि अपने युग पर हावी होने के साथसाथ शब्दों के संगीत और उनके अर्थों के गुणों से भी भलीभाँति परिचित हो और उनको इस तरह छेड़ सके जैसे संगीतकार साज़ के तारों को छेड़ता है। साहित्य के लम्बे इतिहास में चन्द गिनी चुनी विभूतियाँ इस स्तर पर पूरी उतरती हैं। ग़ालिब उनमें एक है।

ग़ालिब उर्दू का अत्यन्त लोकप्रिय कवि है जिसे इक़बाल ने गेटे का समकक्ष माना है। गत सौ वर्षों में दीवान-ए-ग़ालिब के अनेक संस्करण प्रकाशित हुए हैं और असंख्य लेख लिखे गये हैं। हर समालोचक और पाठक ने अपनी रुचि और स्वभाव के अनुसार ग़ालिब के काव्य में गुंजाइश देखी। कभी प्रशंसा ने श्रद्धा का रूप धारण किया, कभी एक गंभीर विश्लेषण का और कभी उस अतिशयोक्ति का जो कला का सुन्दर आभूषण है।

ग़ालिब का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक और सर्वव्यापी था। वंश के विचार से वह ऐबक तुर्क था जिसका दादा उसके जन्म (आगरा, २७ दिसम्बर १७९७) से लगभग अर्धशताब्दि पूर्व समरक़न्द से हिन्दुस्तान आया था। इस ख़ान्दान ने ग़ालिब को "चौड़ा चकला हाड़, लाँबा क़द, सिडौल इकहरा जिस्म भरे-भरे हाथ-पाँव, किताबी चेहर:, खड़ा नक़्श: चौड़ी पेशानी, घनी लम्बी पलकें और बड़ी बड़ी बादामी आँखें और सुर्ख़-ओ-सुपैद रँग" दिया था। जिस में मदिरा पान ने चम्पई कान्ति पैदा कर दी थी। ग़ालिब का स्वभाव ईरानी था, धार्मिक विश्वास 'अरबी, शिक्षादीक्षा और संस्कार हिन्दुस्तानी और भाषा उर्दू। बुद्धि की कुशाग्रता और काव्य-प्रतिभा जन्मसिद्ध

تھی. غالب کا مزاج ایرانی تھا، مذہبی عقاید عربی، تہذیب و تربیت ہندستانی اور زبان اردو. ذہانت، طباعی اورسخن وری کا ملکہ پیدائشی تھا اور زندہ دلی، آزادہ روی اور خوش اخلاقی نے سونے پر سہاگے کا کام کیا جس کی وجہ سے لوگ اس کی انانیت اور خود پرستی کو بھی برداشت کرلیتے تھے. شعر کہنا بچپن سے شروع کردیا تھا اور پچیس برس کی عمر سے پہلے اپنے بعض بہترین قصائد اور غزلیں کہہ لی تھیں اور تیس بتّیس برس کی عمر میں کلکتے سے دہلی تک ایک ہنگامہ برپا کردیا تھا. تعلیم کے متعلق کافی معلومات اب تک فراہم نہیں ہوسکی ہیں لیکن غالب اپنے عہد کے مروجہ علوم پر حاوی تھا اور فارسی زبان، شعر اور ادب پر بڑی گہری نگاہ رکھتا تھا. اور پھر زندگی کا مطالعہ اتنا وسیع تھا کہ خود لکھا ہے کہ ستر برس کی عمر میں عوام سے نہیں خواص سے ستر ہزار آدمی نظر سے گذر چکے ہیں. «میں انسان نہیں ہوں انسان شناس ہوں» بادشاہوں اور امیروں سے لے کر میفروشوں تک اور دہلی کے علما اور فضلا سے لے کر انگریز حاکموں تک بے شمار لوگ غالب کے ذاتی دوستوں میں تھے. جوانی کی رنگ رلیوں کا ذکر خود بارہا کیا ہے. رقص، سردو، شراب، شاہد بازی، جوا کسی چیز سے پرہیز نہیں کیا اور جب بیس پچیس برس کی عمر میں رنگ رلیوں سے دل ہٹ گیا تو صوفیانہ آزادہ روی اختیار کی اور ہندو، مسلمان، عیسائی سب سے یکساں سلوک کیا. نماز پڑھی نہیں، روزہ رکھا نہیں، شراب کبھی ترک نہیں کی. ہمیشہ اپنے آپ کو گنہگار کہا لیکن خدا، رسول اور اسلام پر پورا ایمان تھا. چند چیزوں کا شوق ہوس کی حد تک تھا. علم اور عزت کی طلب ایک شدید پیاس بن کر عمر بھر ساتھ رہی. کڑوے کریلے، املی کے کھٹے پھول، چنے کی دال، انگور، آم، کباب، شراب، خوبصورت راگ اور حسین مکھڑے ہمیشہ دل کو کھینچتے رہے. یوں تو غالب عمر بھر ان چیزوں کے لئے ترستا رہا لیکن اگر کبھی چند چیزیں ایک ساتھ جمع ہوگئیں تو اس وقت غالب کا دماغ آسمان پر پہنچ گیا اور اس نے اپنے آپ کو ہفت اقلیم کا بادشاہ سمجھ لیا.

چند واقعات غالب کی زندگی میں بہت اہم ہیں. بچپن کی یتیمی، دہلی کا قیام اور کلکتے کا سفر. اور ان کا اثر اس کی شخصیت اور شاعری پر بڑا گہرا ہے. اس کی ابتدائی زندگی اور شاعری کی بے راہ روی مشہور ہے. جو بچہ پانچ برس کی عمر میں باپ کی شفقت سے محروم ہو گیا ہو اور جسے کوئی معقول تربیت نہ ملی ہو وہ اپنی ذہانت اور طبیعت ہی کے زور پر آگے بڑھ سکتا تھا

थी और जिन्दादिली, विचार-स्वातंत्र्य और शिष्टाचार ने सोने पर सुहागे का काम किया जिसके कारण लोग उसके अहं और अभिमान को भी सहन कर लेते थे। शे'र कहना बचपन से आरम्भ करदिया था और पच्चीस वर्ष की आयु से पूर्व ही अपने कुछ उत्तम क़सीदे और ग़ज़लें कहली थीं और तीस-बत्तीस वर्ष की आयु में कलकत्ते से दिल्ली तक एक हलचल मचा दी थी। शिक्षा के सम्बन्ध में काफ़ी जानकारी अब तक उपलब्ध नहीं होसकी है लेकिन ग़ालिब अपने युग की प्रचलित विद्याओं का पण्डित था और फ़ारसी भाषा, और साहित्य पर गहरी नज़र रखता था। और फिर जीवन का अध्ययन इतना व्यापक था कि उसने स्वयं लिखा है कि सत्तर वर्ष की आयु में जन-साधारण से नहीं जनविशेष से सत्तर हज़ार व्यक्ति नज़र से गुज़र चुके हैं। "मैं मानव नहीं हूँ मानव-पारखी हूँ।" बादशाहों और धनवानों से लेकर मधुविक्रेताओं तक और दिल्ली के पण्डितों और विद्वानों से लेकर अंग्रेज़ अधिकारियों तक असंख्य व्यक्ति ग़ालिब के निजी दोस्तों में थे। जवानी की रंगरलियों का ज़िक्र अनेक बार स्वयं किया है। नृत्य, संगीत, मदिरा, सौन्दर्योपासना, जुआ किसी वस्तु से विरक्ति प्रकट नहीं की। और जब बीस पच्चीस वर्ष की आयु में रंगरलियों से दिल हट गया तो सूफ़ियों जैसा स्वतन्त्र आचार-विचार अपनाया और हिन्दू मुसलमान ईसाई सब से एकसा व्यवहार किया। नमाज़ पढ़ी नहीं, रोज़ा रखा नहीं, शराब कभी छोड़ी नहीं। हमेशा स्वयं को गुनहगार कहा लेकिन ख़ुदा, रसूल और इस्लाम पर पूरा विश्वास था। चन्द चीज़ों का शौक़ हवस की हद तक था। विद्या और प्रतिष्ठा की लालसा एक तीव्र तृष्णा बनकर उम्र भर साथ रही। कड़वे करेले, इमली के खट्टे फूल, चने की दाल, अंगूर, आम, कबाब, शराब, मधुर राग और सुन्दर मुखड़े हमेशा दिल को खींचते रहे। यों तो ग़ालिब उम्र भर इन चीज़ों के लिये तरसता रहा लेकिन यदि कभी चन्द चीज़ें एक साथ जमा होगईं तो उस वक़्त उसका दिमाग़ आस्मान पर पहुँच गया और उसने स्वयं को त्रिलोक का सम्राट समझ लिया।

चन्द घटनाएँ ग़ालिब के जीवन में बड़ी महत्वपूर्ण हैं। बचपन में अनाथ होजाना, दिल्ली का निवास और कलकत्ते की यात्रा। और इनका प्रभाव उसके व्यक्तित्व और काव्य पर बड़ा गहरा है। उसके प्रारम्भिक जीवन और शा'अिरी की बेराह-रवी प्रसिद्ध है। जो बच्चा पाँच वर्ष की आयु में पिता के वात्सल्य से वंचित हो गया हो और जिसे कोई उपयुक्त तरबियत (शिक्षा-दीक्षा) न मिली हो वह अपनी प्रतिभा और गुणों के आधार पर ही आगे बढ़ सकता था। और इसमें बेराह-रवी बड़ी महत्वपूर्ण मंज़िल है जहाँ ठोकरें उस्ताद का काम करती हैं। कहा जाता है कि मीर ने ग़ालिब की प्रारम्भिक

اور اس میں بے راہ روی بڑی اہم منزل ہے جہاں ٹھوکریں استاد کا کام کرتی ہیں. کہاجاتاہے کہ میر نے غالب کا ابتدائی کلام دیکھ کر کہا تھا کہ کوئی استاد کامل مل گیا تو اچھا شاعر ہو جائے گا نہیں تو مہمل بکنے لگے گا. ایک ایرانی ملا عبدالصمد کے سوا (جس کا وجود مشکوک ہے) زندگی کے تجربات ہی غالب کے استاد رہے. غالب کی ابتدائی مشکل اور گنجلک شاعری پر، جس کے بعض نمونے موجودہ دیوان میں بھی باقی رہ گئے ہیں، جب آگرے والے ہنسے تو غالب کی انانیت اُنہیں خاطر میں نہ لائی. لیکن جب شادی کے بعد قیام دہلی کے دوران میں بڑے بڑے عالموں اور مستند استادانِ فن سے سابقہ پڑا تو غالب اُن کی رائے کو نظر انداز نہ کر سکا اور پچیس برس کی عمر تک پہونچتے پہونچتے طبیعت صحیح شعر کی طرف مائل ہو گئی. اپنی جاگیر اور پنشن کے سلسلے میں غالب کو تیس برس کی عمر میں (۱۸۲۷ء) کلکتے کا جو سفر کرنا پڑا وہ اس کی زندگی کا بہت بڑا موڑ ہے. وہاں اس نے صرف نئی زندگی کی جھلکیاں ہی نہیں دیکھیں بلکہ اپنی ناکامی کے آئینے میں اپنا منہ بھی دیکھا. اس طرح غالب نے مغل تہذیب کی آخری بہار اور نئی صنعتی تہذیب کے ابھرتے ہوئے نقوش اور اُن کی کیفیتوں کو اپنی شخصیت میں جذب کر لیا.

لیکن ان سب سے بڑا واقعہ عمر بھر کا افلاس ہے جس نے غالب کوہمیشہ بے چین اوو بے قرار رکھا. اب نہ تو آبا و اجداد کی شان و شوکت باقی تھی جن کے رشتے قدیم ایرانی بادشاہوں سے ملتے تھے اور نہ بو علی سینا کا علم تھا. اس لئے اپنے قلم کو غالب نے علم بنا لیا اور آبا و اجداد کے ٹوٹے ہوئے نیزوں کو قلم (فارسی سے) زندگی نے غالب کے ساتھ کچھ اچھا سلوک نہیں کیا اور ہمیشہ اس کی روح میں ریگزار ہی اُنڈیلے. لیکن غالب کی روح نے زندگی کو لالہ زار بخشے. اس کی طبیعت کی یہ فیاضی اردو زبان و ادب کو مالا مال کر گئی.

یہ سوال اہم ہے کہ غالب کے سامنے کوئی نظریۂ کائنات اور فلسفۂ حیات تھا یا نہیں. وہ کسی خاص نظریے کا بانی نہیں ہے اس لئے اس کے یہاں منظم فکر اور پیام کی جستجو غلط ہو گی. لیکن غالب کی شاعری کے فکری عناصر اور فلسفیانہ مزاج سے انکار نہیں کیا جا سکتا. اس لئے رسمی خیالات اور غزل کے روایتی موضوعات کے پیدا کئے ہوئے تضادات کے باوجود کائنات اور انسان کے متعلق غالب کے حاوی رجحانات کا اندازہ کرنا دلچسپی سے خالی نہیں ہے.

اس میں کوئی شک نہیں کہ اردو کا یہ عظیم المرتبت شاعر قدیم صوفیانہ

शा'अिरी देखकर कहा था कि कोई योग्य उस्ताद मिल गया तो अच्छा शा'अिर बन जायगा नहीं तो निरर्थक बकने लगेगा। एक ईरानी मुल्ला अब्दुस्समद के सिवाय, (जिसका अस्तित्व संदिग्ध है) जीवन के अनुभव ही ग़ालिब के उस्ताद रहे। ग़ालिब की प्रारम्भिक कठिन और उलझी हुई शा'अिरी पर, जिसके कुछ नमूने प्रस्तुत दीवान में भी बाक़ी रह गये हैं, जब आगरे वाले हँसे तो ग़ालिब के अहं ने उसकी कोई परवाह नहीं की। लेकिन शादी के बाद दिल्ली-निवास के दौरान में बड़े-बड़े विद्वानों और माने हुए कला-मर्मज्ञों के सम्पर्क में आने के बाद ग़ालिब उनकी राय की उपेक्षा न कर सका और पच्चीस वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते रुचि सही शे'र की तरफ़ प्रवृत्त होगई। अपनी जागीर और पेन्शन के सिलसिले में ग़ालिब को तीस वर्ष की आयु में (सन् १८२७ ई.) कलकत्ते की जो यात्रा करनी पड़ी वह उसके जीवन का बहुत बड़ा मोड़ है। वहाँ उसने केवल नये जीवन की झलकियाँ ही नहीं देखीं बल्कि अपनी असफलता के आइने में अपना मुँह भी देखा। इस प्रकार ग़ालिब ने मुग़ल संस्कृति की आख़री बहार और नई औद्योगिक संस्कृति के उभरते हुए चिन्ह और उनकी कैफ़ियतों को अपने व्यक्तित्व में समो लिया।

लेकिन इन सब से बड़ी घटना जीवनभर की निर्धनता है जिसने ग़ालिब को हमेशा बेचैन और व्याकुल रखा। अब न तो पूर्वजों की प्रतिष्ठा और वैभव बाक़ी था जिनके संबंध प्राचीन ईरानी बादशाहों से मिलते थे, और न बू'अली सीना की विद्या सीने में थी। इसलिए ग़ालिब ने अपने क़लम को 'अलम (ध्वजा) बना लिया और पूर्वजों के टूटी हुई बर्छियों को क़लम (फ़ारसी से)। जिन्दगी ने ग़ालिब के साथ कुछ अच्छा व्यवहार नहीं किया और हमेशा उसकी रूह में रेगज़ार (मरुस्थल) ही उँडेले। लेकिन ग़ालिब की आत्मा ने जीवन को लाल:ज़ार (पुष्पोद्यान) प्रदान किये। उसके स्वभाव की यह उदारता उर्दू भाषा और साहित्य को मालामाल कर गई।

यह प्रश्न महत्वपूर्ण है कि ग़ालिब के सामने विश्व और जीवन के बारे में कोई दृष्टिकोण था या नहीं। वह किसी दर्शन विशेष का निर्माता नहीं है इस लिए उसके यहाँ व्यवस्थित विचार और सन्देश की खोज व्यर्थ होगी। लेकिन ग़ालिब की शा'अिरी में चिन्तन के तत्व और दार्शनिक प्रवृत्ति से इनकार नहीं किया जा सकता। इसलिए रस्मी विचारों और ग़ज़ल के परम्परागत विषयों की पैदा की हुई विपरीतता के बावुजूद विश्व और मानव के सम्बन्ध में ग़ालिब की व्यापक प्रवृत्ति का अनुमान लगाना दिलचस्पी से ख़ाली नहीं है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि उर्दू का यह महान कवि प्राचीन सूफ़ियाना विचारों से प्रभावित था जो उसको अपने अध्ययन के 'अलावा फ़ारसी और

خیالات سے متاثر تھا جو اس کے علمی مطالعے کے علاوہ اسے فارسی اور اردو شاعری سے ورثے میں ملے تھے ۔ یہ کہنے کے بعد بھی کہ « تصوف نہ زیبد سخن پیشہ را » غالب نے کائینات کو سمجھنے کے لئے اور مذہب کی ظاہر داریوں سے بچنے کے لئے تصوف کے بعض خیالات سے مدد لی اور انہیں سے اپنی آزاد خیال اور کج اندیشہ فطرت کی تربیت کی ۔

وہ وحدت الوجود کا قائل تھا ۔ اس نے اپنی فارسی مثنوی « ابر گہر بار » میں کائینات کو «آئینۂ آگہی» کہا ہے جس کی فضا میں بکھرے ہوئے حسنِ حقیقت (وجہ اللہ) کے جلوے نگاہوں کو دعوتِ نظارہ دے رہے ہیں. نہ محض یہ کہ انسان جس سمت رخ کرتا ہے اس سمت «وہی وہ» نظر آرہا ہے بلکہ جس رخ کو انسان چاروں طرف موڑ رہا ہے وہ خود «اسی» کا رخ ہے. دوسری جگہ فارسی نثر میں یہ کہا ہے کہ ذرے کی ہستی اس کے اپنے پندار کے سوا کچھ نہیں ۔ جو کچھ ہے آفتاب حقیقت کا نور ہے ۔ دریا ہر جگہ بہہ رہا ہے اور اس میں موج، حباب اور گرداب ابھر رہے ہیں ۔ اور « ہمہ اوست » ہی « ہمہ اوست » ہے ۔ (غزل ۹۹ شعر ۶، ۷، غزل ۱۶۳ شعر ٤، ۵، ۶، ۷)

چونکہ وجود ایک وحدت ہے اور اصل ذات فانی نہیں ہے اس لئے کائینات بھی فانی نہیں ہو سکتی ۔ غالب نے یہ بات اتنی کھل کر کہیں بیان نہیں کی ہے. لیکن اپنی فارسی تصنیف « مہر نیمروز » میں اس عقیدے کا اظہار ضرور کیا ہے کہ عالم کا کوئی خارجی وجود نہیں (یعنی خدا کی ذات سے الگ عالم کا تصور محض وہم و خیال ہے « ہر چند کہیں کہ ہے، نہیں ہے») اس لئے قِدم اور حدوث، نوی اور کہنگی کا سوال پیدا نہیں ہوتا. صفات عین ذات ہیں اور پرتو آفتاب سے جدا نہیں. قیامت کے بعد نیا آدم پیدا ہوگا اور ایک آدم کے بعد دوسرا آدم ظہور کرے گا اور دنیا یونہی چلتی رہے گی. غالب کے اس شعر سے بھی اس خیال کی کسی قدر تصدیق ہوتی ہے ۔

آرائشِ جمال سے فارغ نہیں ہنوز
پیشِ نظر ہے آئینہ دائم نقاب میں (۹۹ - ۹)

یہیں سے دوسرا سوال پیدا ہوتا ہے. اگر عالم پرتو ذات ہے تو وہ چیزیں جنھیں بدی، گناہ. مصیبت، تکلیف، درد اور غم کہا جاتا ہے کہاں سے آتی ہیں. تضادات کہاں سے ابھرتے ہیں. اس کا بندھا ٹکا پرانا جواب یہ ہے کہ پرتو اصلِ ذات سے جتنا دور ہوتا جاتا ہے اتنی ہی اس میں کثافت آتی جاتی ہے. مگر اس جواب کی منطقی کمزوری یہ ہے کہ فاصلہ ذات سے الگ چیز بن

उर्दू काव्य से वर्से में मिले थे। यह कहने के बाद भी कि "शा'अिर को तसव्वुफ़ शोभा नहीं देता" ग़ालिब ने सृष्टि को समझने के लिए और धर्म के दिखावे से बचने के लिए तसव्वुफ़ के कुछ विचारों से सहायता ली और उन्हीं से अपनी स्वतंत्र और तीखी प्रकृति का प्रशिक्षण किया।

वह वहदत-ए-वुजूद (विश्वदेवतावाद, जगीश्वरवाद, यह विश्वास कि सृष्टि के अनेक रूपों में एक ही तत्त्व विद्यमान है) का माननेवाला था। उसने अपनी फ़ारसी मसनवी "अब्र-ए-गुहरबार" में विश्व को चेतना-दर्पण (आईन: -ए-आगही) कहा है जो ब्रह्म-रूप (वजहुल्लाह) के दर्शन का वातावरण है। न केवल यह कि मानव जिस दिशा में मुँह करता है उस ओर "वह ही वह" नज़र आता है बल्कि जिस मुँह को मानव चारों ओर मोड़ रहा है वह ख़ुद "उसी" का मुँह है। दूसरी जगह फ़ारसी गद्य में यह कहा है कि कण का अस्तित्व उसके अपने अहंकार (पिंदार) के अतिरिक्त कुछ नहीं, जो कुछ है परम्सत्य के सूर्य का आलोक है। दरिया हर जगह बह रहा है और उसमें तरंग, बुलबुले और भँवर उभर रहे हैं। और "हम:ऊस्त" (सब कुछ वही है) ही "हम:ऊस्त" है (ग़ज़ल ९९, शेर ६, ७; ग़ज़ल १६३ शेर ४, ५, ६, ७)।

चूँकि सृष्टि एक वहदत (एकत्व, अद्वैत) है और अस्लज़ात (ब्रह्म) नश्वर नहीं है इसलिए विश्व भी नश्वर नहीं हो सकता। ग़ालिब ने यह बात इतनी खुलकर कहीं नहीं कही है लेकिन अपनी फ़ारसी पुस्तक "मेहर-ए-नीम रोज़" में यह विश्वास प्रकट किया है कि जगत्का का कोई बाह्य अस्तित्व नहीं है (या'नी ख़ुदा की ज़ात से अलग जगत की कल्पना केवल भ्रम है "हर चंद कहें कि है, नहीं है") इसलिए अनश्वरता, नश्वरता, नवीनता और पुरातनता का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। सिफ़ात (गुण) 'अैन-ए-ज़ात (स्वयंब्रह्म) हैं और आलोक सूर्य से अलग नहीं। क़यामत (प्रलय) के बाद नया आदम (मनु) पैदा होगा और एक आदम के बाद दूसरा आदम प्रकट होगा और संसार योंही चलता रहेगा। ग़ालिब के इस शे'र से भी इस विचार की पुष्टि होती है:

आराइश-ए-जमाल से फ़ारिग़ नहीं हनोज़
पेश-ए-नज़र है आइन: दाइम निक़ाब में (९९—९)

यहीं से दूसरा प्रश्न उत्पन्न होता है। यदि विश्व ब्रह्म का प्रकाश है तो वे चीज़ें जिन्हें बदी, गुनाह, मुसीबत, तकलीफ़, दर्द और ग़म कहा जाता है कहाँ से आयी हैं, अंतर्विरोध कहाँ से उभरते हैं। इसका बँधा-टका पुराना जवाब तो यह है कि आलोक ब्रह्म से जितना दूर होता जाता है उतनी ही उसमें मलिनता (कसाफ़त) आती जाती है। किन्तु इस उत्तर की तार्किक कमज़ोरी यह है कि अन्तर ब्रह्म से अलग वस्तु बन जाता है और "हम:ऊस्त" के

جاتا ہے اور «ہمہ اوست» کے ہمہ گیر دائرے کو توڑ دیتا ہے۔

غالب نے یہ سوال اُٹھایا ضرور لیکن اس کا تشفی بخش جواب نہ دے سکا۔ خود صوفیا اور فلسفیوں سے یہ سوال نہیں سنبھل سکا تو ایک شاعر سے کیا توقع کی جاسکتی ہے۔ اپنی فارسی مثنوی «ابر گہر بار» کے مناجات والے حصے میں غالب صرف یہ کہہ سکا کہ «صفات کمال» کے ایک نقطے سے تمام متضاد چیزیں پیدا ہوتی ہیں لیکن یہ جادو بیانی جو «ہمہ اوست» کی تفصیل ہے اصل سوال کا جواب نہیں ہے۔ اس سے زیادہ شاعرانہ اور تسکین بخش جواب فارسی کے پہلے قصیدے میں ملتا ہے جس میں غالب خدا سے مخاطب ہو کر کہتا ہے کہ تو نے «وہم غیر» سے دنیا میں ہنگامہ برپا کر رکھا ہے۔ خود ہی ایک حرف کہا اور خود ہی گمان میں مبتلا ہوگیا۔ یہ خود اور غیر خود کی تقسیم ایسی ہے کہ دیکھنے والا اور دیکھا جانے والا ایک ہوتے ہوئے بھی دو معلوم ہو رہے ہیں اور ان کے درمیان پرستش کی رسم کا پردہ پڑا ہوا ہے حالانکہ وحدت میں دوئی کی سمائی نہیں ہے۔ پھر آگے چل کر وہ رازِ نہاں سے پردہ اٹھاتا ہے اور کہتا ہے کہ دکھ درد بھی وہیں سے آتے ہیں مگر اس لئے کہ راحت کی لذت بڑھادیں۔ خزاں کا جواز غالب نے «تجدید طرب» میں ڈھونڈھا ہے۔ مصائب ایک طرح کا امتحان ہیں تاکہ دوست دشمن کی نظروں سے پوشیدہ رہے اور مہمان کے راستے میں کانٹے اس لئے بچھائے گئے ہیں کہ جب خستگی کا علاج کیا جائے تو آسائش کا نیا مزہ ملے۔ گویا خود اور غیر خود کی تقسیم ایک ایسے تضاد کا باعث ہے جو زندگی کو زندگی بناتا ہے۔ یہ وحدت ہے دوئی نہیں ہے۔

لطافت بے کثافت جلوہ پیدا کر نہیں سکتی
چمن زنگار ہے آئینۂ بادِ بہاری کا (٤٨)

یہاں پہنچ کر بدی نیکی کا ایک حصہ بن جاتی ہے۔ ناقص اور کامل کا امتیاز ختم ہو جاتا ہے (٤/٤٢) مادہ اور روح، زندگی اور موت سب ایک ہوجاتے ہیں۔ مذہب اور مذہبی عقائد کی حیثیت «سرابستان» سے زیادہ نہیں رہتی۔ ترکِ رسوم اور ترکِ ملت اجزائے ایماں بن جاتے ہیں۔ (١٤:١١٢) مسرت اور غم کی تقسیم بے معنی ہو جاتی ہے، بہار و خزان ایک دوسرے کے گلے میں بانہیں ڈال لیتی ہیں۔ ایک پیمانۂ رنگ گردش میں ہے۔ بہار اس کا ایک رنگ ہے اور خزان دوسرا۔ دن رات ایک دوسرے کے پیچھے دوڑ رہے ہیں۔ یہ سب وحدت کا جوش و خروش ہے۔ ایک نقطہ ہے جو تیزی سے گردش کررہا ہے

सर्वव्यापी घेरे को तोड़ देता है।

ग़ालिब ने यह प्रश्न उठाया ज़रूर किन्तु इसका संतोषप्रद उत्तर न दे सका। स्वयं सूफ़ियों और दार्शनिकों से यह प्रश्न नहीं सँभल सका तो एक कवि से क्या आशा की जा सकती है। अपनी एक फ़ारसी मसनवी "अब्र-ए-गुहरबार" के "मुनाजात" वाले हिस्से में ग़ालिब केवल यह कह सका कि सिफ़ात-ए-कमाल (गुण) के एक विन्दु से तमाम अंतर्विरोधी वस्तुएँ पैदा होती हैं लेकिन यह वर्णन-चमत्कार जो "हमःऊस्त" का विवरण है, असली प्रश्न का उत्तर नहीं है। इससे अधिक कवितामय और संतोषप्रद उत्तर फ़ारसी के पहले क़सीदे में मिलता है जिसमें ग़ालिब ख़ुदा से संबोधन करता है कि तूने अन्य के संदेह (वहम-ए-ग़ैर) से दुनिया में हलचल मचा रखी है। ख़ुद ही एक अक्षर कहा और ख़ुद ही शंका में पड़ गया। यह ख़ुद और ग़ैर-ए-ख़ुद का विभाजन ऐसा है कि देखनेवाला और देखा जानेवाला एक होते हुए भी दो मालूम दे रहे हैं और इनके बीच में पूजा की रीति (रस्म-ए-परस्तिश) का पर्दा पड़ा हुआ है। यद्यपि अद्वैत में द्वैत की समाई नहीं है। फिर आगे चलकर वह गुप्त भेद से पर्दा उठाता है और कहता है कि दुख दर्द भी वहीं से आये हैं किन्तु इस लिए कि सुख-चैन का आनंद बढ़ा दें। हेमन्त का औचित्य ग़ालिब ने आनंद के नवीनीकरण में ढूँढा है। कठिनाइयाँ एक प्रकार की परीक्षा हैं ताकि मित्र शत्रु की दृष्टि से छिपा रहे। और अतिथि के पथ में काँटे इसलिए बिछाये गये हैं कि जब जीर्णता का इलाज किया जाय तो सुख का नया आनंद मिले मानो ख़ुद और ग़ैर-ए-ख़ुद का विभाजन एक ऐसी विपरीतता का कारण है जो जीवन को जीवन बनाती है। यह विपरीतता अद्वैत है द्वैत नहीं—

> लताफ़त बेकसाफ़त जल्वः पैदा कर नहीं सकती
> चमन जंगार है आईनः-ए-बाद-ए-बहारी का (४८)

यहाँ पहुँचकर बदी नेकी का एक हिस्सा बन जाती है। अपूर्ण और पूर्ण का भेद समाप्त हो जाता है (४२–४)। पदार्थ और आत्मा, जीवन और मृत्यु सब एक हो जाते हैं। धर्म और धार्मिक विश्वास की हैसियत "मरुस्थल" से अधिक नहीं रहती। रीति-रिवाज और सम्प्रदाय का त्याग ईमान (विश्वास) का अंग बन जाते हैं (११२–१४)। हर्ष और विषाद का विभाजन निरर्थक हो जाता है। बहार और ख़िज़ाँ एक दूसरे के गले में बाँहें डाल लेती हैं। एक ही रंग का पैमाना घूम रहा है। बहार (वसंत) इसका एक रंग है और ख़िज़ाँ (पतझड़) दूसरा। दिन रात एक दूसरे के पीछे दौड़ रहे हैं। यह सब अद्वैत का आवेश और उत्क्रोश है। एक बिंदु है जो तेजी से घूम रहा है और अपनी उड़ान के वेग से नाचता हुआ शोला बन गया है। यह अस्तित्व कष्ट और आराम की कल्पना से निस्पृह है। डूबनेवाले ने लहर का तमाँचा खाया है और प्यासे

اور اپنی سرعتِ پرواز سے ناچتا ہوا شعلہ بن گیا ہے. یہ وجود زحمت اور راحت کے تصور سے بے نیاز ہے. ڈوبنے والے نے موج کا طمانچہ کھایا اور پیاسے نے پانی پی لیا. ویسے دریا نے خود نہ کسی کو ڈبونا چاہا اور نہ پانی پلانا چاہا. وہ اپنے آپ میں محو ہے. عمل اور ردعمل اس کی موجیں ہیں جن سے امروز فردا اور فردا امروز بن رہا ہے.

ہے طلسمِ دہر میں صد حشرِ پاداشِ عمل
آگہی غافل، کہ یک امروز بے فردا نہیں (ضمیمہ ۲۵)

وحدتِ وجود کے ڈانڈے کہیں تو ویدانت سے جا ملتے ہیں اور کہیں نو فلاطونیت سے. یہ فلسفہ ذاتِ مطلق، نفیِ صفات اور ترکِ دنیا سے لے کر تشبیہہ سے آراستہ اور صفات سے سجی ہوئی ذات کے تصور تک پھیلا ہوا ہے. اور جب اس میں ایرانی اور تاتاری پیگن ازم (کفر) کی آمیزش ہوجاتی ہے تو لذت طلبی کا پہلو بھی پیدا ہوجاتا ہے. اب یہ اپنی اپنی ہمت پر منحصر ہے کہ آدمی اس منزل پر پہنچ کر دنیا کو تج دے یا شوق کا ہاتھ بڑھا کر اس رنگ و نور اور صوت و آہنگ سے بھرے ہوئے ناچتے کھلونے کو اٹھا لے.

غالب نے یقیناً اس عقیدے سے ایک بڑا رجائی نقطۂ نگاہ اختیار کیا ہے جو اس کی پوری شاعری میں خونِ بہار کی طرح دوڑ رہا ہے. رنج و غم «تجدید طرب» کی بنیاد ہیں اس لئے اُن سے گریز کرنا موت اور کھیلنا زندگی کی دلیل ہے. خود موت زندگی کا مزہ بڑھا دیتی ہے اور نشاط کار کا حوصلہ بخشتی ہے (۲۲) دہر کی سختیاں اس لئے ہیں کہ انسانیت کی تلوار سان پر چڑھ جائے اور جوھر چمک اٹھیں. غالب نے اپنے ایک اور فارسی قصیدے میں کہا ہے کہ میرا جنون مجھے بیکار نہیں بیٹھنے دیتا. آگ جتنی تیز ہے اتنی ہی میں اور اُسے ہوا دے رہا ہوں. موت سے لڑتا ہوں اور ننگی تلواروں پر اپنے جسم کو پھینکتا ہوں. شمشیر و خنجر سے کھیلتا ہوں اور ساطور و پیکاں کو بوسے دیتا ہوں.

یہی وجہ ہے کہ غالب کے غم اتنے دلاویز ہیں. ان میں جو بھرپور نشاط کی کیفیت ہے وہ اردو کے کسی اور شاعر کے یہاں نہیں ملے گی. صرف اقبال اس میں غالب کے قریب آتا ہے لیکن وہاں بھی رجائیت کا فکری پہلو نشاط ہستی کی جذباتی کیفیت پر حاوی ہے. غالب کی شاعری میں غم اور نشاط کو الگ الگ کرنا تقریباً ناممکن ہے اس لئے اس کو صرف غم یا صرف نشاط کا شاعر سمجھنا غلطی ہے. وہ دراصل نشاطِ غم کا شاعر ہے. یعنی وہ بلاؤں سے دست و گریباں ہو کر سامان طرب حاصل کرتا ہے. جیسے شراب کی تلخی گوارہ کر کے

ने पानी पी लिया। वैसे दरिया ने स्वयं न किसी को डुबोना चाहा और न पानी पिलाना चाहा। वह अपने आप में लीन है। क्रिया और प्रतिक्रिया उसकी तरंगें हैं जिनसे आज कल और कल आज बन रहा है—

है तिलिस्म-ए-दहर में सद हश्र-ए-पादाश-ए-'अमल
आगही ग़ाफ़िल, कि यक इमरोज़ बे फ़र्दा नहीं (ज़मीम: २५)

वहदत-ए-वुजूद (विश्वदेवतावाद) की सीमाएँ कहीं तो वेदांत से जा मिलती हैं और कहीं नौफ़लातूनियत (NEO PLATONISM) से। यह दर्शन ज़ात-ए-मुत्लक़ (ब्रह्म), नफ़ि-ए-सिफ़ात (निर्गुणत्व), और संसारत्याग से लेकर उपमाओं से आरोपित और गुणों से सजी हुई ज़ात (ईश्वर) के विचार तक फैला हुआ है, और जब इसमें ईरानी और तातारी पैगेनिज़्म (कुफ़्र) का सम्मिश्रण हो जाता है तो आनन्दप्राप्ति का पहलू भी पैदा हो जाता है। और अब यह अपने अपने साहस पर निर्भर है कि मनुष्य इस मंज़िल पर पहुँचकर संसार को तज दे या शौक़ का हाथ बढ़ाकर इस रंग और प्रकाश, ध्वनि और संगीत से भरे हुए नाचते खिलौने को उठाले।

ग़ालिब ने निश्चय ही इस विश्वास से एक बड़ा आशावादी दृष्टिकोण अपनाया जो उसके सारे काव्य में ख़ून-ए-बहार की तरह दौड़ रहा है। दुख और संताप आनंद के नवीनीकरण की बुनियादें हैं। इसलिए इनसे विमुख रहना मृत्यु, और खेलना जीवन की दलील है। स्वयं मृत्यु जीवन का आनंद बढ़ा देती है और कार्य-आनंद का साहस प्रदान करती है (२२)। संसार की कठिनाइयाँ इसलिए हैं कि मानवता की तलवार सान पर चढ़ जाय और जौहर चमक उठे। ग़ालिब ने अपने एक और फ़ारसी क़सीदे में कहा है कि मेरा जुनून (उन्माद) मुझे बेकार नहीं बैठने देता, आग जितनी तेज़ है उतनी ही मैं और उसे हवा दे रहा हूँ, मौत से लड़ता हूँ और नंगी तलवारों पर अपने शरीर को फेंकता हूँ, तलवार और कटार से खेलता हूँ और तीरों को चूमता हूँ।

यही कारण है कि ग़ालिब के ग़म इतने आकर्षक हैं। उनमें जो भरपूर हर्ष की कैफ़ियत है वह उर्दू के किसी कवि के यहाँ नहीं मिलेगी। केवल इक़बाल उसमें ग़ालिब के निकट आता है। किन्तु वहाँ भी आशावाद का चिंतन-पक्ष अस्तित्व के हर्ष की भावुक कैफ़ियत पर हावी है। ग़ालिब की शा'अिरी में ग़म और हर्ष को अलग अलग करना लगभग असंभव है। इसलिए उसे केवल ग़म या केवल हर्ष का कवि समझना भूल है। वह वास्तव में ग़म की ख़ुशी का शा'अिर है। यानी वह मुसीबतों से लड़कर हर्ष का सामान प्राप्त करता है जैसे शराब की कड़वाहट सहन करके मदिरता की मंज़िल प्राप्त की जाती है, फिर वह कड़वाहट स्वयं मदिर बन जाती है।

इसके बाद यह समझने में कोई कठिनाई नहीं रह जाती कि ग़ालिब के

سرور کی منزل حاصل کی جاتی ہے۔ پھر وہ تلخی خود سرور بن جاتی ہے۔
اس کے بعد یہ سمجھنے میں کوئی دشواری نہیں رہ جاتی کہ غالب کی کائینات میں انسان کی کیا جگہ ہے۔ وہ بھی اور مخلوق کی طرح پرتوِ ذات ہے۔ لیکن انسان اور کائینات کی باقی چیزوں میں فرق ہے انسان کے پاس آرزو ہے، جذبہ ہے، شوق ہے، تڑپ ہے۔ اس کے ضمیر میں ایک ہنگامہ ہے جو بحروجود میں پانی کے نم کی طرح ہے اور ریشم کے لچھے میں تار کی طرح اور سب سے بڑی بات یہ کہ اس کے پاس عقل ہے وہ اپنے ہاتھوں اور دل کے تعاون سے اپنا کردار حاصل کرتا ہے اور عقل وجان کی آمیزش سے گفتار (ابر گہربار) اسکی عقل محدود سہی لیکن لامحدود عقل کا حصہ ہے۔ غالب نے «مغنی نامہ» میں اس کو دنیا کی آراستہ کرنے والی قوت کہا ہے جو روحانیوں کی صبح کا نور اور یونانیوں کے شبستان کا چراغ ہے۔ دنیا کی ساری رونق اس انسان کی وجہ سے ہے۔

زما گرم است ایں ہنگامہ بنگر شورِ ہستی را
قیامت می دمد از پردۂ خاکے کہ انسان شد

غالب کی نظروں میں انسان کی عظمت اتنی زیادہ ہے کہ وہ اسے کائینات کا محور سمجھتا ہے اور دنیا کی تخلیق کا باعث قرار دیتا ہے۔

ز آفرینش عالم غرض جز آدم نیست
بگردِ نقطۂ ما دور ہفت پرکار است

پردۂ خاک سے اٹھنے والے اس قیامت کے فتنے کی ساری کاوش یہ ہے کہ اس کائینات کو جس میں وہ چاروں طرف سے گھرا ہوا ہے دیکھے اور سمجھے۔ ہروقت اور ہر رنگ میں گرم تماشا رہے اور اپنی چشم تنگ کو نظاروں کی کثرت سے وا کرتا رہے (۱۱۸) اپنے گردو پیش بکھرے ہوئے جلووں کے حجاب اٹھائے اور ان کے معنی تک پہنچنے کے لئے دل و جگر کا خون کرڈالے اور اگر سرو برگ ادراک معنیٰ نہ ممکن ہو تو بھی تماشائے نیرنگ صورت میں محو ہوجائے (۵۲-٤) ممکن ہے کہ اس مشتاقِ جمال اور تشنۂ دید کے لئے بہار کو فرصت نہ ہو اور نگار کو الفت نہ ہو۔ نہ سہی۔ بہار پھر بہار ہے۔ نگار پھر نگار ہے۔ (۲۱۰-۹، ۱۰) آرزو کا آتشکدہ تو بہرحال روشن رکھا جاسکتا ہے۔ کیونکہ جب تک تخیل اور تصور اور تمنا کی دولت پاس ہے اس وقت تک

ہرچہ در مبداء فیاض بود آنِ من ست
گل جدا ناشدہ از شاخ بدامانِ من ست

اس لئے غالب کی شاعری میں ترک دنیا، ترک لذت اور ترک طلب

विश्व में मनुष्य का क्या स्थान है। वह भी अन्य सचराचर की भाँति ब्रह्म का प्रकाश है। किन्तु मानव तथा अन्य सचराचर में एक अंतर है। और यह बहुत बड़ा अंतर है। मानव के पास कामना है, भावना है, शौक़ है, तड़प है। उसके अंतःकरण में एक हलचल है जो अस्तित्व-सागर में जल की आर्द्रता की तरह और रेशम के लच्छे में तार की तरह है (फ़ारसी मसनवी)। और सबसे बड़ी बात यह है कि उसके पास बुद्धि है। वह अपने हाथों और मन के सहयोग से अपना चरित्र और आचरण प्राप्त करता है, और बुद्धि और प्राण के मिलन से वाक्शक्ति (अब्र-ए-गुहरबार)। उसकी बुद्धि सीमित सही किन्तु असीम बुद्धि का एक अंश है। ग़ालिब ने "मुग़न्नीनामे" में इस बुद्धि को विश्व की श्रृंगारकारिणी शक्ति कहा है जो रूहानियों (आध्यात्मवादियों) की उषा का प्रकाश और यूनानियों के विज्ञान की रातों का दीप है। संसार की सारी शोभा इसी मानव के कारण है—

जिमा गर्मस्त इन हंगाम: बिनगर शोर-ए-हस्ती रा
क़यामत मी दमद अज्ज पर्द:-ए-ख़ाके कि इन्साँ शुद

(दुनिया की यह हलचल मेरे कारण है और मिट्टी के उस पर्दे में प्रलय मचल रहा है जो मानव बन गया है)

ग़ालिब की दृष्टि में मानव की महानता इतनी विशद है कि वह उसे सृष्टि का अक्ष (धुरा) समझता है और विश्व की सृष्टि का कारण ठहराता है।

जि आफ़रीनिश-ए-'आलम ग़रज़ जुज़ आदम नीस्त
बगिर्द-ए-नुक़्त:-ए-मा दौर-ए-हफ़्त परकारस्त

(विश्व की सृष्टि का उद्देश्य मानव के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मैं केन्द्र हूँ और मेरे चारों ओर सात वृत्त घूम रहे हैं)

मिट्टी के पर्दे से उठनेवाले इस क़यामत के फ़ितने का सारा प्रयास यह है कि इस सृष्टि को जिसमें वह चारों ओर से घिरा हुआ है देखे और समझे। हर समय और हर रंग में दुनिया के तमाशे में तन्मय और विभोर रहे और अपनी संकीर्ण आँखों को उन्मीलित करता रहे (११८)। अपने चारों ओर बिखरी छवि के पर्दे उठाये और उनके अर्थ तक पहुँचने के लिए दिल-ओ-जिगर का ख़ून कर डाले और यदि तत्त्व को समझने का सामान न हो तो भी रूप की जादूगरी के तमाशे में खोजाय (९२—४)। संभव है कि इस सौन्दर्योपासक और दर्शनाभिलाषी के लिए बहार को अवकाश न हो और निगार (सुन्दरी) को प्रेम न हो। न सही, बहार फिर बहार है, निगार फिर निगार है। चमन (उद्यान) की शीतलता और सुरभित समीर से और मा'शूक़ की मस्त अदा से तो इन्कार संभव नहीं है (२१०—६,१०)। कामना की अग्निशाला तो बहरहाल प्रज्वलित रखी जासकती है क्योंकि जबतक कल्पना,

کے مضامین شاذ و نادر ہی ملیں گے جو روایتی طور سے چلے آئے ہیں لیکن غالب کے اپنے مزاج کا حصہ نہیں ہیں،

غالب کا ذوق اپنی لذت کوشی اور لذت اندوزی میں حد و انتہا کا قائل ہی نہیں ہے، وہ حسن کو اس طرح جذب کرلینا چاہتا ہے کہ نگاہوں کو بھی اپنے اور معشوق کے درمیان حائل سمجھتا ہے (۴۲-۵). اس عالم میں ظاہر ہے کہ نگاہ کی کامیابی بھی اُسے سکون نہیں بخش سکتی اور وہ اپنے نامراد دل کی تسلی کے لئے تڑپتا رہ جاتا ہے (۱۵۳-۶) جب پینے پر آتا ہے تو خم کو ساغر بنا لینا چاہتا ہے (۱۳۴-۲) اور جب گناہوں پر اُترتا ہے تو دریائے معاصی تنک آبی سے خشک ہو جاتا ہے (۳۹-۶) غالب کی لذت طلبی کی نہایت خوبصورت مثال اردو کی مشہور غزل «مدت ہوئی یار کو مہماں کئے ہوئے» (۲۳۴) اور فارسی کی غزل «بیا کہ قاعدۂ آسماں بگردانیم» میں ملتی ہے جہاں وہ رطلِ گراں کی گردش سے قضا و قدر کو بھی بدل دینا چاہتا ہے، وہ جرأت رندانہ کے ساتھ شوق فضول کو بھی ضروری سمجھتا ہے (۱۸۹-۲) اور ایک نہایت لطیف «ہوسناکی» کی منزل میں پہنچ جاتا ہے، شاید یہ نکتہ جوانی کی بے راہ روی نے سمجھا دیا تھا کہ آوارگی میں رسوائی سہی لیکن طبیعت سان پر چڑھ جاتی ہے (۲۱۱-۳)

غالب کی «آوارگی» اور «ہوسناکی» پر شاہد اس کے دلچسپ پیمانے ہیں گریے کا پیمانہ حسرت دل اور حسرت کا پیمانہ ناکردہ گناہ (۲۳۱-۱۰) ماندگی کا پیمانہ پورے بیابان کی وسعت بھی نہیں' (۱۱) کیونکہ جب بیابان کے بیابان تھکن سے بھر جاتے ہیں تو رفتار شوق کی لہروں پر نقش قدم حبابوں کی طرح بہنے لگتے ہیں اور اس کی تسکین کے لئے دوجہان بھی کافی نہیں ہیں. (۱۰۳) سارا دشت امکاں تمنا کا صرف ایک قدم ہے (ضمیمہ ۱۲) غالب کی شاعری دوسرے قدم کی جستجو جو ایک مسلسل اضطراب، تڑپ، جلن' کسک اور حرکت میں تبدیل ہو گئی ہے. «شوق عناں گسیختہ دریا کہیں جسے» (۲۳۰-۵)

«شوق» غالب کا نہایت محبوب لفظ ہے اور اس خاندان کے دوسرے الفاظ تمنا، آرزو اور خواہش سے اس کی شاعری چھلک رہی ہے. جنون جو شوق کی انتہا ہے اس کو ہمیشہ اکساتا رہتا ہے. اس کو معلوم ہے کہ شوق انتہائی عاجزی میں بھی انسان کو سر بلند کردیتا ہے اور ذرے کو صحرا کی وسعت اور قطرے کو دریا کا تلاطم عطا کرتا ہے (۴۳-۳) اس لئے شوق اور طلب کی راہ میں وہ ایک لمحے کے لئے بھی آسودہ نہیں ہونا چاہتا. منزل سے کہیں زیادہ لذت منزل کی جستجو میں ہے. «جب میں بہشت کا تصور

अनुध्यान और अभिलाषा की संपत्ति पास है उस समय तक—

हर चे: दर मक़्द:-ए-फ़ैयाज बुवद आन-ए-मनस्त
गुल जुदा नाशुद: अज शाख़ बदामान-ए-मनस्त

(जो कुछ उदार सृष्टि के पास है मेरा है। डाल से न टूटा हुआ फूल मेरी गोद में है) इसलिए ग़ालिब की शा'अिरी में संसार, आनंद और इच्छा के त्याग के विषय कदाचित ही मिलेंगे जो परंपरागत रूप से चले आये हैं किन्तु ग़ालिब के अपने स्वभाव का अंश नहीं हैं।

ग़ालिब की अभिरुचि रस और आनंद की प्राप्ति में सीमाओं का बंधन नहीं मानती। वह सौन्दर्य को इस प्रकार आत्मसात कर लेना चाहता है कि निगाहों को भी अपने और मा'शूक़ के बीच बाधा समझता है (४२–५) इस स्थिति में स्पष्ट ही निगाह की सफलता भी उसे शांति प्रदान नहीं कर सकती और वह अपने अतृप्त हृदय की शांति के लिए तड़पता रह जाता है (१५३–६)। जब पीने पर आता है तो घड़े को प्याला बना लेना चाहता है (१३४–२) और जब गुनाहों पर आता है तो गुनाहों का सागर पानी की कमी से सूख जाता है (३९–६)। ग़ालिब की आनंद-तृष्णा का अति सुन्दर उदाहरण उर्दू की प्रसिद्ध ग़ज़ल "मुद्दत हुई है यार को मेहमाँ किये हुए" (२३४) और फ़ारसी की ग़ज़ल में मिलता है जहाँ वह अमूल्य मधुपात्र की गर्दिश से मृत्यु और मान्यताओं को भी बदल देना चाहता है। वह स्वच्छंद साहस के साथ अनुद्देश्य लालसा को भी आवश्यक समझता है (१८९–२) और एक अत्यंत मृदुल "लोलुपता" की मंजिल में पहुँच जाता है। शायद यह बात जवानी की बेराहरवी ने सिखलादी थी कि आवारगी में अपमान तो होता है लेकिन तबी'अत सान पर चढ़ जाती है (२११–३)।

ग़ालिब की आवारगी और लोलुपता के गवाह उसके दिलचस्प पैमाने (मापदण्ड) हैं। रोने का पैमाना वह गुनाह जो किये नहीं गये (२३१–१०) थकन का पैमाना पूरे बयाबान का विस्तार भी नहीं (११) क्योंकि जब बयाबान के बयाबान थकन से भर जाते हैं तो अभिरुचि की गति की लहरों पर पदचिन्ह बुलबुलों की तरह बहने लगते हैं और उसकी शान्ति के लिये दोजहान भी काफ़ी नहीं है (१०३)। सारा सम्भावनाजगत कामना का केवल एक क़दम मालूम होता है (ज़मीम: १२)। ग़ालिब का काव्य दूसरे क़दम की खोज है और यह खोज एक अविराम दुख, तड़प, जलन, कसक और गति में परिवर्तित हो गई है। "शौक़-ए-अिनाँ गुसेख़्त: दरिया कहें जिसे" (२३०–५)

"शौक़" ग़ालिब का अत्यंत प्रिय शब्द है और इस परिवार के अन्य शब्द तमन्ना, आरज़ू और ख़्वाहिश से उसकी कविता छलक रही है। जुनून

کرتا ہوں اور سوچتا ہوں کہ اگر مغفرت ہوگئی اور ایک قصر ملا اور ایک حور ملی، اقامت جاودانی ہے اور اسی ایک نیک بخت کے ساتھ زندگانی ہے، اس تصور سے جی گھبراتا ہے اور کلیجہ منہ کو آتا ہے۔ ہے ہے وہ حور اجیرن ہو جائے گی۔ طبیعت کیوں نہ گھبرائے گی۔ وہی زمردیں کاخ اور وہی طوبیٰ کی ایک شاخ» (ایک خط) اور غالب کے استاد نے ابتدائے جوانی میں یہ نکتہ سکھادیا تھا کہ شکر کا مزا چکھ لینا مگر مکھی بن کر شہد پر کبھی نہ بیٹھنا نہیں تو طاقت پرواز باقی نہیں رہے گی۔ اسی لئے غالب منزل کا نہیں راہ منزل کا آسودگی کا نہیں لذت تشنگی کا شاعر ہے۔

رشک بر تشنۂ تنہا روِ وادی دارم
نہ بر آسودہ دلانِ حرم و زمزمِ شان

نیش آرزو کی لذت ہی رہگذاروں کی لذت سے آشنا کرتی ہے(۱۷-۳) اور اس چیز نے غالب کی شاعری کو حرکت کے تصور سے سرشار کردیا ہے جس کا اظہار موج، طوفان، تلاطم، شعلہ، سیماب، برق اور پرواز کے الفاظ کی بہتات سے ہوتا ہے، یہ تصور رچ بس کر غالب کے جمالیاتی ذوق کا اہم جزو بن گیا ہے۔ چنانچہ غالب کا معشوق بھی برق و شرر ہے اور غالب اس کی رفتار کا پرستار۔ (۶۱-۵) (۱۵۹-۵)

اسی کے ساتھ غالب کی متحرک اور رقصاں امیجری (IMAGERY) ہے جو تصویرگری کی معراج ہے۔ جب وہ اپنی اچھوتی تشبیہوں اور نادر استعاروں کا جادو جگاتا ہے تو ایک ایک حرف نرت کرنے لگتا ہے، ٹھہرے ہوئے نقوش سیال ہوجاتے ہیں، مجرد خیال ایک پیکر رنگ و بو بن کر سامنے آجاتا ہے، دشت گرمیٔ رفتار سے جلنے لگتے ہیں (۷۰-۲) بیاباں رہرو کے قدموں کے آگے آگے بھاگنے لگتے ہیں (۱۹۱) صحرا کے جسم میں راستے نبضوں کی طرح دھڑکنے لگتے ہیں (فارسی قصیدہ ۲۶) بے جان پتھروں کے سینے میں ناتراشیدہ بت ناچنے لگتے ہیں (فارسی غزل) آئینوں کے جوھروں میں پلکیں لرزنے لگتی ہیں (۱۸-٤) شراب کے پیالوں کو اُٹھائے ہوئے ہاتھوں کی لکیروں میں خون دوڑنے لگتا ہے (۱۱۲-۱۳) معشوق کی گفتار سے دیواروں میں جان پڑجاتی ہے (۱۷٤) اور قد کی دلکشی دیکھ کر سرو و صنوبر سائے کی طرح ساتھ ساتھ گھومنے لگتے ہیں (۱۷٤-۲) پھولوں کی ڈالیاں انگڑائی لے کر بلند ہونے لگتی ہیں اور پھول خود بخود گوشۂ دستار کے پاس پھونچ جاتے ہیں (۷۳-٦) غرض ایک صاعقۂ و شعلہ و سیماب کا عالم ہوتا ہے(۱٦٤-۳)

(उन्माद) जो शौक़ की अंतिम मंजिल है उसको सदा उकसाता रहता है। उसे ज्ञात है कि शौक़ अत्यंत विनम्रता में भी मानव को गर्वोन्नत कर देता है और कण को मरुस्थल का विस्तार और बूँद को सागर का आवेग प्रदान करता है (४३—३)। इसलिए शौक़ और तलब (तृष्णा) की राह में वह एक क्षण के लिए भी निश्चित नहीं होना चाहता। मंजिल से कहीं अधिक रस मंजिल की जुस्तुजू (तलाश) में है। "जब मैं बिहिश्त (स्वर्ग) का तसव्वुर (कल्पना) करता हूँ और सोचता हूँ कि अगर मग़फ़िरत (मुक्ति) होगई और एक क़स्र (प्रासाद) मिला और एक हूर (अप्सरा) मिली अक़ामत (आवास) जाविदाँ (शाश्वत) है और इस एक नेकबख़्त के साथ जिन्दगानी है इस तसव्वुर से जी घबराता है और कलेजा मुँह को आता है। हय, हय वह हूर अजीरन होजायगी। तबीयत क्यूँ न घबरायगी वही ज़मुर्रदीं काख़ (पन्ने का घर) और वही तूबा (कल्पवृक्ष) की एक शाख़" । (एक पत्र से उद्धृत)। और ग़ालिब के उस्ताद ने युवावस्था के आरंभ में यह नुक़्ता सिखा दिया था कि शकर का मजा चख लेना मगर मक्खी बन कर शहद पर कभी न बैठना नहीं तो उड़ने की शक्ति बाक़ी नहीं रहेगी। इसीलिए ग़ालिब मंजिल का नहीं मंजिल के पथ का, तृप्ति का नहीं तृष्णा के रस का कवि है। प्यास बुझा लेना उसका उद्देश्य नहीं प्यास को बढ़ाना उसका आदर्श है।

रश्क बर तश्न:-ए-तन्हा रव-ए-वादी दारम्
न बर आसूद: दिलान-ए-हरम-ओ-जमजम-ए-शाँ

(ईर्ष्या मार्ग में अकेले भटकने वाले प्यासे से होती है न कि हरम-ओ-जमजम पर पहुँच कर तृप्त होजाने वालों से)। आरजू के डंक का आनंद रहगुजारों के आनंद से परिचित कराता है और इस चीज ने ग़ालिब की कविता को गति की भावना से भरपूर कर दिया है जिसका प्रकटीकरण मौज (तरंग) तूफ़ान, तलातुम (आवेग), शोला (ज्वाला), सीमाब (पारा), बर्क़ (बिजली) और परवाज (उड़ान) के शब्दों की बहुतायत से होता है। यह भाव रच-बस कर ग़ालिब के सौन्दर्यबोध का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। अतःएव ग़ालिब का मा'शूक़ भी बर्क़-ओ-शरर (बिजली और आग) है और ग़ालिब उसकी गति का उपासक (६१—९ व १९९—९)।

इसके साथ ग़ालिब की गतिवान और नर्त्तित इमेजरी [IMAGERY] है जो चित्रांकन की पराकाष्ठा है। जब वह अपनी अछूती उपमाओं और अनुपम रूपकों का जादू जगाता है तो हर अक्षर नृत्य करने लगता है। स्थिर चित्र तरल बन जाते हैं। एकाकी विचार रंग और सुगंध का एक आकार बनकर सामने आता है। अरण्य गति के उत्ताप से जलने लगते हैं (७०—२), बयाबान पथिक के क़दमों के आगे-आगे भागने लगते हैं (१६१),

اور عمر اضطراب کی راہوں پر چلتی ہے اور ماہ و سال کی پیمائش آفتاب کی گردش کے بجائے بجلیوں کی چمک اور تڑپ سے کی جاتی ہے۔ (۱۵۳)

غالب کے یہاں تخیل کے چھلاوے بھی اسی حقیقت کی غمازی کرتے ہیں۔ تخئیلی جست کہنے کے لئے ایک فنی خصوصیت ہے لیکن حقیقتاً یہ اضطراب باطن کی ظاہری صورت ہے۔ چونکہ وہ بہت سی باتیں ان کہی چھوڑ دیتا ہے اس لئے شعر مشکل ضرور ہوجاتا ہے لیکن اس سے شعر کا حسن بڑھ جاتا ہے اور معنی کا دامن زیادہ وسعت اختیار کرلیتا ہے:

تو اور آرائش خم کاکل

میں اور اندیشہ ہائے دور و دراز (۷۲-۲)

یہ نشاط انگیزی اور لذت اندوزی اور غم نوشی اور آرزو مندی جو سمٹ کر جنبش و حرکت کے تصور اور تخیل کے چھلاووں میں تبدیل ہوگئی ہے اتفاقی چیز نہیں ہے۔ یقیناً اس میں غالب کی اُفتادِ طبع اور صوفیانہ شاعری کی ان روایات کو بڑا دخل ہے جو صحت مند ہیں۔ لیکن بات صرف اتنی نہیں ہے۔ غالب کا نفسیاتی تجزیہ بھی یہ تقاضا کرتا ہے کہ ماحول کے اثرات کو نظر انداز نہ کیا جائے۔ دنیا کو «آئینۂ آگہی» کہنے والا اور اس کے تماشے پر زور دینے والا، شاعری کو قافیہ پیمائی کے بجائے معنی آفرینی کا درجہ دینے اور قلم کی جنبش پر عقل کی پابندیاں عائد کرنے والا (مغنی نامہ) شاعر اپنے گرد و پیش سے بے خبر رہ کر صرف اپنے خونِ دل کے اُچھالنے پر اکتفا نہیں کرسکتا تھا:

چاک مت کر جیب بے ایام گل

کچھ اُدھر کا بھی اشارہ چاہئے (۱۹۰-٤)

جب وہ کہتا ہے کہ انجمنِ آرزو سے باہر سانس لینا بھی حرام ہے (۵۷) تو یہ محض چند سکوں، چند پیالوں اور چند بوسوں کی آرزو نہیں ہے بلکہ ایک ناآفریدہ گلشن کی تمنا ہے جس کے نشاطِ تصور نے نغمہ سنجی پر مجبور کردیا ہے (ضمیمہ ۲۱) اور اس ناآفریدہ گلشن کو صرف ذاتی خواہشات کا گلشن سمجھ لینا غالب کی توہین ہے۔ اس میں سماجی امکانات کا تصور اس لئے شامل ہے کہ غالب کے پاس سماجی ارتقا کا ایک معقول تصور تھا اور حسرتِ تعمیر اس کے سینے کا سب سے بڑا درد (۱۳٦) غزل کے کسی شعر کے متعلق یہ کہنا کہ اس کا اصل محرک کیا تھا مشکل ہے کیوں کہ اس پر استعاروں کے حجاب پڑے ہوئے ہیں (٦۰-٦، ۷) لیکن غالب نے اپنے خطوط میں غدر سنہ ۱۸۵۷ء کی تباہی کے بعد دہلی کے جو دلدوز مرثیے لکھے

बेजान पत्थरों के सीने में अनगढ़ी मूर्तियाँ नृत्य करने लगती हैं (फ़ारसी ग़ज़ल) आइनों के जौहर में पलकें विकंपित हो उठती हैं (१८—४), मदिरा-पात्रों के हाथों की रेखाओं में रक्त दौड़ने लगता है (११२—१३), मा'शूक़ के वार्त्तालाप से दीवारों में जान पड़ जाती है (१७४) और क़द की मोहकता देखकर सर्व-ओ-सनोवर छाया की भाँति साथ-साथ घूमने लगते हैं (१७४—२) फूलों की डालियाँ अँगड़ाई लेकर उन्मुख होने लगती हैं और फूल स्वयमेव गोशः-ए-दस्तार के पास पहुँच जाते हैं (७३—६) बस एक बिजली और आग और पारे की सी हालत होती है (१६४—३) और उम्र व्याकुलता की राहों पर चलती है और माह व वर्ष की माप सूर्य की गर्दिश के बजाय बिजलियों की चमक और तड़प से की जाती है (१९३)। ग़ालिब के यहाँ कल्पना के छलावे भी इसी यथार्थ की चुग़ली खा रहे हैं। कल्पना की छलाँग कहने के लिये एक कलात्मक विशेषता है किन्तु वास्तव में यह छिपी हुई व्याकुलता का प्रकट रूप है। चूँ कि वह बहुत सी बातें अनकही छोड़ देता है इसलिए शे'र दुरूह अवश्य हो जाता है लेकिन इससे शे'र का सौन्दर्य बढ़ जाता है और अर्थ का अँचल अधिक विस्तार धारण कर लेता है —

तू और आराइश-ए-ख़म-ए-काकुल
मैं और अंदेशःहा-ए-दूर-ओ-दराज़ (७२—२)

यह हर्ष और आनंद बटोरने, और दुख झेलने और कामना की कैफ़ियतें जो सिमटकर कमान और गति की कल्पना और विचारों के छलावों में परिणत हो गई है, आकस्मिक चीज नहीं है। निश्चय ही इसमें ग़ालिब के स्वभाव के तीखेपन और सूफ़ियाना शा'अिरी की उन परम्पराओं का बड़ा हाथ है जो स्वस्थ हैं। लेकिन बात केवल इतनी ही नहीं है। ग़ालिब का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी यह तक़ाज़ा करता है कि वातावरण के प्रभावों से दृष्टिविमुख न हुआ जाय। दुनिया को "चेतना दर्पण" कहने वाला और उसके तमाशे पर जोर देने वाला शा'अिरी को क़ाफ़िय: पैमाई (तुकबन्दी) के बजाय अर्थपूर्णता का दर्जा देनेवाला और लेखनी के कम्पन पर बुद्धि के बन्धन लगाने वाला (मुग़न्नी नामः) शा'अिर अपने वातावरण से अनभिज्ञ रह कर केवल अपने ख़ून-ए-दिल के उछालने पर सन्तुष्ट नहीं होसकता था—

चाक मत कर जैब बे अय्याम-ए-गुल
कुछ उधर का भी इशारा चाहिये [१९०—४]

जब वह कहता है कि अंजुमन-ए-आर्ज़ू (कामना की महाफ़िल) से बाहर साँस लेना भी हराम है (५७) तो यह केवल चन्द सिक्कों, चन्द प्यालों और चन्द चुम्बनों की आरज़ू नहीं है बल्कि एक अरचित-उद्यान की कामना है जिसकी कल्पना के आनन्द ने गीत छेड़ने पर मजबूर कर दिया है

ہیں اُنہیں میں ایک جگہ یہ حسرتِ تعمیر کا شعر بھی لکھا ہوا نظر آتا ہے :
« دلی کا حال تو یہ ہے :

گھر میں تھا کیا کہ ترا غم اُسے غارت کرتا
وہ جو رکھتے تھے ہم اک حسرتِ تعمیر سو ہے»

ان چھ لفظوں اور دو مصرعوں کے پیچھے غالب کے خیالات کی ایک دنیا آباد ہے جو غالب کے خطوط میں دیکھی جاسکتی ہے ۔ سنہ ۱۸۵۷ء سے بہت پہلے غالب نے یہ اندازہ کر لیا تھا کہ مغل تہذیب اور سماج کا چراغ اب ہمیشہ کے لئے گل ہونے والا ہے ۔ حالانکہ اس کی قدیم قدریں غالب کو بہت عزیز تھیں لیکن اس کو یہ بھی علم تھا کہ اب عمارت بے بنیاد ہوچکی ہے اور جڑیں کھوکھلی ہیں ۔ ہوا کا کوئی بھی جھونکا اسے گرا سکتا ہے ۔ غالب کے ذاتی حالات بھی اس سے ملتے جلتے تھے ۔ جو سوگ گھر میں تھا وہی آگرہ اور دہلی پر طاری تھا اور دونوں نے مل کر غالب کو ابتدائے جوانی ہی سے اُداس کر دیا تھا ۔

لیکن اسی کے ساتھ غالب نے اس نئی دنیا کی بھی جھلک دیکھ لی تھی جو سائینس اور صنعت کی ترقی کے ساتھ آرہی تھی وہ انگریزی سرمایہ داری کی استحصالی طاقت کا اندازہ نہ کرسکا (اور اگر کیا ہو تو اس کا ثبوت نہیں ملتا) لیکن انگریزوں کی لائی ہوئی سائینس اور صنعت نے اُسے اتنا متاثر کیا کہ جب غدر سے کئی سال پہلے سر سید احمد خاں نے ابوالفضل کی آئین اکبری کی تصحیح کی اور غالب سے اس پر تقریظ لکھنے کی خواہش ظاہر کی تو غالب نے غزل کے استعاروں کے سارے حجابات بالائے طاق رکھ کر صاف صاف لفظوں میں کہدیا کہ آنکھیں کھول کر صاحبان انگلستان کو دیکھو کہ یہ اپنی ہنر مندی میں اگلوں سے آگے بڑھ گئے ہیں ۔ انہوں نے ہوا اور موج کو بیکار کر کے آگ اور دھوئیں کی طاقت سے اپنی کشتیاں سمندروں میں تیرا دی ہیں ۔ یہ بغیر مضراب کے نغمے پیدا کر رہے ہیں اور ان کے جادو سے الفاظ چڑیوں کی طرح اُڑتے ہیں ۔ ہوا میں آگ لگ جاتی ہے اور بغیر چراغ کے شہر روشن ہوجاتے ہیں اس آئین کے سامنے باقی سارے آئین فرسودہ ہوچکے ہیں ۔ جب موتیوں کا خزانہ سامنے ہو تو پرانے کھلیانوں سے خوشہ چینی کی کیا ضرورت ہے ۔ یہ کہنے کے بعد غالب نے جو نتیجہ نکالا ہے وہ اہم ہے آئین اکبری کے اچھے ہونے میں کیا شبہ ہے لیکن مبداء فیاض کو بخیل نہیں سمجھنا چاہئے کیوں کہ خوبی کا کوئی انت نہیں ہے ۔ خوب سے خوبتر کا سلسلہ جاری رہتا ہے ۔ اس لئے مردہ پرستی مبارک کام نہیں ۔ (فارسی مثنوی ۱۰)

(जमीम: २१) और उस अरचित उद्यान को केवल निजी इच्छा का उद्यान समझ लेना, ग़ालिब का अपमान है। इसमें सामाजिक संभावनाओं की कल्पना इसलिए सम्मिलित है कि ग़ालिब के पास सामाजिक प्रगति का एक उत्तम विचार मौजूद था और निर्माण की अभिलाषा उसके दिल का सबसे बड़ा दर्द (१३६)। ग़ज़ल के किसी शे'र के संबंध में यह कहना कि उसका वास्तविक प्रेरक क्या था, कठिन है क्योंकि उसपर रूपकों के आवरण पड़े होते हैं (६०–६, ७)। लेकिन ग़ालिब ने अपने पत्रों में ग़दर [१८५७] की तबाही के बाद देहली के जो हृदय विदारक मर्सिये लिखे हैं उन्हींमें एक जगह यह हसरत-ए-तामीर [निर्माण की अभिलाषा] का शे'र भी लिखा हुआ नजर आता है— "दिल्ली का हाल तो यह है—

घर में था क्या कि तिरा ग़म उसे ग़ारत करता
वो जो रखते थे हम इक हसरत-ए-ता'मीर सो है" [१३६]

इन छ: शब्दों और दो पंक्तियों के पीछे ग़ालिब के विचारों की एक दुनिया आबाद है जो ग़ालिब के पत्रों में देखी जासकती है। १८५७ से बहुत पहले ग़ालिब ने यह अनुमान कर लिया था कि मुग़ल संस्कृति और समाज का दीप अब सदा के लिए बुझनेवाला है। यद्यपि इसकी प्राचीन मान्यताएँ ग़ालिब को बहुत प्रिय थीं लेकिन उसे यह भी ज्ञात था कि इमारत बेबुनियाद हो चुकी है और जड़ें खोखली हैं। हवा का कोई भी झोंका उसे गिरा सकता है। ग़ालिब के निजी हालात भी इससे मिलते जुलते थे। जो सोग घर में था वही आगरे और देहली पर छाया था और दोनों ने मिलकर ग़ालिब को युवावस्था के आरंभ ही से उदास कर दिया था।

लेकिन इसीके साथ ग़ालिब ने उस नयी दुनिया की झलक देख ली थी जो विज्ञान और उद्योग की प्रगति के साथ आ रही थी वह अंग्रेज़ी पूँजीवाद की शोषण-शक्ति का अनुमान न लगा सका (और यदि लगाया हो तो उसका सुबूत नहीं मिलता) लेकिन अँग्रेज़ों के लाये हुए विज्ञान और उद्योग ने उसे इतना प्रभावित किया कि जब ग़दर से कई वर्ष पहले सर सैयद अहमद ख़ाँ ने अबुल फ़ज़्ल की "आईन-ए-अकबरी" का परिशोधन किया और ग़ालिब से उसकी समीक्षा लिखने की इच्छा प्रकट की तो ग़ालिब ने ग़ज़ल के रूपकों के सारे आवरण अलग रखकर कर स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि आँखें खोल कर साहिबान-ए-इंग्लिस्तान को देखो कि ये अपने कला-कौशल में अगलों से आगे बढ़ गये हैं। उन्होंने हवा और लहरों को बेकार करके आग और धुएँ की शक्ति से अपनी नावें सागर में तैरा दी हैं। यह बिना मिज़राब के सँगीत उत्पन्न कर रहे हैं और उनके जादू से शब्द चिड़ियों की तरह उड़ते हैं, हवा में आग लग जाती है और फिर बिना दीप के नगर आलोकित हो जाते हैं।

اس کے بعد کوئی شبہ نہیں رہ جاتا کہ غالب کے پاس سماجی ارتقا کا ایک معقول تصور تھا (مہر نیمروز کا تصور صفحہ ۱۱) اور وہ اکبری عہد کے آئین کے مقابلے میں نئے صنعتی نظام کو ترجیح دیتا تھا اور سائینس کی ایجادات اور تصورات کو شاعری میں جگہ دینے کے حق میں تھا (خطوط ۔ مہر ۵٤۸) غالب کے لئے یہ اندازہ کرنا مشکل تھا کہ اس نئے نظام کے سماجی رشتے کیا ہیں اور اس کی فطرت میں کس قسم کی غارتگری ہے۔ لیکن اس کا ایک شعر ایسا ضرور ہے جو ایک لمحے کے لئے چونکا دیتا ہے:

غارت گرِ ناموس نہ ہو گر ہوسِ زر
کیوں شاہدِ گل باغ سے بازار میں آوے (۱۷٤ ـ ۸)

غزل غنائی اور داخلی شاعری کی معراج ہے اس لئے اس کے اشعار میں ذاتی جذبے اور سماجی اضطراب کے درمیان حد کھینچنا مشکل ہے پھر بھی یہ محسوس کرلینا مشکل نہیں کہ غالب اپنے عہد سے بے انتہا مایوس تھا۔ اس مایوسی میں ذاتی نارسائیوں اور سماجی معذوریوں نے مل کر ایک کیفیت پیدا کردی ہے۔ غالب کو زندگی جس طرح بھگتنی پڑی وہ ایک حساس دل کا خون کردینے کے لئے کافی ہے۔ پانچ برس کی عمر میں باپ کا اور آٹھ نو برس کی عمر میں چچا کا سایہ سر سے اُٹھ گیا۔ ایک خوش حال ننھیال میں ماں کے بے رنگ آنچل کے نیچے بچپن گذارا اور ابتدائی جوانی کی چند روزہ فرصت گناہ کے بدلے عمر بھر کی ناکامی، نامرادی، تپش اور جلن ملی۔ اٹھارہ اُنیس برس کی عمر سے زندگی کی سفاکیوں کا مقابلہ کرنے کے لئے تنہا میدان میں اترنا پڑا۔ آمدنی کا کوئی ذریعہ نہیں تھا۔ باپ اور چچا کی موت کے بعد جو جاگیر پرورش کے لئے ملی تھی اس کا زیادہ حصہ لوگ کھاگئے اور غالب عمر بھر ہاتھوں میں عرضیاں اور قصیدے لئے ہوئے دہلی، لکھنؤ، کلکتہ، رام پور در بدر ٹھوکریں کھاتا پھرا۔ نااہل اہلِ دولت اور انگریز افسروں کی جھوٹی تعریف میں خونِ دل اُگلا اور اس کے بعد بھی قرض کی شراب پی اور بھیک پر زندگی گذاری۔ مرتے وقت (دہلی ۱۵ فروری سنہ ۱۸٦۹ء) بھی یہ تلخ احساس ساتھ تھا کہ بیوہ بیوی پر مفلسی اور ناداری میں کیا بیتے گی۔ یہ بھی ہوا کہ قرض خواہوں کی نالش اور ڈگریوں کے ڈر سے گھر میں چھپ کر بیٹھنا پڑا اور کسی دشمن کی سازش سے جوئے (شطرنج اور چوسر) کی لت میں قیدخانے کی ذلت برداشت کرنی پڑی۔ مغل دربار میں جس کی بہار لٹ چکی تھی وہ قدر و منزلت بھی نہ ملی جو کم تر قسم کے شاعروں کو

इस विधान के आगे बाक़ी सारे विधान जीर्ण हो चुके हैं। जब मोतियों का ख़ज़ाना सामने हो तो पुराने खलियानों से दाने चुनने की क्या आवश्यकता है। यह कहने के बाद ग़ालिब ने जो निष्कर्ष निकाला है वह महत्वपूर्ण है। आईन-ए-अकबरी के अच्छा होने में क्या संदेह है, लेकिन उदार सृष्टि को कृपण नहीं समझना चाहिए क्योंकि गुणों का कोई अन्त नहीं है। ख़ूब से ख़ूब-तर का क्रम जारी रहता है। इसलिए मृतकोपासना शुभ कार्य नहीं है (फ़ारसी मसनवी नं १०)।

इसके बाद कोई संदेह नहीं रह जाता कि ग़ालिब के पास समाज-विकास का एक उत्तम आदर्श था और वह अकबर-कालीन विधान की तुलना में नये औद्योगिक विधान को प्रधानता देता था और विज्ञान के आविष्कारों और विचारों को शा'इरी में स्थान देने के पक्ष में था (ख़ुतूत--मेहर ५४८)। ग़ालिब के लिए यह अनुमान लगाना कठिन था कि इस नयी व्यवस्था के सामाजिक संबंध क्या हैं और इसकी प्रकृति में किस प्रकार की विनाशकता है। लेकिन इसका एक शे'र ऐसा अवश्य है जो एक क्षण के लिए चौंका देता है--

ग़ारतगर-ए-नामूस न हो गर हवस-ए-ज़र
क्यों शाहिद-ए-गुल बाग़ से बाज़ार में आवे (१७४--८)

ग़ज़ल गीतिमय (ग़िनाई, LYRICAL) और आंतरिक (SUBJECTIVE) काव्य की पराकाष्ठा है। इसलिए इसके शे'रों में व्यक्तिगत मनोभाव और सामाजिक व्याकुलता के मध्य सीमा निर्धारित करना कठिन है, फिर भी यह अनुभव कर लेना कठिन नहीं कि ग़ालिब अपने युग से अत्यंत निराश था। इस निराशा में निजी असमर्थताओं (नारसाइयों) और समाजी विवशताओं ने मिलकर एक कैफ़ियत पैदा करदी थी। ग़ालिब को जिन्दगी जिस तरह भुगतनी पड़ी वह एक भावुक हृदय का ख़ून करदेने के लिए काफ़ी है। पाँच वर्ष की आयु में बाप का और आठ-नौ वर्ष की आयु में चचा का साया सर से उठ गया। एक संपन्न ननिहाल में माँ के बेरंग आँचल के नीचे बचपन व्यतीत किया और आरंभिक युवावस्था की चंदरोज़ा फ़ुरसत-ए-गुनाह के बदले उम्र भर की असफलता, विफलता, उत्ताप और जलन मिली। अठारह-उन्नीस वर्ष की आयु से जीवन की निर्ममताओं का सामना करने के लिए अकेले मैदान में उतरना पड़ा। आय का कोई साधन नहीं था। बाप और चचा की मृत्यु के बाद जो जागीर पालन-पोषण के लिए थी उसका अधिकांश लोग खा गये और ग़ालिब उम्र भर हाथों में अर्जियाँ और क़सीदे लिये हुए देहली, लखनऊ, कलकत्ता, कानपुर, दर--बदर ठोकरें खाता फिरा, अयोग्य धनवानों और अंग्रेज अफ़सरों की झूठी प्रशंसा में हृदय-रक्त उगला और उसके बाद भी क़र्ज़ की शराब पी और भीख पर जिन्दगी गुज़ारी। मरते समय [दिल्ली, १५ फ़रवरी १८६९] भी यह कटु अनुभूति

مل رہی تھی اور آخر عمر میں ایک علمی بحث کے جرم میں برسوں مسلسل ماں بہن کی گالیاں کھانی پڑیں۔ جوانی میں جوان محبوبہ کا جنازہ آنکھوں کے سامنے اُٹھ گیا جس کی ادائیں عمر بھر تڑپاتی رہیں۔ گھر میں بچوں کے کھیل کود کے بجائے اُن کی لاشیں نظر آئیں۔ جس بھانجے کو گود لیا تھا وہ جوان مر گیا۔ دلی آنکھوں کے سامنے اُجڑی۔ دوست احباب انکھوں کے سامنے قتل ہوئے۔ ہم عصر شعرا اور علما پھانسیوں پر چڑھا دئے گئے اور کالے پانی بھیج دئے گئے اور غالب کے لئے «ماتم یک شہر آرزو» (۱۷ ـ ۲) کے سوا کچھ باقی نہیں رہ گیا۔ ان حالات میں وہ یہی کہنے پر مجبور تھا:

نہ گل نغمہ ہوں نہ پردۂ ساز
میں ہوں اپنی شکست کی آواز (۷۲)

غالب کو یہ دکھ تھا کہ «قلندری و آزادگی و ایثار و کرم» کے جو جوہر اس کو ودیعت ہوئے تھے وہ ظہور میں نہ آئے «اگر تمام عالم میں نہ ہو سکے نہ سہی، جس شہر میں رہوں اس شہر میں تو بھوکا ننگا نظر نہ آئے۔ خدا کا مقہور، خلق کا مردود، بوڑھا، ناتواں، بیمار، فقیر، نکبت میں گرفتار، میرے اور معاملات کلام و کمال سے قطع نظر کرو۔ وہ جو کسی کو بھیک مانگتے نہ دیکھ سکے اور خود در بدر بھیک مانگے وہ میں ہوں» (ایک خط) اس خط کے پیچھے غالب کا تصور انسان کار فرما ہے جس کو اس نے اپنے ایک فارسی قصیدے (۲٦) میں بھی پیش کیا ہے۔ ایک اور جگہ کہتا ہے کہ خدا نے صرف ایمان کا شعلہ روشن کیا ہے، تمدن اور شہروں کی آرائش تو انسان سے ہے۔ (ضمیمہ ۳٤) جب اس انسان کی رسوائی غالب سے برداشت نہ ہو سکی تو کبھی تو خدا سے فریاد کی کہ آج ہم اتنے ذلیل کیوں ہیں (۹۹/ ۲) اور کبھی یہ کہہ کر دل کو تسکین دے لی:

آرائش زمانہ ز بیداد کردہ اند
ہر خوں کہ ریخت غازۂ روئے زمیں شناس

مایوسی کا آہنگ غالب کی بے شمار غزلوں اور شعروں میں ملتا ہے وہ اس کی انتہائی سادہ اور مؤثر تخلیقات ہیں جو دل سے ایک چیخ بن کر باہر نکلی ہیں (۲۱، ۱٦۱، ۱٦۲، ۱٦۳، ۲۱٦) یہ آہوں کی طرح ظاہری آرائش سے پاک ہیں۔ لیکن غالب کی عظیم شخصیت اس کی مایوسی کو محض جذبے کی سطح سے بلند کر کے ذہن کی سطح پر لے آتی ہے اور غالب لڑنے کے لئے اپنے ہتھیار سنبھال لیتا ہے اور اپنی تلخ نوائی کو طنز میں تبدیل کر دیتا ہے:

साथ थी कि विधवा पत्नी पर ग़रीबी और निर्धनता में क्या बीतेगी। यह भी हुआ कि ऋणदाताओं की नालिश और डिग्रियों के डरसे घर में छिपकर बैठना पड़ा और किसी शत्रु के षड्यंत्र से जुए (शतरंज और चौसर) की लत में क़ैदख़ाने का अपमान सहन करना पड़ा। मुग़ल दरबार में, जिसकी बहार लुट चुकी थी, वह आदर-पद भी न मिला जो निम्नतर कोटि के कवियों को प्राप्त हो रहा था और आयु के अन्तिम चरण में एक बौद्धिक वाद-विवाद के अपराध में बरसों माँ-बहन की गालियाँ खानी पड़ीं। युवावस्था में युवती प्रेयसी का जनाज़ा आँखों के सामने उठ गया जिसकी अदाएँ उम्रभर तड़पाती रहीं। घर में बच्चों के खेल-कूद के बजाय उनकी लाशें नज़र आयीं। जिस भांजे को गोद लिया था वह जवान मर गया, दिल्ली आँखों के सामने उजड़ी, बंधु-बांधव आँखों के सामने क़त्ल हुए, समकालीन कवि और विद्वान फाँसियों पर चढ़ा दिये गये और काले पानी भेज दिये गये और ग़ालिब के लिए "मातम-ए-यक शहर-ए-आरज़ू" (कामना नगरी का शोक) (१७–२) के अतिरिक्त कुछ बाक़ी नहीं रह गया। इन हालात में वह यही कहने पर विवश था—

न गुल-ए-नग़्मः हूँ न पर्दः-ए-साज़
मैं हूँ अपनी शिकस्त की आवाज़ [७२]

ग़ालिब को यह दुख था कि "क़लंदरि-ओ-आज़ादगि-ओ-ईसार-ओ-करम" (स्वतंत्रता, त्याग और उदारता) के जो जौहर उसको मिले थे वह प्रकट न होसके। "अगर तमाम 'आलम में न होसके न सही, जिस शहर में रहूँ उस शहर में तो भूखा-नंगा नज़र न आये। ख़ुदा का मक़्हूर (कोप-भाजन) ख़ल्क का मरदूद (बहिष्कृत) बूढ़ा, नातवान (दुर्बल), बीमार, फ़क़ीर, नक़बत (दरिद्रता) में गिरफ़्तार मेरे और मुआमिलात-ए-कलाम-ओ-कमाल (कविता और गुण) से क़त्'-ए-नज़र करो (अनदेखा करो)। वह जो किसी को भीख माँगते न देख सके और ख़ुद दर-बदर भीख माँगे वह मैं हूँ" (एक ख़त)। इस ख़त के पीछे ग़ालिब का मानव के संबंध में विचार काम कर रहा है जिसको उसने अपने एक फ़ारसी क़सीदे (२६) में भी प्रस्तुत किया है। एक और जगह कहता है कि ख़ुदा ने सिर्फ़ ईमान की ज्योति जगाई है। सभ्यता और शहरों का शृंगार तो मनुष्य से है (ज़मीमः ३४)। जब उस मनुष्य का अपमान ग़ालिब से सहन न होसका तो कभी तो ख़ुदा से फ़रियाद की कि आज हम इतने पतित क्यों हैं (९९–६) और कभी यह कह कर दिलको दिलासा दे लिया—

आराइश-ए-ज़माना ज़ि बेदाद करदः अन्द
हर ख़ूँ कि रेख़्त ग़ाज़ः-ए-रू-ए-ज़मीं शनास

(ज़माने का शृंगार अत्याचार से किया गया है और जो भी रक्त प्रवाहित

کیا وہ نمرود کی خدائی تھی
بندگی میں مرا بھلا نہ ہوا (۲۷-۶)

وہ انتہائی مشکل حالات میں بھی جی کھول کر ہنسنا جانتا ہے. اس پر غالب کے ان گنت لطیفے اور خطوط گواہ ہیں کہ اس نے بھوک، موت، تذلیل ہر چیز کا مقابلہ ایک مردانہ زہر خند سے کیا. طنز کے تیر ناداری اور بیزاری کے زہر میں بجھائے جاتے ہیں اور خود اعتمادی اور انانیت کی کمان سے پھینکے جاتے ہیں. بظاہر یہ خوش دلی کا معمولی سا عمل معلوم ہوتا ہے لیکن دراصل یہ ایک سپر تھی جسے غالب نے زمانے کے واروں سے بچنے کے لئے استعمال کیا. اور اس کی چوٹ غالب کی شاعری پر پڑ رہی ہے. (۸۰-۲۰۲ ۹-۳، ۱۰۹، ۱۲۷-٤، ۱۷۵، ۲۰۲، ۲۲۰)
وہ طنز اور ظرافت کی چھلنی میں آنسوؤں کو چھان دیتا ہے اور چھلنی کے بھیگے ہوئے چھیدوں پر بے شمار مسکراتے ہوئے ہونٹوں کا گمان ہوتا ہے:

کی مرے قتل کے بعد اس نے جفا سے توبہ
ہائے اس زود پشیماں کا پشیماں ہونا
(۱۸-۸)

یہ فتنہ آدمی کی خانہ ویرانی کو کیا کم ہے
ہوئے تم دوست جس کے دشمن اسکا آسماں کیوں ہو (۱۲۷-۸)

یہ بڑا لطیف مگر انتہائی تیکھا طنز ہے جو ہنس ہنس کر زخم کھانے کی توفیق عطا کرتا ہے اور اس توفیق ہی میں غالب کی خود داری اور انفرادیت کا راز پوشیدہ ہے جسے زمانے کے مصائب نے انانیت اور خود پرستی میں تبدیل کر دیا ہے:

زمانہ سخت کم آزار ہے، بجانِ اسد
وگرنہ ہم تو توقع زیادہ رکھتے ہیں (۱۱۰)

یہ زیادہ مضبوط سپر تھی. اس کے بغیر آشوب دہر کا مقابلہ ممکن نہیں تھا. غالب کی انانیت کبھی کسی کو خاطر میں نہیں لائی. نہ غم عشق کے سامنے اس کا سر جھکا نہ غم روزگار کے. مجنوں ہو یا فرہاد، خضر ہو یا سکندر، زمانہ ہو یا خوبانِ دل آزار، کوئی غالب کی آنکھوں میں نہیں سماتا. وہ خدا کی بندگی میں بھی آزادۂ و خود بیں رہا (۲۳-۲) اور بے وفاؤں کے عشق میں بھی (۱۲۷-٤) اس کا سب سے زیادہ خوبصورت اظہار اس غزل میں ہے « بازیچۂ اطفال ہے دنیا مرے آگے » (۲۰۹)
یہ شان قصیدوں میں بھی برقرار رہتی ہے حالانکہ یہ غالب کی شاعری اور زندگی کا کمزور پہلو ہے. لیکن اس کا اعتراف نہ کرنا ظلم ہوگا کہ حالات

किया गया है वह धरती का अंगराग बन गया है)।

निराशा का स्वर ग़ालिब की अनगिनत ग़ज़लों और शे'रों में मिलता है। वह उसकी अत्यंत सहज और प्रभावशाली रचनाएँ हैं जो दिल से एक चीख़ बनकर बाहर निकली हैं (२१, १६१, १६२, १६३, २१६)। ये आहों की तरह प्रकट शृंगार से अरंजित हैं। लेकिन ग़ालिब का महान व्यक्तित्व उसकी निराशा को केवल भावुकता के स्तर से उठाकर बुद्धि और ज्ञान के स्तर पर ले आता है और ग़ालिब लड़ने के लिये अपने हथियार सम्भाल लेता है और अपनी तल्ख़ नवाई [कटु वाणी] को व्यंग में बदल देता है।

क्या वह नमरूद की ख़ुदाई थी
बन्दगी में मिरा भला न हुआ (२७–६)

वह अत्यन्त कठिन अवस्था में भी जी खोल कर हँसना जानता है। इसपर ग़ालिब के अनगिनत चुटकुले और पत्र गवाह हैं कि उसने भूख, मौत, अपमान, हर चीज का सामना एक मर्दाना जहरीली हँसी से किया। व्यंग के तीर विफलता और असन्तोष के विषय में बुझाये जाते हैं और आत्मविश्वास और अहं के धनुष से फेंके जाते हैं। प्रकटतः यह खुशदिली की मामूली सी क्रिया मालूम होती है लेकिन वास्तव में वह एक ढाल थी जिसका ग़ालिब ने जमाने के वारों से बचने के लिये उपयोग किया। इस ख़ुशदिली की छाप ग़ालिब की शा'अिरी पर पड़ रही है [८०–२, ९२–३, १०९, १२७–४, १७९, २०२, २२०]। वह व्यंग और हास्य की छलनी में ख़ून के आसुओं को छान देता है और छलनी के भीगे हुए छेदों पर असंख्य मुस्कुराते हुए होंठों का भ्रम होता है।

की मिरे क़त्ल के बा'द उसने जफ़ा से तौब:
हाय उस ज़ूद पशेमाँ का पशेमाँ होना
(१८–८)

यह फ़ित्न: आदमी की ख़ाना वीरानी को क्या कम है
हुए तुम दोस्त जिसके दुश्मन उसका आस्माँ क्यों हो (१२७-८)

यह बड़ा तीखा व्यंग है जो हँस-हँस कर ज़ख़्म खाने का सामर्थ्य प्रदान करता है। और इस सामर्थ्य ही में ग़ालिब के आत्मसम्मान और व्यक्तित्व [INDIVIDUALITY] का भेद छुपा हुआ है जिसे जमाने की विपत्तियों ने अहं और आत्मश्लाघा में बदल दिया—

ज़मान: सख़्त कम आज़ार है, बजान-ए-असद
वगरन: हम तो तवक़्क़ो'अ ज़ियाद: रखते हैं (११०)

यह अधिक मज़बूत ढाल थी। इसके बिना संसार के दुखों का सामना सम्भव नहीं था। ग़ालिब के अहं ने कभी किसी की परवा नहीं की। न प्रेम-

زمانہ سے مجبور ہوکر اس نے اپنا ہاتھ ضرور پھیلایا لیکن اس کو ہمیشہ ذلیل پیشہ سمجھتا رہا («غیر کیا خود مجھے نفرت مری اوقات سے ہے ») اور کلیات فارسی کے دیباچہ میں اس پر افسوس کیا ہے کہ آدھی شاعری نا اہلوں کی قصیدہ خوانی پر صرف ہوگئی۔ یہی وجہ ہے کہ قصیدوں کا مدحیہ حصہ کمزور ہے اور تشبیب کا حصہ نہایت زور دار اور شاعرانہ۔ اس کو یہ احساس بڑی شدت سے تھا کہ جس کی قصیدہ خوانی کررہا ہوں اس سے میرا درجہ بلند ہے اور بعض قصیدوں میں اس کا اظہار کرنے کے لئے غالب نے اپنی تعریف کا پہلو نکال لیا ہے۔

غالب کی آخری پناہ گاہ اس کا تصور اور تخیل ہے کیوں کہ «مفلسوں کا مدار حیات خیالات پر ہے» (ایک خط) اس دنیا میں پہونچ کر وہ کائنات پر حکمرانی کرنے لگتا ہے اور زندگی کی ہر کمی کو پورا کرلیتا ہے۔ یہ خوابوں کی دنیا ہے اور یہاں خوابوں کی تخلیق کرنے والے کے سوا کسی کی حکمرانی نہیں چلتی۔ یہاں بادشاہ اژدہے معلوم ہونے لگتے ہیں اور شاعر پیغمبر ہوجاتا ہے اور جبرئیل اس کے ناقۂ شوق کا حدی خواں۔ یہاں سفاکی نہیں ہے صرف دزدمندی ہے۔ حسرتیں نہیں ہیں صرف نشاط کامرانی ہے۔ قدح سازی اور ساقی تراشی ہے۔ پیاس جتنی بڑھتی ہے دریا کا جوش بھی اتنا ہی زیادہ ہوتا ہے۔ برے حالات میں جینے کا حوصلہ بیدار ہوتا ہے اور خون جگر پی کر چہرے کی تازگی بڑھ جاتی ہے (مغنی نامہ) تصور نا افریدہ گلشنوں سے گلچینی کرتا ہے اور بہاروں کے گیت گاتا ہے۔ اس دنیا میں صرف جنبش اور پرواز ہے اور آگے بڑھے جانے کا مستانہ عمل «تا بازگشت سے نہ رہے مدعا مجھے» (۱۵۰-۳)

غالب کی یہ ساری خصوصیات مل کر اس کے تصور عشق کو ایک ایسا روپ دیتی ہیں جس سے اُردو پہلے ناآشنا تھی۔ حسن کی بے پناہ کشش کے سامنے، جس میں افلاطونیت کم ہے اور جسمانیت زیادہ، انتہائی سپردگی اور نیاز مندی کے باوجود غالب کا عشق خود دار اور سر بلند ہے۔ زندگی کے لئے اگر یہ اصول ہے کہ جو نالہ ہونٹوں تک نہیں آیا وہ سینے کا داغ بن گیا (۲۳-۵، ۱۱٦، ۱۲۲-٦، ۱٤۹-۸، ۱٥٤-٥، ۱۹۷، ۲۱۲-۲) اس لئے ضبط غم کا حوصلہ تنگ ہونا چاہئے اور غصے کی شدت زیادہ (فارسی شعر) تو عشق کے لئے یہ اصول کہ:

عجز و نیاز سے تو وہ آیا نہ راہ پر
دامن کو اس کے آج حریفانہ کھینچئے (ضمیمہ ۳۸-۲)

सताप के सामने उसका सर झुका न जग-संताप के। मजनूँ हो या फ़रहाद, ख़िज्र हो या सिकन्दर, जमाना हो या ख़ूबान-ए-दिल आज़ार [दुख देनेवाला मा'शूक़] कोई ग़ालिब की आँखों में नहीं समाता। वह ख़ुदा की बन्दगी में भी मनमौजी और अभिमानी रहा [२३—२] और बेवफ़ाओं के 'अिश्क़ में भी [१२७—४] उसका सबसे अधिक सुन्दर विवरण इस ग़ज़ल में है—
"बाज़ीच:-ए-अत्फ़ाल है दुनिया मिरे आगे" [२०६]

यह शान क़सीदों में भी बाक़ी है, यद्यपि यह ग़ालिब की शा'अिरी और जीवन का कमज़ोर पहलू है। लेकिन यह स्वीकार न करना ज़ुल्म होगा कि मजबूर होकर उसने अपना हाथ ज़रूर फैलाया मगर इसको सदा ज़लील पेशा समझता रहा, और एक जगह अफ़सोस किया है कि आधी शा'अिरी अपात्रों की प्रशंसा में व्यर्थ होगई। यही कारण है कि क़सीदों का प्रशंसात्मक अंश कमज़ोर है और तशबीब [आरंभिक भाग] अत्यंत काव्यमय। ग़ालिब को इसका एहसास था कि जिसकी प्रशंसा कर रहा हूँ उससे मेरा दर्जा ऊँचा है इसलिए उसने कहीं कहीं स्वयं अपनी प्रशंसा का पहलू निकाल लिया है।

ग़ालिब का अंतिम आश्रयस्थल उसका अनुध्यान और कल्पना है क्योंकि "निर्धनों के जीवन का आधार कल्पना पर है" (एक ख़त)। इस जगत में पहुँचकर वह विश्व पर राज्य करने लगता है और जीवन के हर अभाव की पूर्त्ति कर लेता है। यह स्वप्नों का संसार है और यहाँ स्वप्नों का निर्माण करनेवाले के अतिरिक्त किसी का शासन नहीं चलता। यहाँ बादशाह अजगर मालूम होने लगते हैं और शा'अिर पैग़म्बर हो जाता है और जिब्रईल (ख़ुदा का संदेश लेकर आनेवाला फ़रिश्ता) "नाक़:-ए-शौक़ का हुदीख्वान" (अपने गीत से शौक़ को आगे बढ़ानेवाला)। यहाँ निर्दयता नहीं है केवल करुणा है। अपूर्ण कामनाएँ नहीं हैं केवल कामनापूर्ति का हर्ष है, क़दहसाज़ी (प्याले बनाना) और साक़ीतराशी [साक़ी गढ़ना] है। प्यास जितनी बढ़ती है सागर का उबाल भी उतना ही बढ़ता है। बुरे हालात में जीने का हौसला जाग उठता है और जिगर का ख़ून पीकर चेहरे की ताज़गी बढ़ जाती है (अब्र-ए-गुहरबार)। अनुध्यान अरचित उद्यानों से कुसुमचयन करता है और बहारों के गीत गाता है। इस दुनिया में केवल गति और उड़ान है और आगे बढ़े जाने का मस्ताना अमल, "ता बाज़गश्त से न रहे मुद्द'आ मुझे" (१९०—३)।

ग़ालिब की ये सारी विशेषताएँ मिलकर उसके प्रेम के दृष्टिकोण को ऐसा रूप देती हैं जिससे पहले उर्दू शा'अिरी अपरिचित थी। सौन्दर्य के असीम आकर्षण के सामने, जिसमें अफ़लातूनियत कम है और जिस्मानियत (शारीरिकता) अधिक, अत्यधिक समर्पण और श्रद्धा के बावुजूद ग़ालिब का

اور غزل کی اشاریت کا تقاضا یہ ہے کہ صرف معشوق کو نہیں بلکہ ہر آدرش کو
چاہے وہ نئی زندگی کی تمنا ہی کیوں نہ ہو، اسی طرح دامن کھینچ کر لایا
جاسکتا ہے۔ شاید یہی وجہ ہے کہ غالب نے اپنے آپ کو آئین غزل خوانی میں
گستاخ کہا ہے (۱۷۸ ـ ۱۲)

اس سے اردو شاعری کو ایک نیا مزاج ملا جس کی خود داری میں ہلکی
سی بغاوت کی آمیزش تھی، یہ کبھی تشکیک کی شکل میں ابھرتا ہے کبھی طنز
کی اور کبھی تخیل کی کمندیں بن جاتا ہے۔ غالب کے ہم عصر اس مزاج کو
نہ سمجھ سکے جو خون کے گھونٹ پی کر مسکراتا ہے اور زندگی اور انسان کو
نئی عظمت عطا کرتا ہے۔ غالب سے پہلے خدا اور معشوق پر کس نے طنز کیا
تھا، ضبط غم کے بند کس نے توڑے تھے، ظلم و ستم کی چلتی ہوئی تلوار
کو اپنے دریائے بے تابی کی موج خوں کس نے بنایا تھا (۱۳۳ ـ ۵) کس نے
غزل کے جذبہ میں فکر کی اتنی شدید آمیزش کی تھی۔ کس نے غزل اور
قصیدے کی زبان کا فرق مٹا کر نئی نظم کی بنیادیں استوار کی تھیں۔ اسی
لئے غالب کی غزل کا آہنگ میر کے آہنگ سے اونچا ہے۔

انیسویں صدی کے آخر اور بیسویں صدی کی ابتدا میں غالب کی
مقبولیت میں جو اضافہ ہوا ہے اس میں اور باتوں کے علاوہ اس نئے مزاج کا
بھی دخل ہے۔ یہ احساس آزادی سے بیدار ہونے والے نئے ہندستان کے مزاج
سے ہم آہنگ ہے جسے عظمت رفتہ پر ناز بھی ہے اور دکھ بھی ہے اور نئی
عظمت کی تلاش بھی ہے۔ غالب نے سیاسی شاعری نہیں کی لیکن نئے عہد
کے مزاج کو سمو لیا۔ اور جب نئے طوفان سے کھیلنے والے آئے تو انہوں
نے بلاخیز موجوں سے لڑنے کے لئے غالب کی شاعری سے تقویت حاصل
کی۔ «غالب کے آرٹ کی وجہ سے غزل حدیث دلبری سے بڑھ کر حدیث
زندگی بنتی ہے اور زندگی کے مختلف دوروں۔ کروٹوں اور انقلابات کا ساتھ
دینے لگتی ہے»۔ (آل احمد سرور)

یہ اتفاقی بات نہیں ہے کہ اردو کی پرانی شاعری سے بغاوت کرنے والا
حالی غالب کا شاگرد تھا اور نئی تعلیم پر زور دینے والا سر سید غدر سے پہلے
نئی سائنس اور صنعت کی تعریف غالب سے سن چکا تھا۔ اور یہ بھی اتفاقی بات
نہیں ہے کہ وطن پرست شبلی کی غزلوں میں غالب کی صدائے باز گشت ہے اور
اقبال کے فکر و فن پر غالب کے فکر و فن کے آفتاب کی کرنیں پڑ رہی ہیں۔
جوش ملیح آبادی سے لے کر نئے دور کے شاعروں تک کوئی ایسا نہیں جو

'अिश्क़ स्वाभिमानी और मस्तकोन्नत है। जीवन के लिए यदि यह नियम है कि जो नाल: (आर्त्तनाद) होठों तक नहीं आया वह सीने का दाग़ बन गया (२३–५, ११६, १२२–६, १४६–८, १५४–९, १६७, २१२–२) इसलिए दुख के सहन का साहस कम होना चाहिये और क्रोध का आवेग अधिक (फ़ारसी शे'र) तो 'अिश्क़ के लिए यह नियम कि:—

'अिज्ज़-ओ-नियाज़ से तो वह आया न राह पर
दामन को उसके आज हरीफ़ान: खेंचिये (ज़मीम: ३८–२)

उर्दू ग़ज़ल की सांकेतिकता का तक़ाज़ा यह है कि केवल मा'शूक़ को नहीं बल्कि हर आदर्श को चाहे वह नये जीवन की कामना ही क्यों न हो इसी तरह दामन खेंच कर प्राप्त किया जासकता है। शायद यही कारण है कि ग़ालिब ने अपने आप को आईन-ए-ग़ज़लख्वानी (काव्य-शास्त्र) में गुस्ताख़ (धृष्ट और अशिष्ट) कहा है (१७८–१२)।

इससे उर्दू शा'अिरी को एक नया मिज़ाज (स्वभाव और स्वर) मिला जिसके स्वाभिमान में हल्के से विद्रोह का सम्मिश्रण है। यह कभी तशकीक (शंका) के रूप में उभरता है और कभी व्यंग के और कभी कल्पना की कमंदें बन जाता है। ग़ालिब के समकालीन इस मिज़ाज को नहीं समझ सके जो ख़ून के घूँट पीकर मुसकुराता है और जीवन तथा मानव को नयी गरिमा प्रदान करता है। ग़ालिब से पहले ख़ुदा और मा'शूक़ पर किसने व्यंग किया था, दुख-सहन के बाँध किसने तोड़े थे, ज़ुल्म-ओ-सितम (अन्याय और अत्याचार) की चलती हुई तलवार को अपनी व्याकुलता के सागर की रक्त-तरंग किसने बनाया था (१३३–५), किसने ग़ज़ल की भावना में विचार का इतना अधिक सम्मिश्रण किया था, किसने ग़ज़ल और क़सीदे की भाषा का अंतर मिटाकर नयी नज़्म (आधुनिक काव्य-शैली) की बुनियादें रखी थीं (इसीलिए ग़ालिब की ग़ज़ल का स्वर मीर के स्वर से ऊँचा है)।

१९ वीं शताब्दी के अंत और २० वीं शताब्दी के आरंभ में ग़ालिब की लोकप्रियता में जो अभिवृद्धि हुई है उसमें और बातों के अतिरिक्त इस नये मिज़ाज का भी योग है। यह स्वतंत्रता की चेतना से जागृत नये हिन्दोस्तान के नये मिज़ाज से एकस्वर है, जिसे विगत वैभव पर गर्व भी है और दुख भी है और नयी महानता की तलाश भी। ग़ालिब ने राजनीतिक कविता नहीं की लेकिन नये युग के मिज़ाज को समो लिया। और जब नये तूफ़ान में खेलनेवाले आये तो उन्होंने प्रलयंकारी तरंगों में लड़ने के लिए ग़ालिब की शा'अिरी से शक्ति प्राप्त की ''ग़ालिब की कला के कारण ग़ज़ल प्रेम-वर्णन से बढ़कर जीवन-वर्णन बनती है और जीवन के विभिन्न युगों, करवटों और क्रांतियों का साथ देने लगती है'' (आले अहमद सुरूर)।

کسی نہ کسی شکل میں غالب کا خوشہ چین نہ ہو۔ غالب کے بے شمار اشعار شمالی ہندستان میں ضرب المثل بن چکے ہیں اور اردو جاننے والا شاید ہی کوئی گھر دیوان غالب سے خالی ہو۔

آج ہمارے ہاتھ میں غالب کی شاعری دو زمانوں کی ترجمان بن کر آئی ہے۔ اس میں ایک عہد کا خمار اور دوسرے عہد کا نشہ ہے۔ جاتی ہوئی رات کا کرب اور طلوع ہوتی ہوئی سحر کا نشاط حل ہو گیا ہے۔

غالب کی عظمت صرف اس میں نہیں ہے کہ اس نے اپنے عہد کے باطنی اضطراب کو سمیٹ لیا بلکہ اس میں کہ اس نے نیا اضطراب پیدا کیا۔ اس کی شاعری اپنے عہد کے شکنجوں کو توڑ دیتی ہے اور ماضی اور مستقبل کی وسعتوں میں پھیل جاتی ہے۔ اس نے اپنے ہر تجربے کو جو ایک انتہائی لطیف جمالیاتی ذوق رکھنے والے ذہن کی کار فرمائی تھی انسانی نفسیات کی آگ میں تپا کر پگھلایا ہے، کلیے کی کسوٹیوں پر کسا ہے اور پھر شعر کی شکل میں ڈھالا ہے۔ تب اس کے یہاں ایک عالمگیر اور آفاقی شاعر کا لہجہ پیدا ہوا ہے اور وہ زندگی کے ہر لمحے کا شاعر بن گیا ہے۔ وہ انسانی روح کی رنگا رنگ کیفیات سے آشنا ہے۔ انتہائی نشاط ہو یا انتہائی مایوسی، تشکیک کا عالم ہو یا تصور کی کرشمہ سازی، دقیق فلسفیانہ مسائل ہوں یا حد درجہ عامیانہ چیزیں، بوسوں کی سرشاری ہو یا ہم آغوشی کی لذت، ہر کیفیت میں غالب کی شاعری ساتھ دے گی۔ کمتر درجے کے شعراء اس کی کسی ایک ادا کو اپنا فلسفہ بنا سکتے ہیں لیکن غالب بیک وقت اپنی ساری اداؤں کا جادو ڈالتا ہے۔

اس شاعری سے لطف اندوز ہونے کے لئے صرف لفظی معنوں سے واقف ہونا کافی نہیں ہے۔ شعروں کو بار بار پڑھنا بھی ضروری ہے۔ پھر لفظ حرفوں کے مجموعے کی شکل میں نہیں بلکہ تصویروں کی شکل میں پہچانے جائیں گے۔ آدمیوں کے چہروں کی طرح وہ آہستہ آہستہ مانوس ہوں گے اور اپنی شخصیت ظاہر کریں گے۔ پھر لفظوں کا صوتی لوچ محسوس ہوگا اور ان کے باہمی ٹکراؤ کی جھنکار سے کان آشنا ہوں گے۔ تب جاکر معنوی ترنم اور داخلی آہنگ کے دروازے کھلیں گے۔ اس طرح لفظی مفہوم سے گذر کر شاعرانہ مفہوم تک پہونچنے کا راستہ ملے گا اور وہ وجدانی کیفیت پیدا ہوگی جہاں وفا کا لفظ محبوب کی زلفوں کی طرح مہک اٹھے گا اور سرو چراغاں رقص کرتا نظر آئے گا، عشق، ذوق اور عمل بن جائے گا۔ حسنِ محبوب حسنِ کائنات میں تبدیل ہو جائے گا۔ ناز وہ آدرش بن جائے گا جس کے حصول کے لئے دل و جان کی بازی

यह आकस्मिक बात नहीं है कि उर्दू की पुरानी शा'अिरी से विद्रोह करनेवाला हाली ग़ालिब का शिष्य था और नयी शिक्षा पर बल देनेवाला सर सैयद ग़दर से पहले नये विज्ञान और उद्योग की प्रशंसा ग़ालिब से सुन चुका था। और यह भी आकस्मिक बात नहीं है कि देशभक्त शिबली की ग़ज़लों में ग़ालिब की प्रतिध्वनि है और इक़बाल के चिंतन और कला पर ग़ालिब के चिंतन और कला के सूर्य की किरणें पड़ रही हैं। जोश मलीहाबादी से लेकर आज के शा'अिरों तक कोई ऐसा नहीं है जो किसी न किसी रूप में ग़ालिब से प्रभावित न हो। ग़ालिब के अनगिनत शे'र उत्तरी भारत के लोगों की ज़बान पर चढ़े हुए हैं और उर्दू जाननेवाला शायद ही कोई घर दीवान-ए-ग़ालिब से ख़ाली हो।

आज हमारे हाथ में ग़ालिब की शा'अिरी दो युगों की तर्जुमान बन कर आयी है। उसमें एक युग का मदिरालस और दूसरे युग की मादकता है, जाती हुई रात की वेदना और उदीयमान उषा का हर्ष मिश्रित होगया है।

ग़ालिब की महानता केवल इसमें नहीं है कि उसने अपने युग की आंतरिक व्याकुलता को समेट लिया बल्कि इसमें कि उसने नयी व्याकुलता पैदा की। उसकी शा'अिरी अपने युग के बंधनों को तोड़ देती है और भूत और भविष्य के विस्तार में फैल जाती है। ग़ालिब ने अपने हर अनुभव को जो एक अत्यंत मृदुल सौन्दर्यबोध रखनेवाले मस्तिष्क की प्रक्रिया थी, मानवी मनोविज्ञान की आग में तपाकर पिघलाया है, व्यापक नियम की कसौटियों पर कसा है और फिर काव्य के रूप में ढाला है। तब उसके यहाँ एक विश्व कवि का स्वर पैदा हुआ है और वह जीवन के हर क्षण का कवि बन गया है। वह मानव-आत्मा की बहुरंगी अवस्थाओं से परिचित है। अत्यधिक हर्ष हो या अत्यधिक निराशा, शंका की दशा हो या कल्पना की जादूगरी हो, दर्शन की गूढ़ समस्याएँ हों या अत्यंत निम्नकोटि की वस्तुएँ, चुम्बनों की मादकता हो या आलिंगन का आनंद, हर स्थिति में ग़ालिब की शा'अिरी साथ देगी। निम्नतर कोटि के कवि उसकी किसी एक अदा को अपना विचार-दर्शन बना सकते हैं, लेकिन ग़ालिब एकसाथ अपनी सारी अदाओं का जादू डालता है।

इस शा'अिरी का रसास्वादन कर सकने के लिए केवल शाब्दिक अर्थों का ज्ञान पर्याप्त नहीं है। शे'रों को बार-बार पढ़ना भी आवश्यक है। फिर शब्द अक्षरों के समूह के रूप में नहीं बल्कि चित्रों के रूप में पहचाने जायेंगे। मनुष्यों के चेहरों की तरह वे धीरे-धीरे सुपरिचित बनेंगे और अपना व्यक्तित्व प्रकट करेंगे। फिर शब्दों की ध्वनि का लोच महसूस होगा और उनके परस्पर टकराव की झनकार से कान परिचित होंगे। तब जाकर अर्थ-संगीत और आंतरिक स्वर के द्वार खुलेंगे। इस तरह शाब्दिक अर्थों से गुज़रकर काव्यात्मक अर्थों तक

لگانا خوش مزاقی کی دلیل ہے، شمشیر و سناں کا جلال اور انداز و ادا کا جمال جلوہ گر ہوگا، فراق کا درد، آرزو کی لطافت میں تبدیل ہو جائے گا اور وصال لذت طلب کی سرشاری میں، شوق ایک قوت تخلیق بن کر ابھرے گا اور دشت و صحرا امکانات کی وسعتیں اختیار کر لیں گے، جنون جستجو بن جائے گا جس کی راہیں کبھی زنداں کی زنجیریں روکیں گی اور کبھی دیر و حرم کی دیواریں جنھوں نے اپنے اندر شوق کی واماندگی کو سجار کھاہے (ضمیمہ ۲/۲۰) اور میخانہ مکمل انسانیت اور مکمل آزادی کی منزل بن کر سامنے آئے گا، پھر دیوانِ غالب کے ہر ہر ورق پر اس کے تخیل کی مخلوق انگڑائیاں لینے لگے گی، اس کے سراپا ناز محبوب آنکھوں کے سامنے مسکرائیں گے اور دنیا زیادہ خوبصورت ہوجائے گی اور انسان زیادہ قابل احترام۔

☆ ☆ ☆

مروجہ دیوانِ غالب در اصل غالب کے مجموعی اردو کلام کا انتخاب ہے اس کے کئی نسخے غالب کی زندگی میں شائع ہوئے۔ میں نے پیش نظر ایڈیشن کے لئے مالک رام کے مرتب کئے ہوئے دیوان کو استعمال کیا ہے جس کا متن مطبع نظامی کانپور کے ایڈیشن (۱۸۶۲ء) پر مبنی ہے، اور اس کی تصحیح خود غالب نے کی تھی، میں نے صرف غزلیں اصل ترتیب کے ساتھ باقی رکھی ہیں اور ضمیمے میں بھی دو قطعات کے علاوہ باقی اشعار غزلوں ہی کے ہیں۔

عام طور سے اردو لکھاوٹ میں اوقاف اور اعراب کا رواج نہیں ہے اور عبارت اٹکل سے پڑھی جاتی ہے اس لئے دیوانِ غالب کے مختلف نسخوں میں بعض اضافتوں میں اختلاف ملتا ہے جو یا تو دیوان ترتیب دینے والوں نے روا روی میں لکھ دی ہیں یا کاتب نے آرائش کے خیال سے لگادی ہیں۔ مالک رام نے اوقاف کے معاملے میں بڑی محنت اور کاوش کی ہے لیکن اعراب میں انھوں نے بھی اتنی احتیاط نہیں برتی۔ میں نے اوقاف بدستور باقی رکھے ہیں لیکن بعض اضافتوں میں اختلاف کیا ہے۔ مثلاً مالک رام کے یہاں اور بعض دوسرے نسخوں میں «جوشِ قدح سے بزمِ چراغاں کئے ہوئے» لکھا ہے۔ میں نے بزم کے لفظ پر اضافت باقی نہیں رکھی ہے۔ اسی طرح «چشمِ دلال جنسِ رسوائی» کے بجائے میں نے «چشم، دلالِ جنسِ رسوائی» لکھا ہے، لیکن یہ بات صرف چند شعروں تک محدود ہے۔

تلفظ کا مسئلہ بھی اہم ہے بیرونی زبانوں کے بعض الفاظ اردو میں

पहुँचने का पथ मिलेगा। और उल्लासजनित मत्तता की वह अवस्था प्राप्त होगी जहाँ वफ़ा (प्रेम-निर्वाह) का शब्द मा'शूक़ की जुल्फ़ों (अलकों) की तरह सुरभित हो उठेगा और सर्व-ए-चराग़ाँ (दीप-सज्जित वृक्ष) नृत्य करता नज़र आयेगा 'अिश्क़ (प्रेम) अभिरुचि और आचारण बन जायगा, प्रेयसी का सौन्दर्य सृष्टि के सौन्दर्य में परिणत हो जायगा, नाज़ (रूप-गर्व) वह आदर्श बन जायगा जिसकी प्राप्ति के लिए तन-मन की बाज़ी लगाना सुरुचि का परिचायक है, शमशीर-ओ-सिनाँ (तलवार और बर्छी) का तेज और अंदाज़-ओ-अदा (हाव-भाव) की सुन्दरता प्रकट होगी, फ़िराक़ (विरह) का दर्द कामना की मृदुलता में परिणत हो जायगा और विसाल (मिलन) तृष्णा के आनंद की परितृप्ति में; शौक़ (आकांक्षा) एक निर्माण-शक्ति बनकर उभरेगा और दश्त-ओ-सहरा (मैदान और जंगल) संभावनाओं का विस्तार धारण करलेंगे; जुनून (उन्माद) जिज्ञासा बन जायगा जिसकी राहें कभी ज़िन्दाँ (कारागार) की जंजीरें रोकेंगी और कभी दैर-ओ-हरम (मन्दिर और मस्जिद) की दीवारें, जिन्होंने अपने अन्दर लालसा की थकन को सजा रखा है; (ज़मीम: २०—२) और मैख़ान: (मदिरालय) पूर्ण मानवता और पूर्ण स्वतंत्रता की मंज़िल बनकर सामने आयगा। फिर दीवान-ए-ग़ालिब के हर पृष्ठ पर उसकी कल्पना की सृष्टि अँगड़ाइयाँ लेने लगेगी, उसके सरापा नाज़ महबूब आँखों के सामने मुस्कुरायेंगे और दुनिया ज़्यादा ख़ूबसूरत होजायगी और मानव अधिक आदरणीय।

☼ ☼ ☼

प्रचलित दीवान-ए-ग़ालिब वास्तव में ग़ालिब के उर्दू काव्य का संग्रह है जिसके कई संस्करण ग़ालिब के जीवनकाल में प्रकाशित हुए। मैंने इस संस्करण के लिए श्री मालिक राम द्वारा सम्पादित दीवान का उपयोग किया है जिसका मूल मतब:-ए-निज़ामी कानपुर के संस्करण (१८६२ ई०) पर आधारित है। और इसका संशोधन स्वयं ग़ालिब ने किया था।

मैंने केवल ग़ज़लें मूल-क्रम के साथ बाक़ी रखी हैं और ज़मीमे (परिशिष्ट) में भी दो क़त'ओं के 'अलाव: बाक़ी अश'आर ग़ज़लों के ही हैं।

'आम तौर से उर्दू लिखावट में विरामचिन्हों और मात्राओं का रिवाज नहीं है। और 'अिबारत अटकल से पढ़ी जाती है इसलिए दीवान-ए-ग़ालिब के विभिन्न संस्करणों में कुछ इज़ाफ़तों में विरोध मिलता है, जो या तो दीवान सम्पादित करनेवालों ने जल्दी में लिखदी हैं या कातिब ने सजावट के लिए लगादी हैं। मालिक राम ने विरामचिन्हों के मु'आमले में बड़े परिश्रम और सावधानी से काम लिया है लेकिन ऐ'राब लगाने में उन्होंने भी इतनी सावधानी नहीं बरती। मैंने विरामचिन्ह ज्यों के त्यों रखे हैं लेकिन कुछ इज़ाफ़तों

آکر بگڑ چکے ہیں۔ چونکہ اس طرح وہ اردو کے لفظ بن گئے ہیں اس لئے میں عام طور سے بول چال کے تلفظ کو اصل فارسی یا عربی تلفظ پر ترجیح دیتا ہوں یہی وجہ ہے کہ میں نے سُوال کو سَوال اور گرِفتار کو گرَفتار اور نِشتر کو نَشتر لکھا ہے ایسے الفاظ میں بھی جن کے دو تلفظ ہیں میں نے بول چال کے تلفظ کو بہتر سمجھا ہے۔ اس کی کسوٹی صرف میرا ذاتی علم ہے۔ اس لئے عَجز پر عِجز کو اور سِتایش پر سَتایش کو ترجیح دی ہے، لیکن اتنی احتیاط کی ہے کہ ہندی فرہنگ میں واوین کے اندر دوسرا تلفظ بھی لکھ دیا ہے۔ میں نے بعض الفاظ مثلاً خَزاں، چَراغ اور نَشاط کو نہیں بدلا ہے لیکن میرا خیال ہے کہ اردو میں خِزاں، چِراغ اور نِشاط فصیح ہیں اور ان کو اسی طرح استعمال کرنا چاہئے یہ دوسرا سوال ہے کہ خود غالب نے کیا تلفظ کیا ہے۔ جب تک اس پر تحقیق نہ کی جائے اس وقت تک ہم ذاتی ذوق کی کسوٹیاں استعمال کرنے پر مجبور ہیں۔

ناگری لکھاوٹ میں اردو شعر و ادب کا اچھا خاصہ حصہ منتقل ہو چکا ہے۔ لیکن اردو کو ناگری لکھاوٹ میں منتقل کرنے کے مسائل پر پوری طرح غور نہیں کیا گیا ہے۔ ابتدا میں یہ بے احتیاطی فطری امر تھی لیکن اب جبکہ ہندی ہندوستان کی قومی زبان بن چکی ہے اور اسکو دیوناگری لکھاوٹ کے ذریعے سے ہندوستان کی مختلف زبانوں کے سرمائے کو اپنے دامن میں سمیٹنا ہے تو یہ ضروری ہے کہ لکھاوٹ کے مسائل پر علمی اور سائنسی طریقے سے غور کیا جائے اور دوسری زبانوں کی آوازوں کو منتقل کرنے کے لئے نئی علامتیں اور نشانات اختیار کئے جائیں۔ یہ زندہ زبانوں کی خصوصیت ہے اور ناگری لپی پہلے بھی کا، کھا، جا اور پھا کے نیچے بندی کا اضافہ کر کے اپنی زندگی کا ثبوت دےچکی ہے۔

اردو ادب ہندی ادب سے سب سے زیادہ قریب ہے۔ اور دونوں کی بول چال کی زبان اور علاقہ مشترک ہے۔ لیکن پھر بھی اردو میں کچھ خصوصیات ہندی سے الگ ہیں۔ مثلاً عطف و اضافت۔

عطف دو یا دو سے زیادہ لفظوں یا جملوں کو ملانے کا کام دیتا ہے۔ حروفِ عطف بہت سے ہیں لیکن یہاں صرف اس واؤ سے بحث ہے جو «اور» کے معنوں میں استعمال ہوتا ہے جیسے «گل و بلبل»

اضافت ایک لفظ سے دوسرے لفظ کے تعلق کو ظاہر کرتی ہے۔ اضافت کی علامت زیر سے لکھی جاتی ہے جو حرف کے نیچے لگایا جاتا

के मु'आमले में विरोध किया है। उदाहरण के लिये मालिक राम के यहाँ और कुछ दूसरे संस्करणों में "जोश-ए-क़दह से बज़्म-ए-चराग़ाँ किये हुये" लिखा है। मैंने बज़्म की इज़ाफ़त बाक़ी नहीं रखी। इसी तरह "चश्म-ए-दल्लाल जिन्स-ए-रुस्वाई" के बजाय मैंने 'चश्म, दल्लाल-ए-जिन्स-ए-रुस्वाई' लिखा है। लेकिन यह बात केवल चन्द शे'रों तक सीमित है।

उच्चारण का प्रश्न भी महत्वपूर्ण है। विदेशी भाषाओं के चन्द शब्द उर्दू भाषा में आकर बिगड़ चुके हैं। चूँकि इस तरह वह उर्दू के शब्द बन गये हैं इसलिए मैं साधारणतः बोलचाल के उच्चारण (तद्भव) को मूल फ़ारसी या 'अरबी उच्चारण (तत्सम) पर प्रधानता देता हूँ। यही कारण है कि मैंने सुवाल को सवाल, गिरिफ़्तार को गिरफ़्तार और निश्तर को नश्तर लिखा है। ऐसे शब्दों में भी जिनके दो उच्चारण हैं, मैंने बोलचाल के उच्चारण को बेहतर समझा है। इसकी कसौटी मेरा निजी ज्ञान है। इसलिये 'अज्ज पर 'इज्ज को और सिताइश पर सताइश को प्रधानता दी है लेकिन इतनी सावधानी बरती है कि हिन्दी शब्दावली में कोष्टक के अन्दर दूसरा उच्चारण भी लिखदिया है। मैंने कुछ शब्द जैसे ख़ज़ाँ, चराग़ और नशात को नहीं बदला है लेकिन मेरा विचार है कि उर्दू में ख़िज़ाँ, चिराग़ और निशात प्रचलित हैं और उनका इसीतरह प्रयोग करना चाहिये। यह दूसरा प्रश्न है कि स्वयं ग़ालिब ने क्या उच्चारण किया। जब तक इसकी छानबीन न की जाय उस समय तक हम निजी रुचि की कसौटी का प्रयोग करने पर बाध्य हैं।

नागरी लिपि में उर्दू काव्य और साहित्य का एक बड़ा भाग प्रकाशित हो चुका है। लेकिन उर्दू को नागरी लिपि में परिवर्तित करने के प्रश्न पर पूरी तरह विचार नहीं किया गया। प्रारम्भ में यह असावधानी स्वाभाविक थी, लेकिन अब, जबकि हिन्दी हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा बन चुकी है और उसको देवनागरी लिपि द्वारा हिन्दुस्तान की विभिन्न भाषाओं की पूँजी को अपने दामन में समेटना है तो यह आवश्यक है कि लिपि के प्रश्नों पर साहित्यिक और वैज्ञानिक रूप से विचार किया जाय और दूसरी भाषाओं की आवाज़ों को व्यक्त करने के लिये नयी 'अलामतें और संकेत अपनाये जायें। यह जीवित भाषाओं की विशेषता है और नागरी लिपि पहिले भी क, ख, ग, ज और फ के नीचे बिन्दी लगाकर अपने जीवित होने का सुबूत दे चुकी है।

उर्दू साहित्य हिन्दी साहित्य से सब से अधिक निकट है और दोनों की बोलचाल की भाषा और स्थान एक ही है। लेकिन फिर भी उर्दू में कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जो हिन्दी से भिन्न हैं जैसे 'अत्फ़ और इज़ाफ़त।

'अत्फ़ दो या दो से अधिक शब्दों या वाक्यों को मिलाने का काम देता है। 'अत्फ़ के बहुत से अक्षर हैं लेकिन यहाँ पर केवल उस वाव (و) से

ہے اور اس کے استعمال سے گل کا رنگ «رنگِ گل» اور غالب کا دیوان «دیوانِ غالب» ہوجاتا ہے۔

ناگری میں عطف و اضافت کے لکھنے کے جو طریقے رائج ہیں وہ ناقص ہیں، ان سے لفظوں کی اصل شکل بگڑ جاتی ہے اور بعض اوقات معنی کا اختلاف پیدا ہوجانے کا اندیشہ ہوتا ہے، مثلاً عام طور سے گل اور بلبل کو ملانے کے لئے (गुलो बुलबुल) لکھا جاتا ہے یا (गुल व बुलबुल) ایک میں گل کی شکل بگڑ گئی ہے اور دوسرے میں تلفظ کی غلطی کا امکان ہے۔ پیش نظر دیوان میں عطف کے واؤ کے لئے (ओ) کی علامت استعمال کی گئی ہی اور (गुल-ओ-बुलबुल) لکھا گیا ہے۔

اضافت کے لئے (ए) کی علامت استعمال کی گئی ہے اور (दीवाने ग़ालिब) کے بجائے جس کے معنی پاگل غالب بھی ہوسکتے ہیں (दीवान-ए-ग़ालिब) لکھا گیا ہے، اس طرح لفظ کی اصل شکل باقی رہتی ہے اور اضافت کا زیر «ے» میں تبدیل نہیں ہوتا۔

اردو کے تین حروف کے لئے بھی نئی علامتوں سے کام لیا گیا ہے، ایک ژے، دوسرے عین اور تیسرے چھوٹی ہے۔

جس حرف کو اردو میں (ژ) لکھتے ہیں اس کی آواز ہندی میں موجود نہیں ہے، یہ زا اور شا کے درمیان کی آواز ہے، اس لئے شا کے نیچے بندی لگادی گئی ہے (श़)

عین کی آواز اردو میں الف کی آواز سے مل گئی ہے اس لئے ناگری لکھاوٹ میں عام طور سے دونوں حرفوں کو ایک ہی طرح لکھا جاتا ہے جن لفظوں کے شروع میں عین آتا ہے اُن میں کوئی دشواری پیدا نہیں ہوتی جیسے عاشق اور عورت، لیکن جن لفظوں کے بیچ میں یا آخر میں عین آتا ہے وہاں اس کی الگ آواز کو ادا کرنا ضروری ہو جاتا ہے بعض اوقات عین الف کے ساتھ بھی آتا ہے جیسے عادت یا وداع اس جگہ لکھاوٹ میں عین کو الف سے الگ کرنے کی ضرورت پڑتی ہے۔ یہی وجہ ہے کہ پیش نظر دیوان میں الف کے لئے (अ) اور عین کے لئے (अ') کی علامت استعمال کی گئی ہے۔

عین دوسرے حرفوں کی طرح متحرک بھی آتا ہے اور ساکن بھی۔ متحرک عین کے لکھنے میں کوئی دشواری نہیں ہے اور اسے ہر جگہ (अ़) لکھا گیا ہے۔

ساکن عین جو ہمیشہ لفظ کے آخر یا بیچ میں آتا ہے اس کے لئے یہ طریقہ اختیار کیا گیا ہے کہ لفظ کے آخر میں پورا عین لکھ دیا گیا ہے جیسے

बहस है जो और के अर्थ में प्रयुक्त होता है। जैसे "गुल और बुलबुल" की जगह गुल-ओ-बुलबुल।

इज़ाफ़त एक शब्द से दूसरे शब्द का सम्बन्ध प्रकट करती है। इज़ाफ़त की 'अलामत ज़ेर से लिखी जाती है जो अक्षर के नीचे लगाया जाता है और उसके प्रयोग से गुल का रँग "रँग-ए-गुल" और ग़ालिब का दीवान "दीवान-ए-ग़ालिब" हो जाता है।

नागरी में 'अत्फ़ और इज़ाफ़त के लिखने के जो तरीक़े प्रचलित हैं, वह दोषपूर्ण हैं। उनसे शब्दों का मूल-रूप बिगड़ जाता है और कभी कभी अर्थ का अनर्थ हो जाने की आशंका होती है। जैसे साधारणत: "गुल और बुलबुल" को लिखने के लिए "गुलो बुलबुल" लिखा जाता है या गुल व बुलबुल। एक में गुल का रूप बिगड़ गया है और दूसरे में उच्चारण की अशुद्धि की सम्भावना है।

इस दीवान में 'अत्फ़ के वाव (و) के लिए -ओ- की 'अलामत अपनाई गई है और "गुल-ओ-बुलबुल" लिखा गया है।

इज़ाफ़त के लिए -ए- की 'अलामत अपनाई गई है। और दीवाने ग़ालिब के बजाय जिसका अर्थ पागल ग़ालिब भी हो सकता है, "दीवान-ए-ग़ालिब" लिखा गया है। इस तरह शब्द का मूल-रूप बाक़ी रहता है और इज़ाफ़त का ज़ेर ये (ے) में नहीं बदलता।

उर्दू के तीन अक्षरों के लिए भी नये चिह्नों से काम लिया गया है। एक श़ (ژ) दूसरे 'ऐन (ع) और तीसरे छोटी हे (ہ)

जिस अक्षर को उर्दू में (ژ) लिखते हैं उसकी आवाज़ हिन्दी में मौजूद नहीं है यह ज और श के बीच की आवाज़ है। इसलिए श के नीचे बिन्दी लगादी गई है (श़)

'ऐन (ع) की आवाज़ उर्दू में अलिफ़ (ا) की आवाज़ से मिल गई है इसलिए नागरी लिपि में साधारणत: दोनों अक्षरों को एक ही तरह लिखा जाता है। जिन शब्दों के आरम्भ में 'ऐन आता है उन में कोई बाधा नहीं आती। जैसे "आशिक़" और "औरत"। लेकिन जिन शब्दों के अन्त में या बीच में 'ऐन आता है वहाँ उसकी अलग आवाज़ का प्रकट करना आवश्यक हो जाता है। कभी कभी 'ऐन अलिफ़ के साथ भी आता है। जैसे 'आदत या विदा'अ। इस जगह लिखावट में 'ऐन को अलिफ़ से अलग करने की ज़रूरत पड़ती है। यही कारण है कि इस दीवान में अलिफ़ (ا) के लिए (अ) और 'ऐन (ع) के लिए ('अ) की 'अलामत प्रयोग की गई है।

'ऐन दूसरे अक्षरों की तरह गतिवान भी आता है और गतिहीन भी। गतिवान 'ऐन के लिखने में कोई कठिनाई नहीं आती और उसे हर जगह

شمع(शम्‘ऄ) یا وداع (विदा‘ऄ) ، لیکن جہاں کہیں لفظ کے بیچ میں ساکن عین آیا ہے وہاں (ऄ) کی علامت خارج کردی گئی ہے اور صرف الٹا واؤ باقی رکھا گیا ہے جیسے بعد (बा‘द) یا معنی (मा‘नी) یا ضعف (ज़ो‘फ़) . اگر ان لفظوں سے الٹا واؤ جو ساکن عین کی علامت ہے خارج کر دیا جائے تو بعض لفظوں کی شکل ایسی بدلے گی کہ ان کا مطلب کچھ کا کچھ ہو جائے گا. بعد (बा‘द) باد (बाद) ہوجائے گا یعنی ہوا اور معنی (मा‘नी) مانی (मानी) ہو جائے گا جو ایران کے ایک قدیم مصور کا نام ہے .

عین پر ختم ہونے والے لفظوں پر جب اضافت لگ جاتی ہے تو ساکن عین پھر متحرک ہو جاتا ہے . لیکن چونکہ اضافت کے لئے ایک الگ علامت ہے اس لئے ایسے لفظوں کے آخر میں آنے والے عین سے بھی (ऄ) کی علامت خارج کر کے صرف اُلٹا واؤ باقی رکھا گیا ہے. مثال کے طور پر وداع (विदा‘ऄ) کو جب اضافت کے ساتھ لکھیں گے تو وہ (विदा‘ए-) ہو جائے گا. یہی طریقہ عطف کی صورت میں بھی صحیح ہے . شمع (शम्‘ऄ) کا لفظ اضافت کے ساتھ (शम्‘-ए-) اور عطف کے ساتھ (शम‘-ओ) ہو جائے گا.

اردو میں ایک بڑی ح ہے اور ایک چھوٹی ہ . دونوں کی اصلی آوازیں الگ الگ ہیں لیکن اردو میں ایک ہو گئی ہیں. اس لئے ناگری میں ان دونوں کے لئے یہ ह کافی ہے . لیکن اردو میں آجانے والے بعض بیرونی لفظوں کے آخر میں جب چھوٹی ہ آتی ہے تو یہ زبر کی آواز دیتی ہے جو الف کی آواز کو چھوٹا کر دینے سے پیدا ہوگی جیسے ہفتہ (हफ़ता) گلدستہ (गुलदसता) نغمہ (नग़मा) بادہ (बादा) . اس ہ کی آواز کو الف سے تبدیل کیا جا سکتا ہے لیکن ایسا کرنے سے بعض مقامات پر اضافت میں دشواری پیدا ہو جائے گی . مثلاً اگر (नग़मा) لکھا جائے تو اضافت کے بعد اس کی شکل (नग़मा-ए-) ہوگی . اور اس کا تلفظ بجائے نغمہ اے (नग़मऄ) کے نغمائے (नग़माऄ) ہو جائے گا . یہی وجہ ہے کہ اس ہ کے لئے وسرگ (:) کا استعمال کیا گیا ہے جس کی اصل آواز سنسکرت میں چھوٹی ہ کی آواز ہے . اس دیوان میں ہر جگہ وسرگ (:) کو ہا کے بجائے ا (ऄ) پڑھنا چاہئے جو اردو میں الف کی نہیں بلکہ زبر کی آواز ہے . اب (नग़म:-ए-) لکھا جائے گا تو (नग़मऄ) پڑھا جائے گا .

کوئی لکھاوٹ مکمل نہیں ہے اور انسان کے گلے اور منہ سے نکلنے والی تمام آوازوں کے ادا کرنے پر قادر نہیں ہے کیونکہ انسان کے ذہن کی طرح انسان کا گلا بھی لامحدود صلاحیتوں کا مالک ہے اردو کے وہ الفاظ جن

(ʻअ) लिखा गया है।

गतिहीन ʻऐन जो हमेशः शब्द के अन्त या बीच में आता है उस के लिए यह तरीक़ः अपनाया गया है कि शब्द के अन्त में पूरा ʻऐन लिखा गया है। जैसे शम्ʻअ या विदाʻअ। लेकिन जहाँ कहीं शब्द के बीच में गतिहीन ʻऐन आया है वहाँ अ की ʻअलामत निकाल दी गई है और केवल (ʻ) बाक़ी रखा गया है। जैसे बाʻद (بعد) या माʻनी (معنی) या ज़ोʻफ़ (ضعف)। यदि इन शब्दों में से (ʻ) जो गतिहीन ʻऐन की ʻअलामत है, निकाल दिया जाय तो कुछ शब्दों का रूप ऐसा बदलेगा कि उनका मतलब कुछ का कुछ हो जायगा। बाʻद (بعد) बाद (باد) हो जायगा, याʻनी हवा और माʻनी (معنی) मानी (مانی) हो जायगा जो ईरान के एक प्राचीन चित्रकार का नाम है।

ʻऐन पर ख़त्म होनेवाले शब्दों पर जब इज़ाफ़त लग जाती है तो गतिहीन ʻऐन फिर गतिवान हो जाता है, लेकिन चूँकि इज़ाफ़त के लिए दूसरा चिन्ह प्रयोग में लाया गया है इसलिए ऐसे शब्दों के अन्त में आने वाले ʻऐन से भी (अ) की ʻअलामत ख़ारिज कर के केवल (ʻ) बाक़ी रखा गया है। उदाहरण के लिए (विदाʻअ) को जब इज़ाफ़त के साथ लिखेंगे तो वह (विदाʻ-ए-) हो जायगा। यही तरीक़ः ʻअत्फ़ की सूरत में भी सही है। शम्ʻअ का शब्द इज़ाफ़त के साथ (शमʻ-ए-) और अत्फ़ के साथ (शमʻ-ओ-) हो जायगा।

उर्दू में एक बड़ी हे (ح) है और एक छोटी हे (ه)। दोनों की आवाज़ें अलग-अलग हैं, लेकिन उर्दू में एक हो गई हैं। इसलिए नागरी में इन दोनों के लिए (ह) काफ़ी है। लेकिन उर्दू में आजानेवाले कुछ विदेशी शब्दों के अन्त में जब छोटी हे (ه) आती है तो यह ज़बर की आवाज़ देती है जो अलिफ़ की आवाज़ को छोटा कर देने से पैदा होगी। जैसे हफ़्तः (ہفتہ) गुलदस्तः (گلدستہ) नग़मः (نغمہ) बादः (بادہ)। इस हे (ه) की आवाज़ को अलिफ़ से बदला जा सकता है। लेकिन ऐसा करने से कई स्थानों पर इज़ाफ़त में कठिनाई पैदा हो जायगी। मसलन यदि (नग़मा) लिखा जाय तो इज़ाफ़त के बाʻद उसका रूप (नग़मा-ए-) होगा और उसका उच्चारण (नग़मये) के बजाय (नग़माये) हो जायगा। यही कारण है कि इस हे (ه) के लिए विसर्ग (:) का उपयोग किया गया है, जिसकी मूल आवाज़ संस्कृत में छोटी हे की आवाज़ है। इस दीवान में विसर्ग को हर जगह ह के बजाय अ पढ़ना चाहिये जो उर्दू में अलिफ़ की नहीं बल्कि ज़बर की आवाज़ है। अब (नग़मः-ए-) लिखा जाय तो (नग़मये) पढ़ा जायगा।

कोई लिपि पूर्ण नहीं है और इंसान के गले और मुख से निकलने वाली

کا دوسرا حرف بڑی ح ہو اور یہ ح ساکن ہو اور پہلے حرف پر زبر ہو تو اُسے زبر نہیں بولا جاتا بلکہ اس کی آواز زبر اور زیر کے درمیان ہوتی ہے۔ جیسے احمد (अह्मद) محبوب (मह्बूब) بحر (बह्) اور وحشت (वह्शत) ان کا تلفظ کرتے وقت پہلے حرف کو ہمیشہ अ اور ऐ کے درمیان بولنا چاہئے۔ بعض اوقات چھوٹی ہ کے لفظوں کے ساتھ بھی یہی صورت پیش آتی ہے جیسے قہر (क़ह्र)

اردو کی ایک اور خصوصیت یہ ہے کہ شاعری میں بعض الفاظ کی یائے مجہول کو خارج کر کے اُسے زیر سے تبدیل کردیا جاتا ہے۔ اس طرح آواز چھوٹی ہو جاتی ہے۔ مثلاً ایک اور میرے سے جب یائے مجہول خارج ہوتی ہے تو «اے» (ऐ) کی آواز چھوٹی ہو جاتی ہے اور اسے اک اور مرے لکھا جاتا ہے۔ ناگری میں اس آواز کو جو دراصل زیر کی خالص آواز ہے ادا کرنے کا کوئی طریقہ نہیں ہے۔ اس لئے مجبوراً ایسے مقامات پر چھوٹی «ای» کی علامت استعمال کی گئی ہے جیسے (इक) اور (मिरे)۔ یہی صورت بعض اوقات مجہول واؤ کے ساتھ بھی پیش آتی ہے جہاں واؤ کی پوری آواز کٹ کر پیش کی آواز میں تبدیل ہو جاتی ہے۔ جیسے کوہسار (कोहसार) سے کُہسار۔ اس کو مجبوراً कुहसार لکھا گیا ہے۔

میری رائے یہ ہے کہ ناگری لکھاوٹ کی ماتراؤں میں اردو کے زیر (ِ) اور پیش (ُ) کو شامل کر لینا چاہئے۔ چونکہ زبر جس کی شکل زیر کی طرح ہوتی ہے لیکن نیچے کے بجائے ہمیشہ حرف کے اوپر لکھا جاتا ہے ناگری حروف میں خود بخود موجود ہوتی ہے۔ اس لئے اس علامت کو ناگری ماتراؤں میں شامل کرنے کی ضرورت نہیں ہے۔ البتہ کسی حرف سے زبر کی حرکت کو خارج کرنے کے لئے ہلنت لگا دینا چاہئے جیسا کہ شمع کے ما (शम्'अ) اور بحر کے حا (बह्र) میں لگایا گیا ہے۔

اس طرح ناگری لکھاوٹ اردو کی آوازوں کو بڑی حد تک ادا کرنے پر قادر ہوجائے گی۔

ناگری لکھاوٹ میں اضافوں اور تبدیلیوں کی جو تجویز یہاں پیش کی گئی ہے ممکن ہے کہ ہندی کے بعض حلقوں میں اسے قابل قبول نہ سمجھا جائے لیکن اتنا یقین ہے کہ یہ تجویز ان حلقوں کو بھی دعوت فکر ضرور دے گی اور اس طرح ناگری لکھاوٹ کے بعض دوسرے مسائل بھی جنھیں میں نے یہاں نہیں چھیڑا ہے زیر غور اور زیر بحث آئیں گے۔

सब आवाजों को व्यक्त करने में समर्थ नहीं है क्योंकि मानव मस्तिष्क की तरह मानव कंठ भी असीमित योग्यता का मालिक है। उर्दू के वे शब्द जिनका दूसरा अक्षर बड़ी हे (ح) हो और यह हे (ح) गतिहीन हो और पहले अक्षर पर जबर हो तो उसे जबर नहीं बोला जाता बल्कि उस की आवाज जबर और जेर के बीच में होती है। जैसे अह्मद, मह्बूब, बह्र, वह्शत वग़ैर:। इनका उच्चारण करते समय पहले अक्षर को हमेश: अ और ए के बीच बोलना चाहिये। कभी कभी छोटी हे (ہ) के शब्दों के साथ भी यही होता है। जैसे क़ह्र।

उर्दू की एक और विशेषता यह है कि शा'अिरी में कुछ शब्दों की याये मज्हूल (मोटी आवाज देनेवाली ये) को ख़ारिज करके उसे जेर से बदल दिया जाता है। इस तरह आवाज छोटी हो जाती है। उदाहरण के लिए एक (ایک) और मेरे (میرے) से जब याये मज्हूल ख़ारिज होती है तो 'ए' की आवाज छोटी हो जाती है। और इसे (اک) और (مرے) लिखा जाता है। नागरी में इस आवाज को जो वास्तव में जेर की ख़ालिस आवाज है, व्यक्त करने का कोई तरीक़: नहीं। इसलिये मजबूरन ऐसे स्थानों पर इ की अलामत प्रयोग में लाई गई है। जैसे (इक) और (मिरे) यही सूरत कहीं कहीं वाव के साथ भी पेश आती है जहाँ उसकी पूरी आवाज कट कर पेश की आवाज में बदल जाती है। जैसे कोहसार کوہسار से کہسار इसको मजबूरन (कुह्सार) लिखा गया है।

मेरी राय यह है कि नागरी लिपि की मात्राओं में उर्दू के जेर (ِ) और पेश (ُ) को सम्मिलित कर लेना चाहिये। चूँकि जबर जिसका रूप जेर जैसा ही होता है और अक्षर के ऊपर लगाया जाता है, नागरी अक्षरों में सम्मिलित होता है, इसलिये इसे नागरी लिपि की मात्राओं में सम्मिलित करने की जरूरत नहीं। अलबत्त: किसी अक्षर से जबर की हरकत को ख़ारिज करने के लिए उसके नीचे हलन्त लगादेना चाहिये। जैसे (शम्'अ) के म और (बह्र) के "ह" में लगाया गया है।

इस तरह नागरी लिपि उर्दू की आवाजों को बड़ी हद तक व्यक्त करने में समर्थ हो जायगी।

नागरी लिपि में संशोधन और परिवर्द्धन का जो प्रस्ताव यहाँ पेश किया गया है, सम्भव है कि हिन्दी के कुछ क्षेत्रों में इसे स्वीकार करने योग्य न समझा जाय। लेकिन यह विश्वास है कि यह प्रस्ताव उन लोगों को भी सोचने का अवसर अवश्य देगा और इस प्रकार नागरी लिपि के दूसरे प्रश्नों पर भी, जिन्हें मैंने यहाँ नहीं छेड़ा है, विचार-विनिमय और वाद-विवाद हो सकेगा।

آخر میں اُن سب دوستوں کا شکریہ ادا کرنا میرا انتہائی خوشگوار فرض ہے جن کے تعاون سے دیوان غالب کا پیش نظر نسخہ شائع ہوا ہے۔ سب سے پہلے میں لالہ یودھراج کا شکرگذار ہوں جن کی سخاوت اور دریا دلی سے ہندوستانی بک ٹرسٹ وجود میں آیا، دیوان غالب اس ٹرسٹ کی پہلی کتاب ہے میر، اقبال اور اُردو کے دوسرے برگزیدہ شعرا کے انتخابات آئندہ شائع ہونگے میرے محترم دوست شہاب الدین دسنوی صاحب نے اپنی انتہائی مصروفیات کے باوجود ہندوستانی بک ٹرسٹ کے قیام اور دیوان کی طباعت میں جس طرح کوشش کی ہے اور اپنا قیمتی وقت دیا ہے اس کی تعریف کے لئے الفاظ ناکافی ہیں۔ جناب وی۔ شنکر صاحب کے قیمتی مشوروں کے ساتھ ساتھ جو کام کرنے والوں کی رہنمائی اور ہمت افزائی کا باعث ہوئے ڈاکٹر ملک راج آنند اور موصوف کی رفیق‌کار مس سیّار کے مشوروں سے دیوان غالب کا ہر صفحہ آراستہ ہے، اور اس کی یہ حسین وجمیل شکل و صورت اُنھیں کی کاوشوں کا نتیجہ ہے۔ میں مالک رام صاحب کا بھی شکرگذار ہوں جنھوں نے اپنے مرتب کئے ہوئے دیوان غالب کو استعمال کرنے کی اجازت دے کر میرے کام کو بہت آسان بنادیا، مغنی صاحب نے غزلوں کو دیوناگری میں منتقل کیا اور ہر صفحے کی تصحیح کی اور پریم سروپ شرما صاحب نے ہندی فرہنگ مرتب کرنے میں میرا ہاتھ بٹایا۔ ان دونوں دوستوں کی امداد کے بغیر اس فرض سے سبکدوش ہونا میرے لئے ناممکن تھا۔

ادبی پرنٹنگ پریس کے تمام کارکن میرے شکریے کے خاص طور سے مستحق ہیں انھوں نے دن رات ایک کرکے دیوان غالب اتنی نفاست کے ساتھ چھاپا ہے اور اپنے لئے اور اپنے پریس کے لئے دلوں کے اندر جگہ پیدا کرلی ہے۔

خدا کرے اس دیوان کی اشاعت سے ہندی والوں اور اُردو والوں کے دلوں میں محبت کے نئے پھول کھلیں اور ہمارا وطن اور ہماری زبان ان کی خوشبو سے مہک اُٹھے۔

بمبئی
جولائی ۱۹۵۸ء

سردار جعفری

अन्त में उन सब मित्रों के प्रति आभार प्रकट करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष होता है जिनके सहयोग से दीवान-ए-ग़ालिब का प्रस्तुत संस्करण प्रकाशित हुआ है। सबसे पहिले मैं लाला योधराज का आभारी हूँ जिनकी उदारता और विशाल हृदयता से हिन्दुस्तानी बुक ट्रस्ट अस्तित्व में आया। दीवान-ए-ग़ालिब इस ट्रस्ट का प्रथम ग्रन्थ है। मीर, इक़बाल और उर्दू के दूसरे महान कवियों के संकलन भविष्य में प्रकाशित होंगे। मेरे आदरणीय मित्र श्री शहाबुद्दीन देस्नवी ने अपनी अत्यन्त व्यस्तता के बावजूद हिन्दुस्तानी बुक ट्रस्ट के स्थापन और दीवान के मुद्रण में जिस तरह प्रयत्न किया है और अपना बहुमूल्य समय दिया है उसकी प्रशंसा के लिये शब्द नाकाफ़ी हैं। श्री वी. शंकर के क़ीमती मशवरों के साथ-साथ जो काम करनेवालों के मार्गदर्शन और उत्साहवर्धन का कारण हुए, डाक्टर मुल्कराज आनन्द और उनकी सहयोगिनी मिस सैयार के परामर्श से दीवान-ए-ग़ालिब का हर पृष्ठ सुसज्जित है और इसका यह सुन्दर और मनोहर रूप उन्हीं के प्रयत्नों का नतीज: है। मैं श्री मालिक राम का भी आभारी हूँ, जिन्होंने अपने सम्पादित दीवान-ए-ग़ालिब का उपयोग करने की अनुमति देकर मेरे काम को बहुत आसान बना दिया। श्री मुग़नी अमरोहवी ने ग़ज़लों को देवनागरी में लिपिबद्ध किया और हर पृष्ठ का संशोधन किया और श्री प्रेम स्वरूप शर्मा ने शब्दावली सम्पादित करने में मेरा हाथ बटाया। इन दोनों मित्रों के सहयोग के बिना इस कर्तव्य से भारमुक्त होना मेरे लिये असम्भव था।

अदबी प्रिंटिंग प्रेस के सभी कार्यकर्ता विशेष रूप से मेरे धन्यवाद के अधिकारी हैं। उन्होंने दिन रात एक करके दीवान-ए-ग़ालिब इतनी स्वच्छता के साथ छापा है और अपने और अपने प्रेस के लिए दिलों के अन्दर जगह पैदा करली है।

ख़ुदा करे इस दीवान के प्रकाशन से हिन्दी वालों और उर्दू वालों के दिलों में प्रेम के नये पुष्प खिलें और हमारा देश और हमारी भाषा उन की सुगंध से महक उठे।

बम्बई — सरदार जा'फ़री

जुलाई १९५८

غزلیں

लिखावट और उच्चारण का नक़्शः

श़ ژ	'ऐन ع
ज और श के बीच की आवाज़	'अ (पूरा) ' (आधा)

छोटी हे [ः] [ه]

लिखावट		उच्चारण
नग़मः	अ	नग़मा
नग़मः-ए-	अए	नग़मए
नग़मः-ओ-	अओ	नग़मओ

'अत्फ़ [-ओ-] [و] عطف

(दो शब्दों का जोड़)

गुल-ओ-बुलबुल	ओ	गुलो-बुलबुल
लालः-ओ-गुल	अओ	लालओ-गुल
अदा-ओ-नाज़	आओ	अदाओ-नाज़

इज़ाफ़त [-ए-] [ِ] اضافت

(दो शब्दों का संबंध)

ग़म-ए-दिल	ए	ग़मे-दिल
नग़मः-ए-दिल	अए	नग़मए-दिल
हवा-ए-दिल	आए	हवाए-दिल

۱
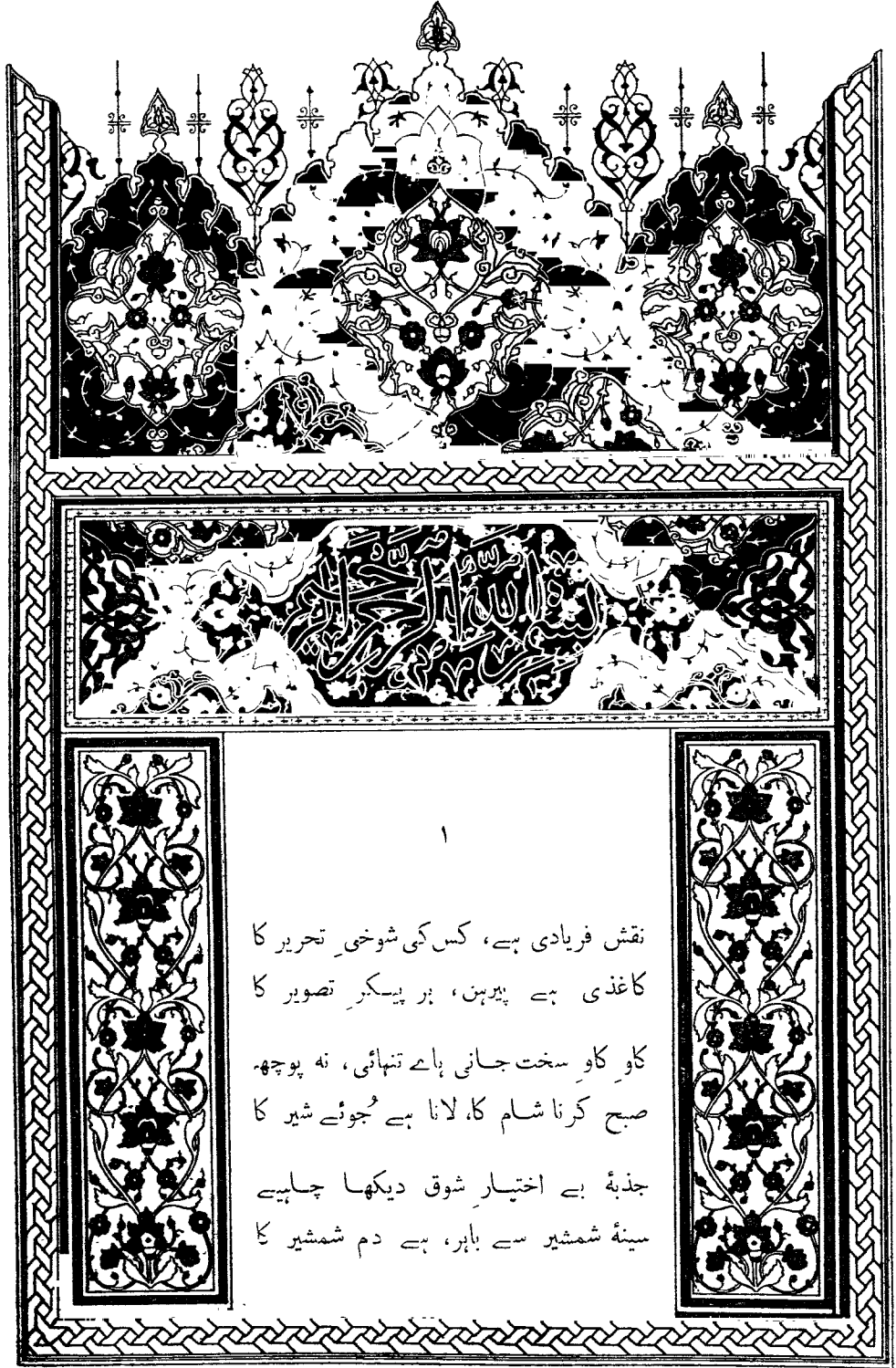
نقش فریادی ہے، کس کی شوخیِ تحریر کا
کاغذی ہے پیرہن، ہر پیکرِ تصویر کا

کاوِ کاوِ سخت جانی ہائے تنہائی، نہ پوچھ
صبح کرنا شام کا، لانا ہے جوئے شیر کا

جذبۂ بے اختیارِ شوق دیکھا چاہیے
سینۂ شمشیر سے باہر، ہے دم شمشیر کا

१

नक़्श फ़रियादी है, किसकी शोख़ि-ए-तहरीर का
कागज़ी है पैरहन, हर पैकर-ए-तस्वीर का

काव-ए-काव-ए-सख़्त जानीहा-ए-तन्हाई न पूछ
सुब्ह करना शाम का, लाना है जू-ए-शीर का

जज़्ब:-ए-बे इख़्तियार-ए-शौक़ देखा चाहिये
सीन:-ए-शमशीर से बाहर है, दम शमशीर का

آ گہی، دامِ شنیدن، جس قدر چاہے، بچھائے
مدعا عنقا ہے اپنے عالمِ تقریر کا

بس کہ ہوں، غالب اسیری میں بھی آتش زیرِ پا
موئے آتش دیدہ ہے حلقہ مری زنجیر کا

۲

جراحت تحفہ، اَلماس ارمغاں، داغِ جگر ہدیہ
مبارک باد اسد، غمخوارِ جانِ دردمند آیا

۳

جز قیس اور کوئی نہ آیا، بروئے کار
صحرا، مگر، بہ تنگیِ چشمِ حسود تھا

آشفتگی نے نقشِ سویدا کیا درست
ظاہر ہوا، کہ داغ کا سرمایہ دود تھا

تھا خواب میں، خیال کو تجھ سے معاملہ
جب آنکھ کھل گئی، نہ زیاں تھا، نہ سود تھا

لیتا ہوں مکتبِ غمِ دل میں سبق ہنوز
لیکن یہی کہ، رفت گیا، اور بود تھا

आगही, दाम-ए-शनीदन, जिस क़दर चाहे, बिछाये
मुद्द'आ 'अंक़ा है, अपने 'आलम-ए-तक़रीर का

बसकि हूँ, ग़ालिब, असीरी में भी आतश ज़ेर-ए-पा
मू-ए-आतश दीद:, है हल्क़: मिरी ज़ंजीर का

२

जराहत तोह्फ़:, अल्मास अर्मुग़ाँ, दाग़-ए-जिगर हदिय:
मुबारकबाद असद, ग़मख़्वार-ए-जान-ए-दर्दमन्द आया

३

जुज़ क़ैस और कोई न आया, ब रू-ए-कार
सह्रा, मगर, ब तँगि-ए-चश्म-ए-हुसूद था

आशुफ़्तगी ने नक़्श-ए-सुवैदा किया दुरुस्त
ज़ाहिर हुआ, कि दाग़ का सरमाय: दूद था

था ख़्वाब में, ख़याल को तुझसे मु'आमल:
जब आँख खुल गई, न ज़ियाँ था न सूद था

लेता हूँ मक्तब-ए-ग़म-ए-दिल में सबक़ हनोज़
लेकिन यही कि, रफ़्त गया, और बूद था

شورِ پندِ ناصح نے زخم پر نمک چھڑکا
آپ سے کوئی پوچھے، تم نے کیا مزا پایا

۵

دل مرا، سوزِ نہاں سے، بے محابا جل گیا
آتشِ خاموش کی مانند گویا جل گیا

دل میں، ذوقِ وصل و یادِ یار تک، باقی نہیں
آگ اس گھر میں لگی ایسی، کہ جو تھا جل گیا

میں عدم سے بھی پرے ہوں، ورنہ غافل، بارہا
میری آہِ آتشیں سے، بالِ عنقا جل گیا

عرض کیجے، جوہرِ اندیشہ کی گرمی کہاں،
کچھ خیال آیا تھا وحشت کا، کہ صحرا جل گیا

دل نہیں، تجھ کو دکھاتا ورنہ، داغوں کی بہار
اس چراغاں کا، کروں کیا، کار فرما جل گیا

میں ہوں اور افسردگی کی آرزو، غالب، کہ دل
دیکھ کر طرزِ تپاکِ اہلِ دنیا جل گیا

शोर-ए-पन्द-ए-नासेह ने ज़ख़्म पर नमक छिड़का
आप से कोई पूछे, तुम ने क्या मज़ा पाया

५

दिल मिरा, सोज़-ए-निहाँ से, बेमहाबा जल गया
आतश-ए-ख़ामोश की मानिन्द गोया जल गया

दिल में, ज़ौक़-ए-वस्ल-ओ-याद-ए-यार तक, बाक़ी नहीं
आग इस घर में लगी ऐसी कि जो था जल गया

मैं 'अदम से भी परे हूँ, वर्नः ग़ाफ़िल, बारहा
मेरी आह-ए-आतशीं से, बाल-ए-'अंक़ा जल गया

अर्ज़ कीजे, जौहर-ए-अन्देशः की गर्मी कहाँ
कुछ ख़याल आया था वहशत का, कि सहरा जल गया

दिल नहीं, तुझको दिखाता वर्नः, दाग़ों की बहार
इस चराग़ाँ का, करूँ क्या, कारफ़रमा जल गया

मैं हूँ और अफ़सुर्दगी की आरज़ू, ग़ालिब, कि दिल
देख कर तर्ज़-ए-तपाक-ए-अहल-ए-दुनिया जल गया

۶

شوق ہر رنگ، رقیبِ سر و ساماں نکلا
قیس تصویر کے پردے میں بھی عریاں نکلا

زخم نے داد نہ دی تنگیِ دل کی، یارب
تیر بھی سینۂ بسمل سے پرافشاں نکلا

بوے گل، نالۂ دل، دودِ چراغِ محفل
جو تری بزم سے نکلا، سو پریشاں نکلا

دلِ حسرت زدہ، تھا مایدۂ لذتِ درد
کام یاروں کا، بقدرِ لب و دنداں نکلا

تھی نو آموزِ فنا، ہمتِ دشوار پسند
سخت مشکل ہے، کہ یہ کام بھی آساں نکلا

دل میں، پھر گریے نے اک شور اٹھایا غالب
آہ، جو قطرہ نہ نکلا تھا، سو طوفاں نکلا

۷

دھمکی میں مر گیا، جو نہ بابِ نبرد تھا
عشقِ نبرد پیشہ، طلب گارِ مرد تھا

६

शौक़ हर रंग, रक़ीब-ए-सर-ओ-सामाँ निकला
क़ैस तस्वीर के पर्दे में भी 'अुरियाँ निकला

ज़ख़्म ने दाद न दी तंगि-ए-दिल की यारब
तीर भी सीनः-ए-बिस्मिल से परअफ़शाँ निकला

बू-ए-गुल, नालः-ए-दिल, दूद-ए-चराग़-ए-महफ़िल
जो तिरी बज़्म से निकला, सो परीशाँ निकला

दिल-ए-हसरतज़दः था मायदः-ए-लज़्ज़त-ए-दर्द
काम यारों का, बक़द्र-ए-लब-ओ-दन्दाँ निकला

थी नौआमोज़-ए-फ़ना, हिम्मत-ए-दुश्वार पसन्द
सख़्त मुश्किल है, कि यह काम भी आसाँ निकला

दिल में फिर गिरिये ने इक शोर उठाया, ग़ालिब
आह जो क़तरः न निकला था, सो तूफ़ाँ निकला

७

धमकी में मर गया, जो न बाब-ए-नबर्द था
'अिश्क़-ए-नबर्द पेशः, तलबगार-ए-मर्द था

تھا زندگی میں مرگ کا کھٹکا لگا ہوا
اُڑنے سے پیشتر بھی مرا رنگ زرد تھا

تالیفِ نسخہائے وفا کررہا تھا میں
مجموعۂ خیال ابھی فرد فرد تھا

دل تا جگر کہ ساحلِ دریائے خوں ہے اب
اس رہ گزر میں جلوۂ گل آگے گرد تھا

جاتی ہے کوئی کشمکش اندوہِ عشق کی،
دل بھی اگر گیا، تو وہی دل کا درد تھا

احباب چارہ سازیِ وحشت نہ کرسکے
زنداں میں بھی خیال، بیاباں نورد تھا

یہ لاشِ بے کفن، اسدِ خستہ جاں کی ہے
حق مغفرت کرے، عجب آزاد مرد تھا

۸

شمارِ سبحہ، مرغوبِ بتِ مشکل پسند آیا
تماشائے بہ یک کف بردنِ صد دل، پسند آیا

بہ فیضِ بے دلی، نومیدیِ جاوید آساں ہے
کشایش کو ہمارا عقدۂ مشکل پسند آیا

था ज़िन्दगी में मर्ग का खटका लगा हुआ
उड़ने से पेश्तर भी मिरा रंग ज़र्द था

तालीफ़-ए-नुस्ख़हा-ए-वफ़ा कर रहा था मैं
मजमूʻअ:-ए-ख़याल अभी फ़र्द फ़र्द था

दिल ता जिगर कि साहिल-ए-दरिया-ए-ख़ूँ है अब
इस रहगुज़र में जलव:-ए-गुल आगे गर्द था

जाती है कोई कशमकश अन्दोह-ए-ʻअिश्क़ की
दिल भी अगर गया, तो वही दिल का दर्द था

अहबाब चार: - साज़ि-ए-वहशत न कर सके
ज़िन्दाँ में भी ख़याल, बयाबाँ नवर्द था

यह लाश-ए-बेकफ़न, असद-ए-ख़स्त: जाँ की है
हक़ मग़्फ़िरत करे, ʻअजब आज़ाद मर्द था

८

शुमार-ए-सबह:, मर्ग़ूब-ए-बुत-ए-मुश्किल-पसन्द आया
तमाशा-ए-बयक कफ़ बुर्दन-ए-सद् दिल पसन्द आया

ब फ़ैज़-ए-बेदिली, नौमीदि-ए-जावेद आसाँ है
कशायश को हमारा ʻअुक़्द:-ए-मुश्किल-पसन्द आया

ہوائے سیرِ گل، آئینۂ بے مہریِ قاتل
کہ اندازِ بخوں غلطیدنِ بسمل پسند آیا

۹

دہر میں، نقشِ وفا، وجہِ تسلّی نہ ہوا
ہے یہ وہ لفظ، کہ شرمندۂ معنی نہ ہوا

سبزۂ خط سے، ترا کاکلِ سر کش نہ دبا
یہ زمرد بھی حریفِ دمِ افعی نہ ہوا

میں نے چاہا تھا کہ اندوہِ وفا سے چھوٹوں
وہ ستم گر مرے مرنے پہ بھی راضی نہ ہوا

دل گذر گاہِ خیالِ مے و ساغر ہی سہی
گر نفس جادۂ سر منزلِ تقویٰ نہ ہوا

ہوں ترے وعدہ نہ کرنے میں بھی راضی، کہ کبھی
گوش منت کشِ گلبانگِ تسلّی نہ ہوا

کس سے محرومیِ قسمت کی شکایت کیجے
ہم نے چاہا تھا کہ مر جائیں، سو وہ بھی نہ ہوا

مر گیا صدمۂ یک جنبشِ لب سے غالب
ناتوانی سے حریفِ دمِ عیسیٰ نہ ہوا

हवा-ए-सैर-ए-गुल, आईन:-ए-बेमेहरि-ए-क़ातिल
कि अन्दाज़-ए-बख़ूँ ग़लतीदन-ए-बिस्मिल पसन्द आया

९

दहर में, नक़्श-ए-वफ़ा, वज्ह-ए-तसल्ली न हुआ
है यह वह लफ़्ज़, कि शर्मिन्द:-ए-म'अनी न हुआ

सब्ज़:-ए-ख़त से तिरा, काकुल-ए-सरकश न दबा
यह ज़मर्रुद भी हरीफ़-ए-दम-ए-अफ़'ई न हुआ

मैं ने चाहा था कि अन्दोह-ए-वफ़ा से छूटूँ
वह सितमगर मिरे मरने प भी राज़ी न हुआ

दिल गुज़रगाह-ए-ख़याल-ए-मै-ओ-साग़र ही सही
गर नफ़स जाद:-ए-सरमंज़िल-ए-तक़्वा न हुआ

हूँ तिरे व'अद: न करने में भी राज़ी, कि कभी
गोश मिन्नत-कश-ए-गुलबाँग-ए-तसल्ली न हुआ

किससे महरूमि-ए-क़िस्मत की शिकायत कीजे
हमने चाहा था कि मर जायें, सो वह भी न हुआ

मर गया सदम:-ए-यक जुंबिश-ए-लब से ग़ालिब
नातवानी से हरीफ़-ए-दम-ए-'ईसा न हुआ

۱۰

ستایش گر ہے زاہد اس قدر، جس باغِ رضواں کا
وہ اک گلدستہ ہے ہم بیخودوں کے طاقِ نسیاں کا

بیاں کیا کیجیے بیدادِ کاوش ہائے مژگاں کا
کہ ہر اک قطرۂ خوں، دانہ ہے تسبیحِ مرجاں کا

نہ آئی سطوتِ قاتل بھی مانع، میرے نالوں کو
لیا دانتوں میں جو تنکا، ہوا ریشہ نیستاں کا

دکھاؤں گا تماشا، دی اگر فرصت زمانے نے
مرا ہر داغِ دل، اک تخم ہے سروِ چراغاں کا

کیا آئینہ خانے کا وہ نقشہ، تیرے جلوے نے
کرے، جو پرتوِ خورشید، عالم شبنمستاں کا

مری تعمیر میں مضمر، ہے اک صورت خرابی کی
ہیولیٰ برقِ خرمن کا، ہے خونِ گرم دہقاں کا

اُگا ہے گھر میں ہر سو سبزہ، ویرانی تماشا کر
مدار، اب کھودنے پر گھاس کے ہے، میرے درباں کا

خموشی میں نہاں، خوں گشتہ لاکھوں آرزوئیں ہیں
چراغِ مُردہ ہوں، میں بے زباں، گورِ غریباں کا

१०

सताइशगर है ज़ाहिद इस क़दर, जिस बाग़-ए-रिज़्वाँ का
वह इक गुलदस्तः है हम बेख़ुदों के ताक़-ए-निसियाँ का

बयाँ क्या कीजिये बेदाद-ए-काविशहा-ए-मिश़गाँ का
कि हरइक क़तर:-ए-ख़ूँ दान: है तस्बीह-ए-मरजाँ का

न आई सतवत-ए-क़ातिल भी माने'अ, मेरे नालों को
लिया दाँतों में जो तिन्का, हुआ रेश: नयसताँ का

दिखाऊँगा तमाशा, दी अगर फ़ुर्सत ज़माने ने
मिरा हर दाग़-ए-दिल, इक तुख़्म है सर्व-ए-चराग़ाँ का

किया आईन:-ख़ाने का वह नक़्श:, तेरे जल्वे ने
करे, जो परतव-ए-ख़ुर्शीद, 'आलम शबनमिस्ताँ का

मिरी ता'मीर में मुज़्मर, है इक सूरत ख़राबी की
हयूला बर्क़-ए-ख़रमन का, है ख़ून-ए-गर्म देहक़ाँ का

उगा है घर में हर सू सब्ज़:, वीरानी तमाशा कर
मदार, अब खोदने पर घास के, है मेरे दरबाँ का

ख़मोशी में निहाँ, ख़ूँगश्त: लाखों आरज़ूयें हैं
चराग़-ए-मुर्द: हूँ, मैं बेज़बाँ, गोर-ए-ग़रीबाँ का

ہنوز، اک پرتوِ نقشِ خیالِ یار باقی ہے
دلِ افسردہ، گویا، حجرہ ہے یوسف کے زنداں کا

بغل میں غیر کی، آج آپ سوتے ہیں کہیں، ورنہ
سبب کیا، خواب میں آکر تبسّم ہاے پنہاں کا

نہیں معلوم، کس کس کا لہو پانی ہوا ہوگا
قیامت ہے، سرشک آلودہ ہونا تیری مژگاں کا

نظر میں ہے ہماری جادۂ راہِ فنا غالب
کہ یہ شیرازہ ہے عالم کے اجزاے پریشاں کا

۱۱

نہ ہوگا یک بیاباں ماندگی سے ذوق کم میرا
حبابِ موجۂ رفتار ہے نقشِ قدم میرا

محبت تھی چمن سے، لیکن اب یہ بے دماغی ہے
کہ موجِ بوے گل سے ناک میں آتا ہے دم میرا

۱۲

سراپا رہنِ عشق و ناگزیرِ اُلفتِ ہستی
عبادت برق کی کرتا ہوں اور افسوس حاصل کا

हनोज़, इक परतव-ए-नक़्श-ए-ख़याल-ए-यार बाक़ी है
दिल-ए-अफ़्सुर्दः, गोया, हुजरः है यूसुफ़ के ज़िन्दाँ का

बग़ल में ग़ैर की, आज आप सोते हैं कहीं, वर्नः
सबब क्या, ख़्वाब में आकर तबस्सुमहा-ए-पिन्हाँ का

नहीं मा'लूम, किस किसका लहू पानी हुआ होगा
क़यामत है, सरश्क आलूदः होना तेरी मिश़गाँ का

नज़र में है हमारी जादः-ए-राह-ए-फ़ना ग़ालिब
कि यह शीराज़ः है 'आलम के अज्ज़ा-ए-परीशाँ का

११

न होगा यक बयाबाँ मान्दगी से ज़ौक़ कम मेरा
हबाब-ए-मौजः-ए-रफ़्तार है नक़्श-ए-क़दम मेरा

महब्बत थी चमन से, लेकिन अब यह बेदिमाग़ी है
कि मौज-ए-बू-ए-गुल से नाक में आता है दम मेरा

१२

सरापा रेहन-ए-'अिश्क़-ओ-नागुज़ीर-ए-उल्फ़त-ए-हस्ती
'अिबादत बर्क़ की करता हूँ और अफ़सोस हासिल का

بقدرِ ظرف ہے، ساقی، خمارِ تشنہ کامی بھی
جو تو دریائے مے ہے، تو میں خمیازہ ہوں ساحل کا

۱۳

محرم نہیں ہے تو ہی نوا ہائے راز کا
یاں ورنہ جو حجاب ہے، پردہ ہے ساز کا

رنگِ شکستہ، صبحِ بہارِ نظارہ ہے
یہ وقت ہے شگفتنِ گلہائے ناز کا

تو اور سوئے غیر نظرہائے تیز تیز
میں اور دُکھ تری مژہ ہائے دراز کا

صرفہ ہے ضبطِ آہ میں میرا، وگرنہ میں
طعمہ ہوں، ایک ہی نفسِ جاں گداز کا

ہیں، بسکہ جوشِ بادہ سے، شیشے اچھل رہے
ہر گوشۂ بساط، ہے سر شیشہ باز کا

کاوش کا دل کرے ہے تقاضا، کہ ہے ہنوز
ناخن پہ قرض، اس گرہِ نیم باز کا

تاراج کاوشِ غمِ ہجراں ہوا، اسد
سینہ، کہ تھا دفینۂ گہر ہائے راز کا

बक़द्र-ए-ज़र्फ़ हैं, साक़ी, ख़ुमार-ए-तश्नःकामी भी
जो तू दरिया-ए-मै है, तो मैं ख़मियाज़ः हूँ साहिल का

१३

महरम नहीं है तू ही नवाहा-ए-राज़ का
याँ वर्नः जो हिजाब है, पर्दः है साज़ का

रँग-ए-शिकस्तः, सुब्ह-ए-बहार-ए-नज़ारः है
यह वक़्त है शिगुफ़्तन-ए-गुलहा-ए-नाज़ का

तू और सू-ए-ग़ैर नज़रहा-ए-तेज़ तेज़
मैं और दुख तिरी मिश़ःहा-ए-दराज़ का

सर्फ़ः है ज़ब्त-ए-आह में मेरा, वगर्नः मैं
तो'मः हूँ, एक ही नफ़स-ए-जाँ गुदाज़ का

हैं, बसकि जोश-ए-बादः से, शीशे उछल रहे
हर गोशः-ए-बिसात, है सर शीशः बाज़ का

काविश का दिल करे है तक़ाज़ा, कि है हनोज़
नाख़ुन प क़र्ज़, इस गिरह-ए-नीमबाज़ का

ताराज-ए-काविश-ए-ग़म-ए-हिजराँ हुआ, असद
सीनः, कि था दफ़ीनः गुहरहा-ए-राज़ का

۱٤

بزمِ شاہنشاہ میں اشعار کا دفتر کھلا
رکھیو یارب، یہ درِ گنجینۂ گوہر کھلا

شب ہوئی، پھر انجمِ رخشندہ کا منظر کھلا
اس تکلف سے، کہ گویا بت کدے کا در کھلا

گرچہ ہوں دیوانہ، پر کیوں دوست کا کھاؤں فریب
آستیں میں دشنہ پنہاں، ہاتھ میں نشتر کھلا

گو نہ سمجھوں اس کی باتیں، گو نہ پاؤں اس کا بھید
پر یہ کیا کم ہے، کہ مجھ سے وہ پری پیکر کھلا

ہے، خیالِ حسن میں، حسنِ عمل کا سا خیال
خلد کا اک در ہے، میری گور کے اندر، کھلا

مُنہ نہ کھلنے پر، ہے وہ عالم، کہ دیکھا ہی نہیں
زلف سے بڑھ کر، نقاب اس شوخ کے مُنہ پر کھلا

در پہ رہنے کو کہا اور کہہ کے کیسا پھر گیا
جتنے عرصے میں مرا لپٹا ہوا بستر کھلا

کیوں اندھیری ہے شبِ غم، ہے بلاؤں کا نزول
آج اُدھر ہی کو رہے گا دیدۂ اختر کھلا

१४

बज़्म-ए-शाहनशाह में अश'आर का दफ़्तर खुला
रखियो यारब, यह दर-ए-गंजीनः-ए-गौहर खुला

शब हुई, फिर अंजुमन-ए-रख़्शिन्दः का मंज़र खुला
इस तकल्लुफ़ से, कि गोया बुतकदे का दर खुला

गरचेः हूँ दीवानः, पर क्यों दोस्त का खाऊँ फ़रेब
आस्तीं में दश्नः पिन्हाँ, हाथ में नश्तर खुला

गो न समझूँ उसकी बातें, गो न पाऊँ उसका भेद
पर यह क्या कम है, कि मुझसे वह परी पैकर खुला

है, ख़याल-ए-हुस्न में, हुस्न-ए-'अमल का सा ख़याल
ख़ुल्द का इक दर है, मेरी गोर के अन्दर, खुला

मुँह न खुलने पर, है वह 'आलम, कि देखा ही नहीं
ज़ुल्फ़ से बढ़कर, निक़ाब उस शोख़ के मुँह पर खुला

दर प रहने को कहा और कहके कैसा फिर गया
जितने 'अर्से में मिरा लिपटा हुआ बिस्तर खुला

क्यों अँधेरी है शब-ए-ग़म, हैं बलाओं का नुज़ूल
आज उधर ही को रहेगा दीदः-ए-अख़्तर खुला

کیا رہوں غربت میں خوش، جب ہو حوادث کا یہ حال
نامہ لاتا ہے وطن سے نامہ بر ، اکثر کھلا

اُس کی اُمت میں ہوں میں، میرے رہیں کیوں کام بند
واسطے جس شہ کے ،غالب، گنبدِ بے در کھلا

۱۵

شب، کہ برقِ سوزِ دل سے ، زہرۂ ابر آب تھا
شعلۂ جوّالہ ، ہر اک حلقۂ گرداب تھا

واں کرم کو، عذرِ بارش، تھا عناں گیرِ خرام
گریے سے یاں ، پنبۂ بالش کفِ سیلاب تھا

واں، خودآرائی کو ، تھا موتی پرونے کا خیال
یاں ، ہجومِ اشک میں، تارِ نگہ نایاب تھا

جلوۂ گل نے کیا تھا، واں ، چراغاں آبجُو
یاں ، رواں مژگانِ چشمِ تر سے خونِ ناب تھا

یاں ، سرِ پُرشور بے خوابی سے تھا دیوارجُو
واں ، وہ فرقِ ناز محوِ بالشِ کم خواب تھا

یاں ، نفس کرتا تھا روشن شمعِ بزمِ بےخودی
جلوۂ گل ، واں ، بساطِ صحبتِ احباب تھا

क्या रहूँ ग़ुर्बत में ख़ुश, जब हो हवादिस का यह हाल
नामः लाता है वतन से नामःबर, अक्सर खुला

उसकी उम्मत में हूँ मैं, मेरे रहें क्यों काम बन्द
वासते जिस शह के, ग़ालिब, गुंबद-ए-बेदर खुला

१५

शब, कि बर्क़-ए-सोज़-ए-दिल से, ज़हरः-ए-अब्र आब था
शो'अलः-ए-जव्वालः हर इक हल्क़ः-ए-गिरदाब था

वाँ करम को, 'उज़्र-ए-बारिश, था 'अिनाँगीर-ए-ख़िराम
गिरिये से याँ, पंबः-ए-बालिश कफ़-ए-सैलाब था

वाँ, ख़ुदआराई को, था मोती पिरोने का ख़याल
याँ, हुजूम-ए-अश्क में, तार-ए-निगह नायाब था

जल्वः-ए-गुल ने किया था, वाँ, चराग़ाँ आबजू
याँ; रवाँ मिश़गान-ए-चश्म-ए-तर से ख़ून-ए-नाब था

याँ, सर-ए-पुरशोर बेख़्वाबी से था दीवार जू
वाँ, वह फ़र्क़-ए-नाज़ महव-ए-बालिश-ए-कमख़्वाब था

याँ, नफ़स करता था रोशन शम'अ-ए-बज़्म-ए-बेख़ुदी
जलवः-ए-गुल, वाँ, बिसात-ए-सोहबत-ए-अहबाब था

فرش سے تا عرش، واں طوفاں تھا موجِ رنگ کا
یاں زمیں سے آسماں تک سوختن کا باب تھا

ناگہاں، اس رنگ سے خونابہ ٹپکانے لگا،
دل، کہ ذوقِ کاوشِ ناخن سے لذت یاب تھا

۱۶

نالۂ دل میں شب، اندازِ اثر نایاب تھا
تھا سپندِ بزمِ وصلِ غیر، گو بے تاب تھا

مقدمِ سیلاب سے، دل کیا نشاط آہنگ ہے
خانۂ عاشق، مگر، سازِ صدائے آب تھا

نازشِ ایامِ خاکستر نشینی، کیا کہوں
پہلوئے اندیشہ، وقفِ بسترِ سنجاب تھا

کچھ نہ کی، اپنے جنونِ نارسا نے، ورنہ یاں
ذرہ ذرہ، رُوکشِ خورشیدِ عالم تاب تھا

آج کیوں پروا نہیں، اپنے اسیروں کی تجھے
کل تلک، تیرا بھی دل مہرو وفا کا باب تھا

یاد کر وہ دن، کہ ہر اک حلقہ تیرے دام کا
انتظارِ صید میں، اِک دیدۂ بے خواب تھا

फ़र्श से ता 'अर्श, वाँ तूफ़ाँ था मौज-ए-रंग का
याँ ज़मीं से आस्माँ तक सोख़्तन का बाब था

नागहाँ, इस रंग से ख़ूँनाबः टपकाने लगा,
दिल, कि ज़ौक़-ए-काविश-ए-नाख़ुन से लज़्ज़तयाब था

१६

नालः-ए-दिल में शब, अन्दाज़-ए-असर नायाब था
था सिपन्द-ए-बज़्म-ए-वस्ल-ए-ग़ैर, गो बेताब था

मक़दम-ए-सैलाब से, दिल क्या निशात आहंग है,
ख़ानः-ए-'आशिक़, मगर, साज़-ए-सदा-ए-आब था

नाज़िश-ए-अय्याम-ए-ख़ाकिस्तर नशीनी, क्या कहूँ,
पहलु-ए-अन्देशः, वक़्फ़-ए-बिस्तर-ए-संजाब था

कुछ न की, अपने जुनून-ए-नारसा ने, वर्नः याँ
ज़र्रः ज़र्रः, रूकश-ए-ख़ुर्शीद-ए-'आलम ताब था

आज क्यों परवा नहीं, अपने असीरों की तुझे
कल तलक, तेरा भी दिल मेहर-ओ-वफ़ा का बाब था

याद कर वह दिन, कि हर इक हल्क़ः तेरे दाम का
इन्तिज़ार-ए-सैद में, इक दीदः-ए-बेख़्वाब था

میں نے روکا رات غالب کو، وگرنہ دیکھتے
اُس کے سیلِ گریہ میں، گردوں کفِ سیلاب تھا

۱۷

ایک ایک قطرے کا مجھے دینا پڑا حساب
خونِ جگر، ودیعتِ مژگانِ یار تھا

اب میں ہوں اور ماتمِ یک شہرِ آرزو
توڑا جو تو نے آئینہ، تمثال دار تھا

گلیوں میں میری نعش کو کھینچے پھرو، کہ میں
جاں دادۂ ہوائے سرِ رہ گذار تھا

موجِ سرابِ دشتِ وفا کا نہ پوچھ حال
ہر ذرہ مثلِ جوہرِ تیغ آب دار تھا

کم جانتے تھے ہم بھی غمِ عشق کو، پر اب
دیکھا، تو کم ہوئے پہ، غمِ روزگار تھا

۱۸

بسکہ دشوار ہے، ہر کام کا آساں ہونا
آدمی کو بھی میسر نہیں، انساں ہونا

मैं ने रोका रात ग़ालिब को, वगर्न: देखते
उसके सैल-ए-गिरिय: में, गर्दूं कफ़-ए-सैलाब था

१७

एक एक क़तरे का मुझे देना पड़ा हिसाब
ख़ून-ए-जिगर, वदी'अत-ए-मिश़गान-ए-यार था

अब मैं हूँ और मातम-ए-यक शहर-ए-आरज़ू
तोड़ा जो तू ने आईन:, तिमसाल दार था

गलियों में मेरी न'अश को खेंचे फिरो, कि मैं
जाँ दाद: -ए- हवा -ए- सर -ए- रहगुज़ार था

मौज-ए-सराब-ए-दश्त-ए-वफ़ा का न पूछ हाल
हर ज़र्र: मिस्ल-ए-जौहर-ए-तेग़ आबदार था

कम जानते थे हम भी ग़म-ए-'अिश्क़ को, पर अब
देखा, तो कम हुये प, ग़म-ए-रोज़गार था

१८

बसकि दुश्वार है, हर काम का आसाँ होना
आदमी को भी मुयस्सर नहीं, इन्साँ होना

گریہ چاہے ہے خرابی مرے کاشانے کی
در و دیوار سے ٹپکے ہے، بیاباں ہونا

وائے دیوانگیِ شوق، کہ ہر دم مجھ کو
آپ جانا اُدھر ، اور آپ ہی حیراں ہونا

جلوہ از بسکہ تقاضائے نگہ کرتا ہے
جوہرِ آئینہ بھی، چاہے ہے مژگاں ہونا

عشرتِ قتل گہِ اہلِ تمنا، مت پوچھ
عیدِ نظارہ، ہے شمشیر کا عُریاں ہونا

لے گئے خاک میں ہم، داغِ تمنائے نشاط
تو ہو، اور آپ بہ صد رنگ گلستاں ہونا

عشرتِ پارۂ دل، زخمِ تمنا کھانا
لذتِ ریشِ جگر، غرقِ نمکداں ہونا

کی مرے قتل کے بعد، اُس نے جفا سے توبہ
ہائے، اُس زُود پشیماں کا پشیماں ہونا

حیف، اُس چار گرہ کپڑے کی قسمت، غالب
جس کی قسمت میں ہو، عاشق کا گریباں ہونا

गिरियः चाहे है ख़राबी मिरे काशाने की
दर-ओ-दीवार से टपके है, बयाबाँ होना

वाय दीवानगि-ए-शौक़, कि हर दम मुझको
आप जाना उधर, और आप ही हैराँ होना

जल्वः अज़बसकि तक़ाज़ा-ए-निगह करता है
जौहर-ए-आईनः भी, चाहे है मिश़गाँ होना

'अिश्रत-ए-क़त्लगह-ए-अहल-ए-तमन्ना मत पूछ
'ओद-ए-नज़्ज़ारः, है शमशीर का 'उरियाँ होना

ले गये ख़ाक में हम, दाग़-ए-तमन्ना-ए-निशात
तू हो, और आप बसद रंग गुलिस्ताँ होना

'अिश्रत-ए-पारः-ए-दिल, ज़ख़्म-ए-तमन्ना खाना
लज़्ज़त-ए-रीश-ए-जिगर, ग़र्क़-ए-नमकदाँ होना

की मिरे क़त्ल के ब'अद, उसने जफ़ा से तौबः
हाय, उस ज़ूद पशेमाँ का पशेमाँ होना

हैफ़, उस चार गिरह कपड़े की क़िस्मत, ग़ालिब
जिसकी क़िस्मत में हो, 'आशिक़ का गरीबाँ होना

۱۹

شب، خمارِ شوقِ ساقی، رستخیز اندازہ تھا
تا محیطِ بادہ صورت خانۂ خمیازہ تھا

یک قدم وحشت سے، درسِ دفترِ امکاں کھلا
جادہ، اجزاے دو عالم دشت کا، شیرازہ تھا

مانعِ وحشت خرامی ہاے لیلیٰ، کون ہے
خانۂ مجنونِ صحرا گرد، بے دروازہ تھا

پوچھ مت رسوائیِ انداز استغناے حسن
دست مرہونِ حنا، رخسار رہنِ غازہ تھا

نالۂ دل نے دیے اوراقِ لختِ دل، بہ باد
یادگارِ نالہ، اک دیوانِ بے شیرازہ تھا

۲۰

دوست غمخواری میں میری، سعی فرمائیں گے کیا
زخم کے بھرنے تلک، ناخن نہ بڑھ جائیں گے کیا

بے نیازی حد سے گزری، بندہ پرور کب تلک
ہم کہیں گے حالِ دل، اور آپ فرمائیں گے کیا

१९

शब, ख़ुमार-ए-शौक़-ए-साक़ी, रस्तख़ेज़ अन्दाज़ः था
ता मुहीत-ए-बादः सूरत ख़ानः-ए-ख़मियाज़ः था

यक क़दम वहशत से, दर्स-ए-दफ़्तर-ए-इमकाँ खुला
जादः, अज्ज़ा-ए-दो 'आलम दश्त का, शीराज़ः था

माने'अ-ए-वहशत ख़िरामीहा-ए-लैला, कौन है
ख़ानः-ए-मजनून-ए-सहरा गर्द, बे दरवाज़ः था

पूछ मत रुस्वाइ-ए-अन्दाज़-ए-इस्तिग़ना-ए-हुस्न
दस्त मरहून-ए-हिना, रुख़सार रेहन-ए-ग़ाज़ः था

नालः-ए-दिल ने दिये औराक़-ए-लख़्त-ए-दिल, बबाद
यादगार-ए-नालः, इक दीवान-ए-बे शीराज़ः था

२०

दोस्त ग़मख़्वारी में मेरी, स'इ फ़रमायेंगे क्या
ज़ख़्म के भरने तलक, नाख़ुन न बढ़ जायेंगे क्या

बेनियाज़ी हद से गुज़री, बन्दः परवर कब तलक
हम कहेंगे हाल-ए-दिल, और आप फ़रमायेंगे क्या

حضرت ناصح گر آئیں ، دیدہ و دل فرشِ راہ
کوئی مجھ کو یہ تو سمجھا دو، کہ سمجھائیں گے کیا

آج واں تیغ و کفن باندھے ہوئے جاتا ہوں میں
عذر میرے قتل کرنے میں وہ اب لائیں گے کیا

گر کیا ناصح نے ہم کو قید ، اچھا ، یوں سہی
یہ جنونِ عشق کے انداز چھٹ جائیں گے کیا

خانہ زادِ زلف ہیں، زنجیر سے بھاگیں گے کیوں
ہیں گرفتارِ وفا، زنداں سے گھبرائیں گے کیا

ہے اب اس معمورہ میں قحطِ غمِ الفت ، اسد
ہم نے یہ مانا، کہ دلی میں رہیں، کھائیں گے کیا

۲۱

یہ نہ تھی ہماری قسمت، کہ وصالِ یار ہوتا
اگر اور جیتے رہتے ، یہی انتظار ہوتا

ترے وعدے پر جیے ہم، تو یہ جان، جھوٹ جانا
کہ خوشی سے مر نہ جاتے ، اگر اعتبار ہوتا

हज़रत-ए-नासेह गर आयें, दीदः-ओ-दिल फ़र्श-ए-राह
कोई मुझको यह तो समझादो, कि समझायेंगे क्या

आज वाँ तेग़-ओ-कफ़न बाँधे हुये जाता हूँ मैं
'अुज़्र मेरे क़त्ल करने में वह अब लायेंगे क्या

गर किया नासेह ने हम को क़ैद, अच्छा, यों सही
यह जुनून-ए-'अिश्क़ के अन्दाज़ छुट जायेंगे क्या

ख़ानः ज़ाद-ए-ज़ुल्फ़ हैं, जंजीर से भागेंगे क्यों
हैं गिरफ़्तार-ए-वफ़ा, जिन्दाँ से घबरायेंगे क्या

है अब इस म'अमूरे में क़ेहत-ए-ग़म-ए-उल्फ़त, असद
हम ने यह माना, कि दिल्ली में रहें, खायेंगे क्या

२१

यह न थी हमारी क़िस्मत, कि विसाल-ए-यार होता
अगर और जीते रहते, यही इन्तिज़ार होता

तिरे व'अदे पर जिये हम, तो यह जान, झूट जाना
कि ख़ुशी से मर न जाते, अगर 'एतिबार होता

تری نازکی سے جانا، کہ بندھا تھا عہد بودا
کبھی تو نہ توڑ سکتا، اگر استوار ہوتا

کوئی میرے دل سے پوچھے، ترے تیرِ نیم کش کو
یہ خلش کہاں سے ہوتی، جو جگر کے پار ہوتا

یہ کہاں کی دوستی ہے، کہ بنے ہیں دوست، ناصح
کوئی چارہ ساز ہوتا، کوئی غم گسار ہوتا

رگِ سنگ سے ٹپکتا، وہ لہو، کہ پھر نہ تھمتا
جسے غم سمجھ رہے ہو، یہ اگر شرار ہوتا

غم اگرچہ جاں گسل ہے، پہ کہاں بچیں، کہ دل ہے
غمِ عشق گر نہ ہوتا، غمِ روزگار ہوتا

کہوں کس سے میں کہ کیا ہے، شبِ غم بری بلا ہے
مجھے کیا برا تھا مرنا، اگر ایک بار ہوتا

ہوئے مر کے ہم جو رُسوا، ہوئے کیوں نہ غرقِ دریا
نہ کبھی جنازہ اُٹھتا، نہ کہیں مزار ہوتا

اُسے کون دیکھ سکتا، کہ یگانہ ہے وہ یکتا
جو دوئی کی بُو بھی ہوتی، تو کہیں دو چار ہوتا

یہ مسائلِ تصوف، یہ ترا بیان، غالب
تجھے ہم ولی سمجھتے، جو نہ بادہ خوار ہوتا

तिरी नाज़ुकी से जाना, कि बंधा था 'अ़ेहद बोदा
कभी तू न तोड़ सकता, अगर उस्तुवार होता

कोई मेरे दिल से पूछे, तिरे तीर-ए-नीमकश को
यह ख़लिश कहाँ से होती, जो जिगर के पार होता

यह कहाँ की दोस्ती है, कि बने हैं दोस्त, नासेह
कोई चारः साज़ होता, कोई ग़मगुसार होता

रग-ए-संग से टपकता, वह लहू, कि फिर न थमता
जिसे ग़म समझ रहे हो, यह अगर शरार होता

ग़म अगरचे: जाँगुसिल है, प कहाँ बचें, कि दिल है
ग़म-ए-'अ़िश्क़ गर न होता, ग़म-ए-रोज़गार होता

कहूँ किससे मैं कि क्या है, शब-ए-ग़म बुरी बला है
मुझे क्या बुरा था मरना, अगर एक बार होता

हुये मरके हम जो रुस्वा, हुये क्यों न ग़र्क़-ए-दरिया
न कभी जनाज़ः उठता, न कहीं मज़ार होता

उसे कौन देख सकता, कि यगानः है वह यकता
जो दुई की बू भी होती, तो कहीं दुचार होता

यह मसाइल-ए-तसव्वुफ़, यह तिरा बयान, ग़ालिब
तुझे हम वली समझते, जो न बादःख़्वार होता

ہوس کو ہے نشاطِ کار کیا کیا
نہ ہو مرنا تو جینے کا مزا کیا

تجاہل پیشگی سے مدعا کیا
کہاں تک، اے سراپا ناز، کیا، کیا

نوازش ہائے بےجا، دیکھتا ہوں
شکایت ہائے رنگیں کا گلا کیا

نگاہِ بے محابا چاہتا ہوں
تغافل ہائے تمکیں آزما کیا

فروغِ شعلۂ خس یک نفس ہے
ہوس کو پاسِ ناموسِ وفا کیا

نفس موجِ محیطِ بے خودی ہے
تغافل ہائے ساقی کا گِلا کیا

دماغِ عطرِ پیراہن نہیں ہے
غمِ آوارگی ہائے صبا کیا

دلِ ہر قطرہ، ہے سازِ انا البحر
ہم اُس کے ہیں، ہمارا پوچھنا کیا

२२

हवस को है निशात-ए-कार क्या क्या
न हो मरना तो जीने का मज़ा क्या

तजाहुल पेशगी से मुद्द'आ क्या
कहाँ तक, अय सरापा नाज़, क्या, क्या

नवाज़िशहा-ए-बेजा, देखता हूँ
शिकायतहा-ए-रंगीं का गिला क्या

निगाह-ए-बेमहाबा चाहता हूँ
तग़ाफ़ुलहा-ए-तमकीं आज़मा क्या

फ़रोग़-ए-शो'अल:-ए-ख़स यक नफ़स है
हवस को पास-ए-नामूस-ए-वफ़ा क्या

नफ़स, मौज-ए-मुहीत-ए-बेख़ुदी है
तग़ाफ़ुलहा-ए-साक़ी का गिला क्या

दिमाग़-ए-'अित्र-ए-पैराहन नहीं है
ग़म-ए-आवारगीहा-ए-सबा क्या

दिल-ए-हर क़तर: है साज़-ए-अनल बहर
हम उसके हैं; हमारा पूछना क्या

محابا کیا ہے، میں ضامِن، اِدھر دیکھ
شہیدان نگہ کا خوں بہا کیا

سن، اے غارت گر جنسِ وفا، سن
شکستِ شیشۂ دل کی صدا کیا

کیا کس نے جگرداری کا دعوٰی
شکیبِ خاطرِ عاشق، بھلا کیا

یہ قاتل وعدۂ صبر آزما کیوں
یہ کافر فتنۂ طاقت رُبا کیا

بلائے جاں ہے، غالب، اُس کی ہر بات
عبارت کیا، اشارت کیا، ادا کیا

۲۳

در خُور قہر و غضب، جب کوئی ہم سا نہ ہوا
پھر غلط کیا ہے، کہ ہم سا کوئی پیدا نہ ہوا

بندگی میں بھی، وہ آزادہ و خود بیں ہیں، کہ ہم
اُلٹے پھر آئے، درِ کعبہ اگر وا نہ ہوا

سب کو مقبول ہے دعوٰی تری یکتائی کا
روبرو کوئی بُتِ آئینہ سیما نہ ہوا

महाबा क्या है, मैं ज़ामिन, इधर देख
शहीदान-ए-निगह का ख़ूँ-बहा क्या

सुन, अय ग़ारतगर-ए-जिन्स-ए-वफ़ा, सुन
शिकस्त-ए-शीशः-ए-दिल की सदा क्या

किया किसने जिगरदारी का दा'वा
शिकेब-ए-ख़ातिर-ए-'आशिक़, भला क्या

यह क़ातिल वा'दः-ए-सब्र आज़मा क्यों
यह काफ़िर फ़ितनः-ए-ताक़त रुबा क्या

बला-ए-जाँ है, ग़ालिब, उसकी हर बात
'अिबारत क्या, इशारत क्या, अदा क्या

२३

दर ख़ुर-ए-क़ेहर-ओ-ग़ज़ब, जब कोई हमसा न हुआ
फिर ग़लत क्या है, कि हमसा कोई पैदा न हुआ

बन्दगी में भी, वह आज़ादः-ओ-ख़ुदबीं हैं, कि हम
उलटे फिर आये, दर-ए-का'बः अगर वा न हुआ

सबको मक़्बूल, है दा'वा तिरी यकताई का
रुबरू कोई बुत-ए-आईनः सीमा न हुआ

کم نہیں، نازشِ ہم نامیِ چشمِ خوباں
تیرا بیمار، برا کیا ہے، گر اچھا نہ ہوا

سینے کا داغ ہے، وہ نالہ کہ لب تک نہ گیا
خاک کا رزق ہے، وہ قطرہ کہ دریا نہ ہوا

کام کا میرے ہے، وہ دُکھ کہ کسی کو نہ ملا
کام میں میرے ہے، وہ فتنہ کہ برپا نہ ہوا

ہر بُنِ مُو سے، دمِ ذکر، نہ ٹپکے خوںناب
حمزہ کا قصہ ہوا، عشق کا چرچا نہ ہوا

قطرے میں دجلہ دکھائی نہ دے، اور جزو میں کل
کھیل لڑکوں کا ہوا، دیدۂ بینا نہ ہوا

تھی خبر گرم، کہ غالب کے اُڑیں گے پُرزے
دیکھنے ہم بھی گئے تھے، پہ تماشا نہ ہوا

۲٤

اسد، ہم وہ جنوں جولاں گدائے بے سر و پا ہیں
کہ ہے سر پنجۂ مژگانِ آہو، پشتِ خار اپنا

कम नहीं, नाज़िश-ए-हमनामि-ए-चश्म-ए-ख़ूबाँ
तेरा बीमार, बुरा क्या है, गर अच्छा न हुआ

सीने का दाग़ है, वह नाल: कि लब तक न गया
ख़ाक का रिज़्क़ है, वह क़तर: कि दरिया न हुआ

काम का मेरे है, वह दुख कि किसी को न मिला
काम में मेरे है, वह फ़ितन: कि बरपा न हुआ

हर बुन-ए-मू से, दम-ए-ज़िक्र, न टपके ख़ूँनाब
हमज़: का क़िस्स: हुआ, 'अिश्क़ का चरचा न हुआ

क़तरे में दजल: दिखाई न दे, और जुज़्व में कुल
खेल लड़कों का हुआ, दीद:-ए-बीना न हुआ

थी ख़बर गर्म, कि ग़ालिब के उड़ेंगे पुर्ज़े
देखने हम भी गये थे, प तमाशा न हुआ

२४

असद, हम वह जुनूँ जौलाँ गदा-ए-बेसर-ओ-पा हैं
कि है सर पन्ज:-ए-मिश़गान-ए-आहू, पुश्त-ए-ख़ार अपना

پئے نذرِ کرم تحفہ، ہے شرمِ نارسائی کا
بخوں غلطیدۂ صد رنگ دعوٰی پارسائی کا

نہ ہو حسنِ تماشا دوست، رُسوا بےوفائی کا
بہ مُہرِ صد نظر ثابت ہے دعوٰی پارسائی کا

زکاتِ حسن دے، اے جلوۂ بینش، کہ مہر آسا
چراغِ خانۂ درویش ہو، کاسہ گدائی کا

نہ مارا، جان کر بے جُرم، قاتل، تیری گردن پر
رہا مانندِ خونِ بے گنہ، حق آشنائی کا

تمنائے زباں محوِ سپاسِ بے زبانی ہے
مٹا جس سے تقاضا، شکوۂ بے دست و پائی کا

وہی اک بات ہے، جو یاں نفس، واں نکہتِ گل ہے
چمن کا جلوہ باعث ہے، مری رنگیں نوائی کا

دہانِ ہر بُتِ پیغارہ جُو، زنجیرِ رسوائی
عدم تک بے وفا، چرچا ہے تیری بے وفائی کا

نہ دے نامے کو اتنا طول، غالب، مختصر لکھ دے
کہ حسرت سنج ہوں، عرضِ ستم ہائے جدائی کا

२५

प-ए-नज़र-ए-करम तोहफ़:, है शर्म-ए-नारसाई का
बख़ूँ ग़लतीद:-ए-सद रंग दा'वा पारसाई का

न हो हुस्न-ए-तमाशा दोस्त, रुस्वा बेवफ़ाई का
बमुह्र-ए-सद नजर साबित है दा'वा पारसाई का

ज़कात-ए-हुस्न दे, अय जल्व:-ए-बीनश, कि मेह्र-आसा
चराग़-ए-ख़ान:-ए-दरवेश हो, कास: गदाई का

न मारा, जानकर बेजुर्म, क़ातिल तेरी गर्दन पर
रहा मानिन्द-ए-ख़ून-ए-बेगुनह, हक़ आशनाई का

तमन्ना-ए-ज़बाँ महव-ए-सिपास-ए-बेज़बानी है
मिटा जिससे तक़ाज़ा, शिकव:-ए-बेदस्त-ओ-पाई का

वही इक बात है, जो याँ नफ़स, वाँ नकहत-ए-गुल है
चमन का जल्व: बा'इस है, मिरी रंगीं नवाई का

दहान-ए-हर बुत-ए-पैग़ार:जू, जंजीर-ए-रुस्वाई
'अदम तक बेवफ़ा, चरचा है तेरी बेवफ़ाई का

न दे नामे को इतना तूल, ग़ालिब; मुख़्तसर लिख दे
कि हसरत संज हूँ, 'अर्ज़-ए-सितमहा-ए-जुदाई का

۲٦

گر نہ اندوہِ شبِ فرقت بیاں ہو جائے گا
بے تکلف داغِ مہ، مُہرِ دہاں ہو جائے گا

زہرہ گر ایسا ہی، شامِ ہجر میں ہوتا ہے آب
پرتوِ مہتاب ، سیلِ خانماں ہو جائے گا

لے تو لوں، سوتے میں اس کے پاؤں کا بوسہ، مگر
ایسی باتوں سے، وہ کافر بدگماں ہو جائے گا

دل کوہم صرفِ وفا سمجھے تھے، کیا معلوم تھا
یعنی ، یہ پہلے ہی نذرِ امتحاں ہو جائے گا

سب کے دل میں ہے جگہ تیری، جو تو راضی ہوا
مجھ پہ گویا اک زمانہ مہرباں ہو جائے گا

گر نگاہِ گرم فرماتی رہی ، تعلیمِ ضبط
شعلہ خس میں، جیسے خوں رگ میں، نہاں ہو جائے گا

باغ میں مجھ کو نہ لے جا، ورنہ میرے حال پر
ہر گلِ تر ایک چشمِ خوں فشاں ہو جائے گا

وائے، گر میرا ترا انصاف، محشر میں نہ ہو
اب تلک تو یہ توقع ہے، کہ واں ہو جائے گا

२६

गर न अन्दोह-ए-शब-ए-फ़ुर्क़त बयाँ हो जायगा
बेतकल्लुफ़ दाग़-ए-मह, मोह्र-ए-दहाँ हो जायगा

जहरः गर ऐसा ही, शाम-ए-हिज्र में होता है आब
परतव-ए-महताब, सैल-ए-ख़ान्माँ हो जायगा

ले तो लूँ, सोते में उसके पाँव का बोसः, मगर
ऐसी बातों से, वह काफ़िर बदगुमाँ हो जायगा

दिल को हम सर्फ़-ए-वफ़ा समझे थे, क्या मा'लूम था
या'नी, यह पहले ही नज़्र-ए-इम्तिहाँ हो जायगा

सब के दिल में है जगह तेरी, जो तू राज़ी हुआ
मुझ प गोया इक ज़मानः मेहरबाँ हो जायगा

गर निगाह-ए-गर्म फ़रमाती रही, ता'लीम-ए-ज़ब्त
शो'लः ख़स में, जैसे ख़ूँ रग में, निहाँ हो जायगा

बाग़ में मुझको न लेजा, वर्नः मेरे हाल पर
हर गुल-ए-तर एक चश्म-ए-ख़ूँफ़िशाँ हो जायगा

वाय, गर मेरा तिरा इन्साफ़, महशर में न हो
अब तलक तो यह तवक़्क़ो'अ है, कि वाँ हो जायगा

فائدہ کیا، سوچ، آخر تو بھی دانا ہے، اسد
دوستی ناداں کی ہے، جی کا زیاں ہو جائے گا

۲۷

درد منت کشِ دوا نہ ہوا
میں نہ اچھا ہوا، برا نہ ہوا

جمع کرتے ہو کیوں رقیبوں کو
اک تماشا ہوا، گلا نہ ہوا

ہم کہاں قسمت آزمانے جائیں
تو ہی جب خنجر آزما نہ ہوا

کتنے شیریں ہیں تیرے لب، کہ رقیب
گالیاں کھا کے بے مزا نہ ہوا

ہے خبر گرم اُن کے آنے کی
آج ہی، گھر میں بوریا نہ ہوا

کیا وہ نمرود کی خدائی تھی
بندگی میں مرا بھلا نہ ہوا

جان دی، دی ہوئی اُسی کی تھی
حق تو یہ ہے، کہ حق ادا نہ ہوا

फ़ायदः क्या, सोच, आख़िर तू भी दाना है, असद
दोस्ती नादाँ की है, जी का ज़ियाँ हो जायगा

२७

दर्द मिन्नत कश-ए-दवा न हुआ
मैं न अच्छा हुआ, बुरा न हुआ

जमʼअ करते हो क्यों रक़ीबों को
इक तमाशा हुआ, गिला न हुआ

हम कहाँ क़िस्मत आज़माने जायें
तू ही जब ख़ंजर आज़मा न हुआ

कितने शीरीं हैं तेरे लब, कि रक़ीब
गालियाँ खा के बेमज़ा न हुआ

है ख़बर गर्म उनके आने की
आज ही, घर में बोरिया न हुआ

क्या वह नमरूद की ख़ुदाई थी
बन्दगी में मिरा भला न हुआ

जान दी, दी हुई उसी की थी
हक़ तो यह है, कि हक़ अदा न हुआ

زخم گر دب گیا، لہو نہ تھما
کام گر رک گیا، روا نہ ہوا

رہزنی ہے، کہ دل ستانی ہے
لے کے دل، دل ستاں روانہ ہوا

کچھ تو پڑھیے، کہ لوگ کہتے ہیں
آج غالب غزل سرا نہ ہوا

۲۸

گلا ہے شوق کو، دل میں بھی تنگیِ جا کا
گہر میں محو ہوا اضطراب دریا کا

یہ جانتا ہوں، کہ تو اور پاسخِ مکتوب
مگر، ستم زدہ ہوں، ذوقِ خامہ فرسا کا

حنائے پائے خزاں ہے، بہار اگر ہے یہی
دوام کلفتِ خاطر ہے عیش دنیا کا

غمِ فراق میں، تکلیفِ سیرِ باغ نہ دو
مجھے دماغ نہیں خندہ ہائے بیجا کا

ہنوز محرمیِ حسن کو ترستا ہوں
کرے ہے ہر بُنِ مُو کام چشمِ بینا کا

ज़ख़्म गर दब गया, लहू न थमा
काम गर रुक गया; रवा न हुआ

रहज़नी है, कि दिल सितानी है
ले के दिल, दिलसिताँ रवाना हुआ

कुछ तो पढ़िये, कि लोग कहते हैं
आज ग़ालिब ग़ज़लसरा न हुआ

२८

गिला है शौक़ को, दिल में भी तंगि-ए-जा का
गुहर में महव हुआ इज़्तिराब दरिया का

यह जानता हूँ, कि तू और पासुख़-ए-मक्तूब
मगर, सितम ज़द: हूँ, ज़ौक़-ए-ख़ाम:फ़रसा का

हिना-ए-पा-ए-ख़िज़ाँ है, बहार अगर है यही
दवाम कुल्फ़त-ए-ख़ातिर है 'ऐश दुनिया का

ग़म-ए-फ़िराक़ में, तक्लीफ़-ए-सैर-ए-बाग़ न दो
मुझे दिमाग़ नहीं ख़न्द:हा-ए-बेजा का

हनोज़ महरमि-ए-हुस्न को तरसता हूँ
करे है हर बुन-ए-मू काम चश्म-ए-बीना का

دل اس کو، پہلے ہی ناز و ادا سے دے بیٹھے
ہمیں دماغ کہاں، حسن کے تقاضا کا

نہ کہہ، کہ گریہ بہ مقدارِ حسرتِ دل ہے
مری نگاہ میں ہے جمع و خرچ دریا کا

فلک کو دیکھ کے، کرتا ہوں اُس کو یاد، اسد
جفا میں اُس کی، ہے انداز کارفرما کا

۲۹

قطرۂ مے، بسکہ حیرت سے نفس پرور ہوا
خطِ جامِ مے سراسر، رشتۂ گوہر ہوا

اعتبارِ عشق کی خانہ خرابی دیکھنا
غیر نے کی آہ، لیکن وہ خفا مجھ پر ہوا

۳۰

جب، بتقریبِ سفر، یار نے محمل باندھا
تپشِ شوق نے ہر ذرے پہ اک دل باندھا

اہلِ بینش نے بہ حیرت کدۂ شوخیِ ناز
جوہرِ آئینہ کو طوطیِ بسمل باندھا

दिल उसको, पहले ही नाज़-ओ-अदा से, दे बैठे
हमें दिमाग़ कहाँ, हुस्न के तक़ाज़ा का

न कह, कि गिरियः बमिक़्दार-ए-हसरत-ए-दिल है
मिरी निगाह में है जम'-ओ-ख़र्च दरिया का

फ़लक को देख के, करता हूँ उसको याद, असद
जफ़ा में उसकी, है अन्दाज़ कारफ़रमा का

२९

क़तरः-ए-मै, बसकि हैरत से नफ़स परवर हुआ
ख़त्त-ए-जाम-ए-मै सरासर, रिश्तः-ए-गौहर हुआ

ए'तिबार-ए-'अिश्क़ की ख़ानः ख़राबी देखना
ग़ैर ने की आह, लेकिन वह ख़फ़ा मुझपर हुआ

३०

जब, बतक़रीब-ए-सफ़र, यार ने महमिल बाँधा
तपिश-ए-शौक़ ने हर ज़र्रे प इक दिल बाँधा

अहल-ए-बीनश ने बहैरत कदः-ए-शोख़ि-ए-नाज़
जौहर-ए-आइनः को तूति-ए-बिस्मिल बाँधा

یاس و اُمید نے، یک عربدہ میداں مانگا
عجزِ ہمت نے طلسمِ دلِ سائل باندھا

نہ بندھے تشنگیِ ذوق کے مضموں، غالب
گرچہ دل کھول کے دریا کو بھی ساحل باندھا

۳۱

میں، اور بزمِ مے سے، یوں تشنہ کام آؤں
گر میں نے کی تھی توبہ، ساقی کو کیا ہوا تھا

ہے ایک تیر، جس میں دونوں چھدے پڑے ہیں
وہ دن گئے، کہ اپنا دل سے جگر جدا تھا

درماندگی میں، غالب، کچھ بن پڑے، تو جانوں
جب رشتہ بے گرہ تھا، ناخن گرہ کشا تھا

۳۲

گھر ہمارا، جو نہ روتے بھی، تو ویراں ہوتا
بحر، گر بحر نہ ہوتا، تو بیاباں ہوتا

تنگیِ دل کا گلا کیا، یہ وہ کافر دل ہے
کہ اگر تنگ نہ ہوتا، تو پریشاں ہوتا

यास-ओ-उम्मीद ने, यक 'अरबदः मैदाँ माँगा
'अिज्ज़-ए-हिम्मत ने तिलिस्म-ए-दिल-ए-साइल बाँधा

न बंधे तशनिगि-ए-ज़ौक़ के मज़मूँ, ग़ालिब
गरचेः दिल खोल के दरिया को भी साहिल बाँधा

३१

मैं, और बज़्म-ए-मै से, यों तश्नःकाम आऊँ
गर मैं ने की थी तौबः, साक़ी को क्या हुआ था

है एक तीर, जिस में दोनों छिदे पड़े हैं
वह दिन गये, कि अपना दिल से जिगर जुदा था

दरमान्दगी में ग़ालिब, कुछ बन पड़े, तो जानूँ
जब रिश्तः बेगिरह था, नाख़ुन गिरह कुशा था

३२

घर हमारा, जो न रोते भी, तो वीराँ होता
बह्र, गर बह्र न होता, तो बयाबाँ होता

तंगि-ए-दिल का गिला क्या, यह वह काफ़िर दिल है
कि अगर तंग न होता, तो परीशाँ होता

بعدِ یک عمرِ ورع، بار تو دیتا، بارے
کاش، رضواں ہی درِ یار کا درباں ہوتا

۳۳

نہ تھا کچھ، تو خدا تھا، کچھ نہ ہوتا، تو خدا ہوتا
ڈبویا مجھ کو ہونے نے، نہ ہوتا میں تو کیا ہوتا

ہوا جب غم سے یوں بے حِس، تو غم کیا سر کے کٹنے کا
نہ ہوتا گر جدا تن سے، تو زانو پر دھرا ہوتا

ہوئی مدت، کہ غالب مر گیا، پر یاد آتا ہے
وہ ہر اک بات پر کہنا کہ یوں ہوتا، تو کیا ہوتا

۳٤

یک ذرۂ زمیں نہیں بے کار، باغ کا
یاں جادہ بھی، فتیلہ ہے لالے کے داغ کا

بے مے کسے ہے طاقتِ آشوب آگہی
کھینچا ہے عجزِ حوصلہ نے خط ایاغ کا

بلبل کے کار و بار پہ ہیں، خندہ ہائے گل
کہتے ہیں جس کو عشق، خلل ہے دماغ کا

बा'द-ए-यक उम्र-ए-वर'अ, बार तो देता, बारे
काश, रिज़्वाँ ही दर-ए-यार का दरबाँ होता

३३

न था कुछ, तो ख़ुदा था, कुछ न होता, तो ख़ुदा होता
डुबोया मुझको होने ने, न होता मैं तो क्या होता

हुआ जब ग़म से यों बेहिस, तो ग़म क्या सर के कटने का
न होता गर जुदा तन से, तो ज़ानू पर धरा होता

हुई मुद्दत, कि ग़ालिब मर गया, पर याद आता है
वह हर इक बात पर कहना, कि यों होता, तो क्या होता

३४

यक ज़र्र:-ए-ज़मीं नहीं बेकार, बाग़ का
याँ जाद: भी, फ़तील: है लाले के दाग़ का

बे मै किसे है ताक़त-ए-आशोब-ए-आगही
खेंचा है 'अिज्ज़-ए-हौसल: ने ख़त अयाग़ का

बुलबुल के कार-ओ-बार प हैं, ख़न्द:हा-ए-गुल
कहते हैं जिसको 'अिश्क़, ख़लल है दिमाग़ का

تازہ نہیں ہے نشۂ فکرِ سخن مجھے
تریاکیِ قدیم ہوں دُودِ چراغ کا

سو بار بندِ عشق سے آزاد ہم ہوئے
پر کیا کریں، کہ دل ہی عدو ہے فراغ کا

بے خونِ دل ہے چشم میں موجِ نگہ غبار
یہ مے کدہ خراب ہے، مے کے سراغ کا

باغِ شگفتہ تیرا، بساطِ نشاطِ دل
ابرِ بہار، خُم کدہ کس کے دماغ کا

۳۵

وہ مری چینِ جبیں سے، غمِ پنہاں سمجھا
رازِ مکتوب بہ بے ربطیِ عنواں سمجھا

یک الف بیش نہیں، صیقلِ آئینہ ہنوز
چاک کرتا ہوں میں، جب سے کہ گریباں سمجھا

شرحِ اسبابِ گرفتاریِ خاطر، مت پوچھ
اس قدر تنگ ہوا دل، کہ میں زنداں سمجھا

بدگمانی نے نہ چاہا اُسے سرگرمِ خرام
رخ پہ ہر قطرہ عرق، دیدۂ حیراں سمجھا

ताज़ः नहीं है नश्शः-ए-फ़िक्र-ए-सुख़न मुझे
तिरयाकि-ए-क़दीम हूँ दूद-ए-चराग़ का

सौ बार बन्द-ए-'श्रिश्क़ से आज़ाद हम हुये
पर क्या करें, कि दिल ही 'श्रदू है फ़राग़ का

बेख़ून-ए-दिल है चश्म में मौज-ए-निगह ग़ुबार
यह मैकदः ख़राब है, मै के सुराग़ का

बाग़-ए-शिगुफ़्तः तेरा, बिसात-ए-निशात-ए-दिल
श्रब्र-ए-बहार, ख़ुमकदः किसके दिमाग़ का

३५

वह मिरी चीन-ए-जबीं से, ग़म-ए-पिन्हाँ समझा
राज़-ए-मक्तूब ब बेरब्ति-ए-'श्रुन्वाँ समझा

यक श्रलिफ़ बेश नहीं, सैक़ल-ए-श्राईनः हनोज़
चाक करता हूँ मैं, जब से कि गरीबाँ समझा

शर्ह-ए-श्रस्बाब-ए-गिरफ़्तारि-ए-ख़ातिर, मत पूछ
इस क़दर तंग हुश्रा दिल, कि मैं ज़िन्दाँ समझा

बदगुमानी ने न चाहा उसे सरगर्म-ए-ख़िराम
रुख़ प हर क़तरः 'श्ररक़, दीदः-ए-हैराँ समझा

عجز سے اپنے یہ جانا، کہ وہ بد خُو ہو گا
نبضِ خس سے تپشِ شعلۂ سوزاں سمجھا

سفرِ عشق میں کی ضعف نے راحت طلبی
ہر قدم سائے کو میں اپنے شبستاں سمجھا

تھا گریزاں مژۂ یار سے دل، تا دمِ مرگ
دفعِ پیکانِ قضا، اس قدر آساں سمجھا

دل دیا جان کے کیوں اُس کو وفادار، اسد
غلطی کی، کہ جو کافر کو مسلماں سمجھا

۳٦

پھر مجھے دیدۂ تر یاد آیا
دل، جگر تشنۂ فریاد آیا

دم لیا تھا نہ قیامت نے ہنوز
پھر ترا وقتِ سفر یاد آیا

سادگی ہائے تمنا، یعنی
پھر وہ نیرنگِ نظر یاد آیا

عذرِ واماندگی، اے حسرت دل
نالہ کرتا تھا، جگر یاد آیا

'अज्ज़ से अपने यह जाना, कि वह बद्ख़ू होगा
नब्ज़-ए-ख़स से तपिश-ए-शो'ल:-ए-सोज़ाँ समझा

सफ़र-ए-'अिश्क़ में की ज़ो'फ़ ने राहत तलबी
हर क़दम साये को मैं अपने शबिस्ताँ समझा

था गुरेज़ाँ मिश़:-ए-यार से दिल, ता दम-ए-मर्ग
दफ़'-ए-पैकान-ए-क़ज़ा, इस क़दर आसाँ समझा

दिल दिया जान के क्यों उसको वफ़ादार, असद
ग़लती की, कि जो काफ़िर को मुसलमाँ समझा

३६

फिर मुझे दीद:-ए-तर याद आया
दिल, जिगर तश्न:-ए-फ़रियाद आया

दम लिया था न क़यामत ने हनोज़
फिर तिरा वक़्त-ए-सफ़र याद आया

सादगीहा -ए- तमन्ना , या'नी
फिर वह नैरंग-ए-नज़र याद आया

'अुज़्र-ए-वामान्दगी, अय हसरत-ए-दिल
नाल: करता था, जिगर याद आया

زندگی یوں بھی گزر ہی جاتی
کیوں ترا راہ گزر یاد آیا

کیا ہی رضواں سے لڑائی ہوگی
گھر ترا خلد میں گر یاد آیا

آہ وہ جرأتِ فریاد کہاں
دل سے تنگ آ کے جگر یاد آیا

پھر ترے کوچے کو جاتا ہے خیال
دلِ گم گشتہ، مگر یاد آیا

کوئی ویرانی سی ویرانی ہے
دشت کو دیکھ کے گھر یاد آیا

میں نے مجنوں پہ لڑکپن میں، اسد
سنگ اُٹھایا تھا، کہ سر یاد آیا

۳۷

ہوئی تاخیر تو کچھ باعثِ تاخیر بھی تھا
آپ آتے تھے، مگر کوئی عناں گیر بھی تھا

تم سے بے جا، ہے مجھے اپنی تباہی کا گِلا
اُس میں کچھ شائبۂ خوبیِ تقدیر بھی تھا

ज़िन्दगी यों भी गुज़र ही जाती
क्यों तिरा राहगुज़र याद आया

क्या ही रिज़्वाँ से लड़ाई होगी
घर तिरा ख़ुल्द में गर याद आया

आह वह जुरअत-ए-फ़रियाद कहाँ
दिल से तंग आ के जिगर याद आया

फिर तिरे कूचे को जाता है ख़याल
दिल-ए-गुमगश्त:, मगर याद आया

कोई वीरानी सी वीरानी है
दश्त को देख के घर याद आया

मैं ने मजनूँ प लड़कपन में, असद
संग उठाया था, कि सर याद आया

३७

हुई ताख़ीर, तो कुछ बा'अिस-ए-ताख़ीर भी था
आप आते थे, मगर कोई 'अिनाँगीर भी था

तुम से बेजा, है मुझे अपनी तबाही का गिला
उसमें कुछ शाइब:-ए-ख़ूबि-ए-तक़दीर भी था

تو مجھے بھول گیا ہو ، تو پتا بتلا دوں
کبھی فتراک میں تیرے ، کوئی نخچیر بھی تھا

قید میں، ہے ترے وحشی کو، وہی زلف کی یاد
ہاں کچھ اک رنجِ گراں باریِ زنجیر بھی تھا

بجلی اک کوند گئی آنکھوں کے آگے، تو کیا
بات کرتے، کہ میں لب تشنۂ تقریر بھی تھا

یوسف اُس کو کہوں، اور کچھ نہ کہے،خیر ہوئی
گر بگڑ بیٹھے ، تو میں لائقِ تعزیر بھی تھا

دیکھ کر غیر کو ، ہو کیوں نہ کلیجا ٹھنڈا
نالہ کرتا تھا، ولے طالبِ تاثیر بھی تھا

پیشے میں عیب نہیں ، رکھیے نہ فرہاد کو نام
ہم ہی آشفتہ سروں میں ، وہ جواں میر بھی تھا

ہم تھے مرنے کو کھڑے، پاس نہ آیا، نہ سہی
آخر اُس شوخ کے ترکش میں کوئی تیر بھی تھا

پکڑے جاتے ہیں فرشتوں کے لکھے پر، ناحق
آدمی کوئی ہمارا ، دمِ تحریر بھی تھا

ریختے کے تمہیں اُستاد نہیں ہو ، غالب
کہتے ہیں، اگلے زمانے میں کوئی میر بھی تھا

तू मुझे भूल गया हो, तो पता बतलादूँ
कभी फ़ितराक में तेरे, कोई नख़्चीर भी था

क़ैद में, है तिरे वहशी को, वही ज़ुल्फ़ की याद
हाँ कुछ इक रंज-ए-गिराँबारि-ए-ज़ंजीर भी था

बिजली इक कौन्द गई आँखों के आगे, तो क्या
बात करते, कि मैं लब तश्नः-ए-तक़रीर भी था

यूसुफ़ उसको कहूँ, और कुछ न कहे, ख़ैर हुई
गर बिगड़ बैठे, तो मैं लाइक़-ए-ता'ज़ीर भी था

देख कर ग़ैर को, हो क्यों न कलेजा ठण्डा
नालः करता था, वले तालिब-ए-तासीर भी था

पेशे में 'ऐब नहीं, रखिये न फ़रहाद को नाम
हम ही आशुफ़्तःसरों में, वह जवाँ मीर भी था

हम थे मरने को खड़े, पास न आया, न सही
आख़िर उस शोख़ के तरकश में कोई तीर भी था

पकड़े जाते हैं फ़रिश्तों के लिखे पर, नाहक़
आदमी कोई हमारा, दम-ए-तहरीर भी था

रीख़्ते के तुम्हीं उस्ताद नहीं हो, ग़ालिब
कहते हैं, अगले ज़माने में कोई मीर भी था

۳۸

لبِ خشک در تشنگی، مردگاں کا
زیارت کدہ ہوں، دل آزردگاں کا

ہمہ نا اُمیدی، ہمہ بد گمانی
میں دل ہوں، فریبِ وفا خوردگاں کا

۳۹

تو دوست کسی کا بھی، ستم گر، نہ ہوا تھا
اوروں پہ ہے وہ ظلم، کہ مجھ پر نہ ہوا تھا

چھوڑا مہِ نخشب کی طرح، دستِ قضا نے
خورشید ہنوز اس کے برابر نہ ہوا تھا

توفیق باندازۂ ہمت ہے ازل سے
آنکھوں میں ہے وہ قطرہ، کہ گوہر نہ ہوا تھا

جب تک کہ نہ دیکھا تھا، قدِ یار کا عالم
میں معتقدِ فتنۂ محشر نہ ہوا تھا

میں سادہ دل، آزردگیِ یار سے خوش ہوں
یعنی سبقِ شوق، مکرر نہ ہوا تھا

३८

लब-ए-ख़ुश्क दर तशनिगी, मुर्दगाँ का
जियारत कदः हूँ, दिल आज़ुर्दगाँ का

हमः नाउमीदी, हमः बदगुमानी
मैं दिल हूँ, फ़रेब-ए-वफ़ा ख़ुर्दगाँ का

३९

तू दोस्त किसी का भी, सितमगर, न हुआ था
औरों प है वह ज़ुल्म, कि मुझ पर न हुआ था

छोड़ा मह-ए-नख़्शब की तरह, दस्त-ए-क़ज़ा ने
ख़ुर्शीद हनोज़ उसके बराबर न हुआ था

तौफ़ीक़ ब अन्दाज़ः-ए-हिम्मत है अज़ल से
आँखों में है वह क़तरः, कि गौहर न हुआ था

जब तक कि न देखा था, क़द-ए-यार का 'आलम
मैं मो'तक़िद-ए-फ़ितनः-ए-महशर न हुआ था

मैं सादः दिल, आज़ुर्दगि-ए-यार से ख़ुश हूँ
या'नी सबक़-ए-शौक़, मुकर्रर न हुआ था

دریاے معاصی، تنک آبی سے، ہوا خشک
میرا سرِ دامن بھی، ابھی تر نہ ہوا تھا

جاری تھی اسد، داغ جگر سے مرے تحصیل
آتش کدہ، جاگیرِ سمندر نہ ہوا تھا

٤٠

شب، کہ وہ مجلس فروزِ خلوتِ ناموس تھا
رشتۂ ہر شمع، خارِ کسوتِ فانوس تھا

مشہدِ عاشق سے کوسوں تک جو اُگتی ہے حنا
کس قدر، یارب، ہلاکِ حسرتِ پابوس تھا

حاصلِ الفت نہ دیکھا، جُز شکستِ آرزو
دل بہ دل پیوستہ، گویا اک لبِ افسوس تھا

کیا کہوں بیماریِ غم کی فراغت کا بیاں
جو کہ کھایا خونِ دل، بے منتِ کیموس تھا

٤١

آئینہ دیکھ، اپنا سا منھ لے کے رہ گئے
صاحب کو دل نہ دینے پہ، کتنا غرور تھا

दरिया-ए-म'आसी, तुनुक आबी से, हुआ ख़ुश्क
मेरा सर-ए-दामन भी, अभी तर न हुआ था

जारी थी असद, दाग़-ए-जिगर से मिरे तहसील
आतशकदः, जागीर-ए-समन्दर न हुआ था

४०

शब, कि वह मजलिस फ़रोज़-ए-ख़ल्वत-ए-नामूस था
रिश्तः-ए-हर शम'अ, ख़ार-ए-किसवत-ए-फ़ानूस था

मशहद-ए-'आशिक़ से कोसों तक जो उगती है हिना
किसक़दर, यारब, हलाक-ए-हसरत-ए-पाबोस था

हासिल-ए-उल्फ़त न देखा, जुज़ शिकस्त-ए-आरज़ू
दिल बदिल पैवस्तः, गोया इक लब-ए-अफ़सोस था

क्या कहूँ बीमारि-ए-ग़म की फ़राग़त का बयाँ
जो कि खाया ख़ून-ए-दिल, बेमिन्नत-ए-कीमूस था

४१

आईनः देख, अपना सा मुँह ले के रह गये
साहब को, दिल न देने प कितना ग़ुरूर था

قاصد کو اپنے ہاتھ سے گردن نہ ماریے
اُس کی خطا نہیں ہے، یہ میرا قصور تھا

٤٢

عرضِ نیازِ عشق کے قابل نہیں رہا
جس دل پہ ناز تھا مجھے، وہ دل نہیں رہا

جاتا ہوں داغِ حسرتِ ہستی لئے ہوئے
ہوں شمعِ کشتہ، درخورِ محفل نہیں رہا

مرنے کی اے دل، اور ہی تدبیر کر، کہ میں
شایانِ دست و بازوے قاتل نہیں رہا

بر رُوے شش جہت، درِ آئینہ باز ہے
یاں امتیازِ ناقص و کامل نہیں رہا

وا کر دیے ہیں شوق نے، بندِ نقابِ حسن
غیر از نگاہ، اب کوئی حائل نہیں رہا

گو میں رہا رہینِ ستم ہاے روزگار
لیکن ترے خیال سے غافل نہیں رہا

دل سے ہواے کشتِ وفا مٹ گئی، کہ واں
حاصل، سواے حسرتِ حاصل نہیں رہا

क़ासिद को अपने हाथ से गर्दन न मारिये
उसकी ख़ता नहीं है, यह मेरा क़ुसूर था

४२

अर्ज़-ए-नियाज़-ए-'अिश्क़ के क़ाबिल नहीं रहा
जिस दिल प नाज़ था मुझे, वह दिल नहीं रहा

जाता हूँ दाग़-ए-हसरत-ए-हस्ती लिये हुये
हूँ शम'-ए-कुश्तः, दर ख़ुर-ए-महफ़िल नहीं रहा

मरने की, अय दिल, और ही तदबीर कर, कि मैं
शायान-ए-दस्त-ओ-बाज़ु-ए-क़ातिल नहीं रहा

बर रु-ए-शश जिहत, दर-ए आईनः बाज़ है
याँ इम्तियाज़-ए-नाक़िस-ओ-कामिल नहीं रहा

वा कर दिये हैं शौक़ ने, बन्द-ए-नक़ाब-ए-हुस्न
ग़ैर अज़ निगाह, अब कोई हाइल नहीं रहा

गो मैं रहा रहीन-ए-सितमहा-ए-रोज़गार
लेकिन तिरे ख़याल से ग़ाफ़िल नहीं रहा

दिल से हवा-ए-किश्त-ए-वफ़ा मिट गई, कि वाँ
हासिल, सिवाय हसरत-ए-हासिल नहीं रहा

بے دادِ عشق سے نہیں ڈرتا، مگر اسد
جس دل پہ ناز تھا مجھے، وہ دل نہیں رہا

٤٣

رشک کہتا ہے، کہ اُس کا غیر سے اخلاص، حیف
عقل کہتی ہے، کہ وہ بے مہر کس کا آشنا

ذرہ ذرہ ساغرِ مے خانۂ نیرنگ ہے
گردشِ مجنوں، بہ چشمک ہائے لیلیٰ آشنا

شوق ہے ساماں طرازِ نازشِ اربابِ عجز
ذرہ صحرا دست گاہ و قطرہ دریا آشنا

میں، اور اک آفت کا ٹکڑا، وہ دلِ وحشی، کہ ہے
عافیت کا دشمن اور آوارگی کا آشنا

شکوہ سنجِ رشکِ ہم دیگر نہ رہنا چاہیے
میرا زانو مونس اور آئینہ تیرا آشنا

کوہ کن، نقاشِ یک تمثالِ شیریں تھا، اسد
سنگ سے سر مار کر ہووے نہ پیدا آشنا

बेदाद-ए-'अिश्क़ से नहीं डरता, मगर असद
जिस दिल प नाज़ था मुझे, वह दिल नहीं रहा

४३

रश्क कहता है, कि उसका ग़ैर से इख़लास, हैफ़
'अक़्ल कहती है, कि वह बेमेह्र किस का आश्ना

ज़र्रः ज़र्रः साग़र-ए-मैख़ानः-ए-नैरँग है
गर्दिश-ए-मजनूँ, ब चश्मकहा-ए-लैला आश्ना

शौक़ है सामाँ तराज़-ए-नाज़िश-ए-अर्बाब-ए-'अिज्ज़
ज़र्रः सहरा दस्तगाह-ओ-क़तरः दरिया आश्ना

मैं, और इक आफ़त का टुकड़ा, वह दिल-ए-वहशी, कि है
'आफ़ियत का दुश्मन और आवारगी का आश्ना

शिक्वः संज-ए-रश्क-ए-हमदीगर न रहना चाहिये
मेरा ज़ानू मूनिस और आईनः तेरा आश्ना

कोहकन, नक़्क़ाश-ए-यक तिम्साल-ए-शीरीं था, असद
सँग से सर मार कर होवे न पैदा आश्ना

٤٤

ذکر اُس پری وش کا، اور پھر بیاں اپنا
بن گیا رقیب، آخر، تھا جو راز داں اپنا

مے وہ کیوں بہت پیتے، بزمِ غیر میں یارب
آج ہی ہوا منظور، اُن کو امتحاں اپنا

منظر اک بلندی پر، اور ہم بنا سکتے
عرش سے اِدھر ہوتا، کاش کے مکاں اپنا

دے وہ جس قدر ذلت، ہم ہنسی میں ٹالیں گے
بارے آشنا نکلا، اُن کا پاسباں اپنا

دردِ دل لکھوں کب تک، جاؤں اُن کو دکھلادوں
اُنگلیاں فگار اپنی، خامہ خونچکاں اپنا

گھستے گھستے مٹ جاتا، آپ نے عبث بدلا
ننگِ سجدہ سے میرے، سنگِ آستاں اپنا

تا کرے نہ غمازی، کر لیا ہے دشمن کو
دوست کی شکایت میں، ہم نے ہم‌زباں اپنا

ہم کہاں کے دانا تھے، کس ہنر میں یکتا تھے
بے سبب ہوا غالب، دشمن آسماں اپنا

४४

ज़िक्र उस परीवश का, और फिर बयाँ अपना
बन गया रक़ीब, आख़िर, था जो राज़दाँ अपना

मै वह क्यों बहुत पीते, बज़्म-ए-ग़ैर में, यारब
आजही हुआ मंज़ूर, उनको इम्तिहाँ अपना

मंज़र इक बलन्दी पर, और हम बना सक्ते
'अर्श से इधर होता, काशके मकाँ अपना

दे वह जिस क़दर ज़िल्लत, हम हँसी में टालेंगे
बारे आश्ना निक्ला, उनका पास्बाँ अपना

दर्द-ए-दिल लिखूँ कब तक, जाऊँ उनको दिखलादूँ
उँगलियाँ फ़िगार अपनी, ख़ामः ख़ूँचकाँ अपना

घिसते घिसते मिट जाता, आपने 'अबस बदला
नँग-ए-सिज्दः से मेरे, सँग-ए-आस्ताँ अपना

ता करे न ग़म्माज़ी, कर लिया है दुश्मन को
दोस्त की शिकायत में, हमने हमज़बाँ अपना

हम कहाँ के दाना थे, किस हुनर में यक्ता थे
बे सबब हुआ ग़ालिब, दुश्मन आस्माँ अपना

٤٥

سرمۂ مفتِ نظر ہوں، میری قیمت یہ ہے
کہ رہے چشمِ خریدار پہ احساں میرا

رخصتِ نالہ مجھے دے، کہ مبادا ظالم
تیرے چہرے سے ہو ظاہر، غمِ پنہاں میرا

٤٦

غافل بہ وہمِ ناز خود آرا ہے، ورنہ یاں
بے شانۂ صبا نہیں طرہ گیاہ کا

بزمِ قدح سے عیشِ تمنا نہ رکھ، کہ رنگ
صیدِ زدام جستہ ہے، اِس دامِ گاہ کا

رحمت اگر قبول کرے، کیا بعید ہے
شرمندگی سے عذر نہ کرنا گناہ کا

مقتل کو کس نشاط سے جاتا ہوں میں، کہ ہے
پُر گل، خیالِ زخم سے، دامن نگاہ کا

جاں در ہوائے یک نگہِ گرم ہے، اسد
پروانہ ہے وکیل، ترے داد خواہ کا

४५

सुरमः-ए-मुफ़्त-ए-नज़र हूँ, मिरी क़ीमत यह है
कि रहे चश्म-ए-ख़रीदार प एहसाँ मेरा

रुख़सत-ए-नालः मुझे दे, कि मबादा ज़ालिम
तेरे चेहरे से हो ज़ाहिर, ग़म-ए-पिन्हाँ मेरा

४६

ग़ाफ़िल ब वहम-ए-नाज़ ख़ुद आरा है, वर्नः याँ
बेशानः-ए-सबा नहीं तुर्रः गियाह का

बज़्म-ए-क़दह से 'ऐश-ए-तमन्ना न रख, कि रँग
सैद-ए-ज़िदाम जस्तः है, इस दाम गाह का

रहमत अगर क़ुबूल करे, क्या ब'ईद है
शर्मिन्दगी से 'उज़्र न करना गुनाह का

मक़्तल को किस निशात से जाता हूँ मैं, कि है
पुर गुल, ख़याल-ए-ज़ख़्म से, दामन निगाह का

जाँ दर हवा-ए-यक निगह-ए-गर्म है, असद
परवानः है वकील, तिरे दाद ख़्वाह का

٤٧

جور سے باز آئے پر باز آئیں کیا
کہتے ہیں، ہم تجھ کو منھ دکھلائیں کیا

رات دن، گردش میں ہیں سات آسماں
ہو رہے گا کچھ نہ کچھ گھبرائیں کیا

لاگ ہو، تو اُس کو ہم سمجھیں لگاؤ
جب نہ ہو کچھ بھی، تو دھوکا کھائیں کیا

ہو لیے کیوں نامہ بر کے ساتھ ساتھ
یارب، اپنے خط کو ہم پہنچائیں کیا

موجِ خوں، سر سے گزر ہی کیوں نہ جائے
آستانِ یار سے اُٹھ جائیں کیا

عمر بھر دیکھا کیے، مرنے کی راہ
مر گئے پر، دیکھیے، دکھلائیں کیا

پوچھتے ہیں وہ، کہ غالب کون ہے
کوئی بتلاؤ، کہ ہم بتلائیں کیا

४७

जौर से बाज़ आये पर बाज़ आयें क्या
कहते हैं, हम तुझको मुँह दिखलायें क्या

रात दिन, गर्दिश में हैं सात आस्माँ
हो रहेगा कुछ न कुछ, घबरायें क्या

लाग हो, तो उसको हम समझें लगाव
जब न हो कुछ भी, तो धोका खायें क्या

हो लिये क्यों नामःबर के साथ साथ
यारब, अपने ख़त को हम पहुँचायें क्या

मौज-ए-ख़ूँ, सर से गुज़र ही क्यों न जाय
आस्तान-ए-यार से उठ जायें क्या

'अुम्र भर देखा किये, मरने की राह
मर गये पर, देखिये, दिखलायें क्या

पूछते हैं वह, कि ग़ालिब कौन है
कोई बतलाओ, कि हम बतलायें क्या

۴۸

لطافت بے کثافت جلوہ پیدا کر نہیں سکتی
چمن زنگار ہے آئینۂ بادِ بہاری کا

حریفِ جوششِ دریا نہیں، خود داریِ ساحل
جہاں ساقی ہو تُو، باطل ہے دعویٰ ہوشیاری کا

۴۹

عشرتِ قطرہ ہے، دریا میں فنا ہو جانا
درد کا حد سے گزرنا، ہے دوا ہو جانا

تجھ سے، قسمت میں مری، صورتِ قفلِ ابجد
تھا لکھا، بات کے بنتے ہی، جدا ہو جانا

دل ہوا کش مکشِ چارۂ زحمت میں تمام
مٹ گیا گھسنے میں اس عقدے کا وا ہو جانا

اب جفا سے بھی ہیں محروم ہم، اللہ اللہ
اس قدر دشمنِ اربابِ وفا ہو جانا

ضعف سے، گریہ مُبدل بہ دمِ سرد ہوا
باور آیا ہمیں پانی کا ہوا ہو جانا

४८

लताफ़त बेकसाफ़त जल्वः पैदा कर नहीं सकती
चमन जंगार है आईनः-ए-बाद-ए-बहारी का

हरीफ़-ए-जोशिश-ए-दरिया नहीं; ख़ुद्दारि-ए-साहिल
जहाँ साक़ी हो तू, बातिल है दा'वा होशियारी का

४९

'अिश्रत-ए-क़तरः है, दरिया में फ़ना हो जाना
दर्द का हद से गुज़रना, है दवा हो जाना

तुझसे, क़िस्मत में मिरी, सूरत-ए-क़ुफ़्ल-ए-अबजद
था लिखा, बात के बनते ही, जुदा हो जाना

दिल हुआ कशमकश-ए-चारः-ए-ज़हमत में तमाम
मिट गया घिसने में इस 'अुक़्दे का वा हो जाना

अब जफ़ा से भी हैं महरूम हम, अल्लह अल्लाह
इस क़दर दुश्मन-ए-अरबाब-ए-वफ़ा हो जाना

ज़ो'फ़ से, गिरियः मुबद्दल बदम-ए-सर्द हुआ
बावर आया हमें पानी का हवा हो जाना

دل سے مٹنا تری انگشتِ حنائی کا خیال
ہو گیا، گوشت سے ناخن کا جدا ہو جانا

ہے مجھے، ابرِ بہاری کا برس کر کھلنا
روتے روتے غمِ فرقت میں، فنا ہو جانا

گر نہیں نکہتِ گل کو ترے کوچے کی ہوس
کیوں ہے، گردِ رہِ جولانِ صبا ہو جانا

تاکہ تجھ پر کھلے، اعجازِ ہوائے صیقل
دیکھ برسات میں سبز آئینے کا ہو جانا

بخشے ہے جلوۂ گل ذوقِ تماشا، غالب
چشم کو چاہیے ہر رنگ میں وا ہو جانا

۵۰

پھر ہوا وقت، کہ ہو بال کشا موجِ شراب
دے بطِ مے کو دل و دستِ شنا موجِ شراب

پوچھ مت، وجہِ سیہ مستیِ اربابِ چمن
سایۂ تاک میں ہوتی ہے ہوا موجِ شراب

جو ہوا غرقۂ مے، بختِ رسا رکھتا ہے
سر سے گزرے پہ بھی، ہے بالِ ہما، موجِ شراب

दिल से मिटना तिरी अँगुश्त-ए-हिनाई का ख़्याल
हो गया, गोश्त से नाख़ुन का जुदा हो जाना

है मुझे, अब्र-ए-बहारी का बरस कर खुलना
रोते रोते ग़म-ए-फ़ुर्क़त में, फ़ना हो जाना

गर नहीं नक्हत-ए-गुल को तिरे कूचे की हवस
क्यों है, गर्द-ए-रह-ए-जौलान-ए-सबा हो जाना

ताकि तुझ पर खुले एʻजाज़-ए-हवा-ए-सैक़ल
देख बरसात में सब्ज़ आइने का हो जाना

बख़्शे है जल्व:-ए-गुल ज़ौक़-ए-तमाशा, ग़ालिब
चश्म को चाहिये हर रँग में वा हो जाना

५०

फिर हुआ वक़्त, कि हो बाल कुशा मौज-ए-शराब
दे बत-ए-मै को दिल-ओ-दस्त-ए-शना मौज-ए-शराब

पूछ मत, वज्ह-ए-सियह मस्ति-ए-अरबाब-ए-चमन
साय:-ए-ताक में होती है हवा, मौज-ए-शराब

जो हुआ ग़र्क़:-ए-मै, बख़्त-ए-रसा रखता है
सर से गुज़रे प भी, है बाल-ए-हुमा, मौज-ए-शराब

ہے یہ برسات وہ موسم، کہ عجب کیا ہے، اگر
موجِ ہستی کو کرے فیضِ ہوا، موجِ شراب

چار موج اُٹھتی ہے طوفانِ طرب سے ہر سُو
موجِ گل، موجِ شفق، موجِ صبا، موجِ شراب

جس قدر روحِ نباتی ہے جگر تشنۂ ناز
دے ہے تسکیں بدمِ آبِ بقا موجِ شراب

بسکہ دوڑے ہے رگِ تاک میں خوں ہو ہو کر
شہپرِ رنگ سے ہے بال کشا، موجِ شراب

موجۂ گل سے چراغاں ہے، گزر گاہِ خیال
ہے تصور میں زبس، جلوہ نما موجِ شراب

نشے کے پردے میں ہے محو تماشاے دماغ
بسکہ رکھتی ہے سرِ نشو و نما موجِ شراب

ایک عالم پہ ہے، طوفانیِ کیفیتِ فصل
موجۂ سبزۂ نو خیز سے تا موجِ شراب

شرحِ ہنگامۂ ہستی ہے، زہے موسمِ گل
رہبرِ قطرہ بہ دریا ہے، خوشا موجِ شراب

ہوش اُڑتے ہیں مرے، جلوۂ گل دیکھ، اسد
پھر ہوا وقت، کہ ہو بال کشا موجِ شراب

है यह बरसात वह मौसम, कि 'अजब क्या है, अगर
मौज-ए-हस्ती को करे फ़ैज़-ए-हवा, मौज-ए-शराब

चार मौज उठती है तूफ़ान-ए-तरब से हर सू
मौज-ए-गुल, मौज-ए-शफ़क़, मौज-ए-सबा, मौज-ए-शराब

जिस क़दर रूह-ए-नबाती है जिगर तश्नः-ए-नाज़
दे है तस्कीं बदम-ए-आब-ए-बक़ा मौज-ए-शराब

बसकि दौड़े है रग-ए-ताक में ख़ूँ हो हो कर
शहपर-ए-रँग से है बाल कुशा, मौज-ए-शराब

मौजः-ए-गुल से चराग़ाँ है, गुज़रगाह-ए-ख़याल
है तसव्वुर में ज़िबस, जल्वःनुमा मौज-ए-शराब

नश्शे के पर्दे में है मेह्व-ए-तमाशा-ए-दिमाग़
बसकि रखती है सर-ए-नशव-ओ-नुमा मौज-ए-शराब

एक 'आलम प है, तूफ़ानि-ए-कैफ़ीयत-ए-फ़स्ल
मौजः-ए-सब्ज़ः-ए-नौख़ेज़ से ता मौज-ए-शराब

शर्ह-ए-हँगामः-ए-हस्ती है, ज़िहे मौसम-ए-गुल
रहबर-ए-क़तरः बदरिया है, ख़ुशा मौज-ए-शराब

होश उड़ते हैं मिरे, जल्वः-ए-गुल देख असद
फिर हुआ वक़्त, कि हो बाल कुशा मौज-ए-शराब

۵۱

افسوس، کہ دنداں کا کیا رزق، فلک نے
جن لوگوں کی تھی، درخورِ عقدِ گہر، انگشت

کافی ہے نشانی تری، چھلے کا نہ دینا
خالی مجھے دکھلا کے، بوقتِ سفر، انگشت

لکھتا ہوں، اسد سوزشِ دل سے، سخنِ گرم
تا رکھ نہ سکے کوئی مرے حرف پر انگشت

۵۲

رہا گر کوئی تا قیامت، سلامت
پھر اک روز مرنا ہے، حضرت سلامت

جگر کو مرے عشقِ خوں نابہ مشرب
لکھے ہے خداوندِ نعمت سلامت

علی الرغمِ دشمن، شہیدِ وفا ہوں
مبارک مبارک، سلامت سلامت

نہیں گر سر و برگِ ادراکِ معنی،
تماشائے نیرنگِ صورت، سلامت

५१

अफ़सोस, कि दन्दाँ का किया रिज़्क़; फ़लक ने
जिन लोगों की थी, दरख़ुर-ए-'अिक़्द-ए-गुहर, अँगुश्त

काफ़ी है निशानी तिरी, छल्ले का न देना
ख़ाली मुझे दिखला के, बवक़्त-ए-सफ़र, अँगुश्त

लिखता हूँ, असद, सोज़िश-ए-दिल से, सुख़न-ए-गर्म
ता रख न सके कोई मिरे हर्फ़ पर अँगुश्त

५२

रहा गर कोई ता क़यामत, सलामत
फिर इक रोज़ मरना है, हज़रत सलामत

जिगर को मिरे 'अिश्क़-ए-ख़ूँनाबः मशरब
लिखे है ख़ुदावन्द-ए-ने'मत सलामत

'अलर्रग़म-ए-दुश्मन, शहीद-ए-वफ़ा हूँ
मुबारक मुबारक, सलामत सलामत

नहीं गर सर-ओ-बर्ग-ए-इदराक-ए-मा'नी
तमाशा-ए-नैरँग-ए-सूरत, सलामत

۵۳

مند گئیں، کھولتے ہی کھولتے، آنکھیں، غالب
یار لائے مری بالیں پہ اُسے، پر کس وقت

۵۴

آمدِ خط سے ہوا ہے سرد جو، بازارِ دوست
دودِ شمعِ کشتہ تھا، شاید خطِ رخسارِ دوست

اے دل ناعاقبت اندیش، ضبطِ شوق کر
کون لاسکتا ہے تابِ جلوۂ دیدارِ دوست

خانہ ویراں سازیِ حیرت تماشا کیجیے
صورتِ نقشِ قدم، ہوں رفتۂ رفتارِ دوست

عشق میں، بیدادِ رشکِ غیر نے مارا مجھے
کشتۂ دشمن ہوں آخر، گرچہ تھا بیمارِ دوست

چشمِ ما روشن، کہ اس بے درد کا دل شاد ہے
دیدۂ پُرخوں ہمارا، ساغرِ سرشارِ دوست

غیر، یوں کرتا ہے میری پرسش، اس کے ہجر میں
بے تکلف دوست ہو جیسے کوئی غم خوارِ دوست

५३

मुँद गईं, खोलते ही खोलते आँखें, ग़ालिब
यार लाये मिरी बालीं प उसे, पर किस वक़्त

५४

आमद-ए-ख़त से हुआ है सर्द जो, बाज़ार-ए-दोस्त
दूद-ए-शम'-ए-कुश्तः था, शायद ख़त-ए-रुख़सार-ए-दोस्त

अय दिल-ए-ना 'आक़िबत अन्देश ज़ब्त-ए-शौक़ कर
कौन ला सकता है ताब-ए-जल्वः-ए-दीदार-ए-दोस्त

ख़ानः वीराँ साज़ि-ए-हैरत तमाशा कीजिये
सूरत-ए-नक़्श-ए-क़दम, हूँ रफ़्तः-ए-रफ़्तार-ए-दोस्त

'अिश्क़ में, बेदाद-ए-रश्क-ए-ग़ैर ने मारा मुझे
कुश्तः-ए-दुश्मन हूँ आख़िर, गरचेः था बीमार-ए-दोस्त

चश्म-ए-मा रौशन, कि उस बेदर्द का दिल शाद है
दीदः-ए-पुरख़ूँ हमारा, साग़र-ए-सरशार-ए-दोस्त

ग़ैर, यों करता है मेरी पुरसिश, उसके हिज्र में
बे तकल्लुफ़ दोस्त हो जैसे कोई ग़मख़्वार-ए-दोस्त

تا کہ میں جانوں، کہ ہے اس کی رسائی واں تلک
مجھ کو دیتا ہے، پیامِ وعدۂ دیدارِ دوست

جب کہ میں کرتا ہوں اپنا شکوۂ ضعفِ دماغ
سر کرے ہے وہ، حدیثِ زُلفِ عنبر بارِ دوست

چپکے چپکے مجھ کو روتے دیکھ پاتا ہے، اگر
ہنس کے کرتا ہے بیانِ شوخیِ گفتارِ دوست

مہر بانی ہائے دشمن کی شکایت کیجیے
یا بیاں کیجیے، سپاسِ لذتِ آزارِ دوست

یہ غزل اپنی مجھے جی سے پسند آتی ہے آپ
ہے ردیفِ شعر میں، غالب زبس تکرارِ دوست

۵۵

گلشن میں بندوبست برنگِ دگر، ہے آج
قُمری کا طوق حلقۂ بیرونِ در، ہے آج

آتا ہے ایک پارۂ دل ہر فغاں کے ساتھ
تارِ نفس، کمندِ شکارِ اثر، ہے آج

اے عافیت کنارہ کر، اے انتظام چل
سیلابِ گریہ درپےِ دیوار و در، ہے آج

ताकि मैं जानूँ, कि है इसकी रसाई वाँ तलक
मुझको देता है, पयाम-ए-वा'दः-ए-दीदार-ए-दोस्त

जबकि मैं करता हूँ अपना शिक्वः-ए-ज़ो'फ़-ए-दिमाग़
सर करे है वह, हदीस-ए-ज़ुल्फ़-ए-'अंबर बार-ए-दोस्त

चुपके चुपके मुझको रोते देख पाता है, अगर
हँस के करता है बयान-ए-शोख़ि-ए-गुफ़्तार-ए-दोस्त

मेहरबानीहा -ए- दुश्मन की शिकायत कीजिये
या बयाँ कीजे, सिपास-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार-ए-दोस्त

यह ग़ज़ल अपनी मुझे जी से पसन्द आती है आप
है रदीफ़-ए-शे'र में, ग़ालिब, ज़िबस तकरार-ए-दोस्त

५५

गुलशन में बन्द-ओ-बस्त बरँग-ए-दिगर, है आज
क़ुमरी का तौक़ हल्क़ः-ए-बेरून-ए-दर, है आज

आता है एक पारः-ए-दिल हर फ़ुग़ाँ के साथ
तार-ए-नफ़स, कमन्द-ए-शिकार-ए-असर, है आज

अय 'आफ़ियत, किनारः कर, अय इन्तिज़ाम, चल
सैलाब-ए-गिरियः दर पै-ए-दीवार-ओ-दर, है आज

٥٦

لو ہم مریضِ عشق کے تیمار دار ہیں
اچھا اگر نہ ہو، تو مسیحا کا کیا علاج

٥٧

نفس نہ انجمنِ آرزو سے باہر کھینچ
اگر شراب نہیں، انتظارِ ساغر کھینچ

کمالِ گرمیِ سعیِ تلاشِ دید نہ پوچھ
برنگِ خار مرے آئنیے سے جوہر کھینچ

تجھے بہانۂ راحت ہے انتظار، اے دل
کیا ہے کس نے اشارا، کہ نازِ بستر کھینچ

تری طرف ہے بہ حسرت، نظارۂ نرگس
بکوریِ دل و چشمِ رقیب، ساغر کھینچ

بہ نیم غمزہ ادا کر، حقِ ودیعتِ ناز
نیامِ پردۂ زخمِ جگر سے خنجر کھینچ

مرے قدح میں ہے صہبائے آتشِ پنہاں
بروئے سُفرہ، کبابِ دلِ سمندر کھینچ

५६

लो हम मरीज़-ए-'अिश्क़ के तीमारदार हैं
अच्छा अगर न हो, तो मसीहा का क्या 'अिलाज

५७

नफ़स न अंजुमन-ए-आरज़ू से बाहर खेंच
अगर शराब नहीं, इन्तिज़ार-ए-साग़र खेंच

कमाल-ए-गर्मि-ए-स'अि-ए-तलाश-ए-दीद न पूछ
बरँग-ए-ख़ार मिरे आइने से जौहर खेंच

तुझे बहानः-ए-राहत है इन्तिज़ार, अय दिल
किया है किसने इशारः, कि नाज़-ए-बिस्तर खेंच

तिरी तरफ़ है ब हसरत नज़ारः-ए-नरगिस
बकोरि-ए-दिल-ओ-चश्म-ए-रक़ीब, साग़र खेंच

बनीम ग़मज़ः अदा कर, हक़्क़-ए-वदी'अत-ए-नाज़
नियाम-ए-पर्दः-ए-ज़ख़्म-ए-जिगर से ख़ंजर खेंच

मिरे क़दह में है सहबा-ए-आतश-ए-पिन्हाँ
बरू-ए-सुफ़रा, कबाब-ए-दिल-ए-समन्दर खेंच

٥٨

حسن، غمزے کی کشاکش سے چھٹا، میرے بعد
بارے، آرام سے ہیں اہلِ جفا، میرے بعد

منصبِ شیفتگی کے کوئی قابل نہ رہا
ہوئی معزولیِ انداز و ادا، میرے بعد

شمع بجھتی ہے، تو اُس میں سے دھواں اُٹھتا ہے
شعلۂ عشق سیہ پوش ہوا، میرے بعد

خوں ہے دل خاک میں، احوالِ بتاں پر، یعنی
ان کے ناخن ہوئے محتاجِ حنا، میرے بعد

در خورِ عرض نہیں، جوہرِ بے داد کو، جا
نگہِ ناز ہے سرمے سے خفا، میرے بعد

ہے جنوں، اہلِ جنوں کے لئے آغوشِ وداع
چاک ہوتا ہے گریباں سے جدا، میرے بعد

کون ہوتا ہے حریفِ مےِ مرد افگنِ عشق
ہے مکرر لبِ ساقی پہ صلا، میرے بعد

غم سے مرتا ہوں، کہ اتنا نہیں دنیا میں کوئی
کہ کرے تعزیتِ مہر و وفا میرے بعد

५८

हुस्न, ग़मज़े की कशाकश से छुटा, मेरे बा'द
बारे; आराम से हैं अह्ल-ए-जफ़ा, मेरे बा'द

मन्सब-ए-शेफ़्तिगी के कोई क़ाबिल न रहा
हुई मा'ज़ूलि-ए-अन्दाज़-ओ-अदा, मेरे बा'द

शम'अ बुझती है, तो उस में से धुआँ उठता है
शो'लः-ए-'अिश्क़ सियह पोश हुआ, मेरे बा'द

ख़ूँ है दिल ख़ाक में; अह्वाल-ए-बुताँ पर, या'नी
इनके नाख़ुन हुये मुह्ताज-ए-हिना, मेरे बा'द

दरख़ुर-ए-'अर्ज़ नहीं, जौहर-ए-बेदाद को, जा
निगह-ए-नाज़ है सुरमे से ख़फ़ा, मेरे बा'द

है जुनूँ, अहल-ए-जुनूँ के लिये आग़ोश-ए-विदा'अ
चाक होता है गरीबाँ से जुदा, मेरे बा'द

कौन होता है हरीफ़-ए-मै-ए-मर्द अफ़गन-ए-'अिश्क़
है मुकर्रर लब-ए-साक़ी प सला, मेरे बा'द

ग़म से मरता हूँ, कि इतना नहीं दुनिया में कोई
कि करे ता'ज़ियत-ए-मेह्र-ओ-वफ़ा, मेरे बा'द

آئے ہے بے کسیِ عشق پہ رونا، غالب
کس کے گھر جائے گا سیلابِ بلا میرے بعد

۵۹

بلا سے ہیں، جو یہ پیشِ نظر در و دیوار
نگاہِ شوق کو ہیں، بال و پر در و دیوار

وفورِ اشک نے کاشانے کا کیا یہ رنگ
کہ ہو گئے مرے دیوار و در، در و دیوار

نہیں ہے سایہ، کہ سن کر نویدِ مقدمِ یار
گئے ہیں چند قدم پیشتر، در و دیوار

ہوئی ہے کس قدر ارزانیِ مےِ جلوہ
کہ مست ہے ترے کوچے میں ہر در و دیوار

جو ہے تجھے سرِ سودائے انتظار، تو آ
کہ ہیں دکانِ متاعِ نظر در و دیوار

ہجومِ گریہ کا سامان کب کیا میں نے
کہ گر پڑے نہ مرے پانوں پر در و دیوار

وہ آ رہا مرے ہمسائے میں، تو سائے سے
ہوئے فدا در و دیوار پر، در و دیوار

आये है बेकसि-ए-'अिश्क़ प रोना, ग़ालिब
किसके घर जायेगा सैलाब-ए-बला, मेरे बा'द

५९

बला से हैं, जो यह पेश-ए-नज़र दर-ओ-दीवार
निगाह-ए-शौक़ को हैं, बाल-ओ-पर दर-ओ-दीवार

वुफ़ूर-ए-अश्क ने काशाने का किया यह रँग
कि हो गये मिरे दीवार-ओ-दर, दर-ओ-दीवार

नहीं है सायः, कि सुनकर नवेद-ए-मक़दम-ए-यार
गये हैं चन्द क़दम पेश्तर, दर-ओ-दीवार

हुई है किस क़दर अरज़ानि-ए-मै-ए-जल्वः
कि मस्त है तिरे कूचे में हर दर-ओ-दीवार

जो है तुझे सर-ए-सौदा-ए-इन्तिज़ार, तो आ
कि हैं दुकान-ए-मता'-ए-नज़र दर-ओ-दीवार

हुजूम-ए-गिरियः का सामान कब किया मैं ने
कि गिर पड़े न मिरे पाँव पर दर-ओ-दीवार

वह आ रहा मिरे हमसाये में, तो साये से
हुये फ़िदा दर-ओ-दीवार पर, दर-ओ-दीवार

نظر میں کھٹکے ہے، بِن تیرے، گھر کی آبادی
ہمیشہ روتے ہیں ہم، دیکھ کر در و دیوار

نہ پوچھ بے خودیِ عیشِ مقدمِ سیلاب
کہ ناچتے ہیں پڑے، سر بسر در و دیوار

نہ کہہ کسی سے، کہ غالب نہیں زمانے میں
حریفِ رازِ محبت، مگر در و دیوار

۶۰

گھر جب بنا لیا ترے در پر، کہے بغیر
جانے گا اب بھی تُو نہ مرا گھر کہے بغیر

کہتے ہیں، جب رہی نہ مجھے طاقتِ سخن
جانوں کسی کے دل کی میں کیوں کر، کہے بغیر

کام اُس سے آ پڑا ہے، کہ جس کا جہان میں
لیوے نہ کوئی نام، ستمگر کہے بغیر

جی میں ہی کچھ نہیں ہے ہمارے، و گرنہ ہم
سر جائے یا رہے، نہ رہیں پر کہے بغیر

چھوڑوں گا میں نہ اُس بتِ کافر کا پوجنا
چھوڑے نہ خلق گو مجھے کافر کہے بغیر

नज़र में खटके है, बिन तेरे, घर की आबादी
हमेशः रोते हैं हम, देखकर दर-ओ-दीवार

न पूछ बे ख़ुदि-ए-'ऐश-ए-मक़दम-ए-सैलाब
कि नाचते हैं पड़े, सर बसर दर-ओ-दीवार

न कह किसी से, कि ग़ालिब नहीं ज़माने में
हरीफ़-ए-राज़-ए-महब्बत, मगर दर-ओ-दीवार

६०

घर जब बना लिया तिरे दर पर, कहे बिग़ैर
जानेगा अब भी तू न मिरा घर कहे बिग़ैर

कहते हैं, जब रही न मुझे ताक़त-ए-सुख़न
जानूँ किसी के दिल की मैं क्योंकर, कहे बिग़ैर

काम उससे आ पड़ा है, कि जिसका जहान में
लेवे न कोई नाम, सितमगर कहे बिग़ैर

जी में ही कुछ नहीं है हमारे, वगरनः हम
सर जाये या रहे, न रहें पर कहे बिग़ैर

छोड़ूँगा मैं न उस बुत-ए-काफ़िर का पूजना
छोड़े न ख़ल्क़ गो मुझे काफ़िर कहे बिग़ैर

مقصد ہے ناز و غمزه، ولے گفتگو میں، کام
چلتا نہیں ہے، دشنہ و خنجر کہے بغیر

ہر چند ہو، مشاہدۂ حق کی گفتگو
بنتی نہیں ہے، بادہ و ساغر کہے بغیر

بہرا ہوں میں تو چاہیے دونا ہو التفات
سنتا نہیں ہوں بات، مکرر کہے بغیر

غالب، نہ کر حضور میں تو بار بار عرض
ظاہر ہے تیرا حال سب اُن پر، کہے بغیر

٦١

کیوں جل گیا نہ تابِ رخ یار دیکھ کر
جلتا ہوں اپنی طاقتِ دیدار دیکھ کر

آتش پرست کہتے ہیں اہل جہاں مجھے
سرگرم نالہ ہائے شرر بار دیکھ کر

کیا آبروے عشق، جہاں عام ہو جفا
رُکتا ہوں تم کو بے سبب آزار دیکھ کر

मक़सद है नाज़-ओ-ग़मज़ः, वले गुफ़्तगू में, काम
चलता नहीं है, दश्नः-ओ-ख़ंजर कहे बिग़ैर

हरचन्द, हो मुशाहदः-ए-हक़ की गुफ़्तगू
बनती नहीं है, बादः-ओ-साग़र कहे बिग़ैर

बहरा हूँ मैं, तो चाहिये दूना हो इल्तिफ़ात
सुनता नहीं हूँ बात, मुकर्रर कहे बिग़ैर

ग़ालिब, न कर हुज़ूर में तू बार बार 'अर्ज़
ज़ाहिर है तेरा हाल सब उनपर, कहे बिग़ैर

६१

क्यों जल गया न ताब-ए-रुख़-ए-यार देख कर
जलता हूँ, अपनी ताक़त-ए-दीदार देख कर

आतश परस्त कहते हैं अहल-ए-जहाँ मुझे
सरगर्म-ए-नालःहा-ए-शररबार देख कर

क्या आबरू-ए-'अिश्क़, जहाँ 'आम हो जफ़ा
रुकता हूँ तुम को बेसबब आज़ार देख कर

آتا ہے میرے قتل کو، پرجوشِ رشک سے
مرتا ہوں اُس کے ہاتھ میں تلوار دیکھ کر

ثابت ہوا ہے، گردنِ مینا پہ، خونِ خلق
لرزے ہے موجِ مے تری رفتار دیکھ کر

وا حسرتا، کہ یار نے کھینچا ستم سے ہاتھ
ہم کو حریصِ لذتِ آزار دیکھ کر

بک جاتے ہیں ہم آپ، متاعِ سخن کے ساتھ
لیکن، عیارِ طبعِ خریدار دیکھ کر

زُنار باندھ، سُبحۂ صد دانہ توڑ ڈال
رہرو چلے ہے راہ کو ہموار دیکھ کر

ان آبلوں سے پانوں کے، گھبرا گیا تھا میں
جی خوش ہوا ہے راہ کو پُر خار دیکھ کر

کیا بدگماں ہے مجھ سے، کہ آئینے میں میرے
طوطی کا عکس سمجھے ہے، زنگار دیکھ کر

گرنی تھی ہم پہ برقِ تجلی، نہ طُور پر
دیتے ہیں بادہ، ظرفِ قدح خوار دیکھ کر

سر پھوڑنا وہ، غالبِ شوریدہ حال کا
یاد آگیا مجھے، تری دیوار دیکھ کر

आता है मेरे क़त्ल को, पर जोश-ए-रश्क से
मरता हूँ उसके हाथ में तलवार देख कर

साबित हुआ है, गर्दन-ए-मीना प ख़ून-ए-ख़ल्क़
लरज़े है मौज-ए-मै तिरी रफ़्तार देख कर

वा हसरता, कि यार ने खैंचा सितम से हाथ
हम को हरीस-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार देख कर

बिक जाते हैं हम आप, मता'-ए-सुख़न के साथ
लेकिन, 'अयार-ए-तब'-ए-ख़रीदार देख कर

ज़ुन्नार बाँध, सुब्हः-ए-सद् दानः तोड़ डाल
रहरौ चले है राह को, हमवार देख कर

इन आबलों से पाँव के, घबरा गया था मैं
जी ख़ुश हुआ है राह को पुर ख़ार देख कर

क्या बदगुमाँ है मुझ से, कि आईने में मिरे
तूती का 'अक्स समझे है, ज़ंगार देख कर

गिरनी थी हम प बर्क़-ए-तजल्ली, न तूर पर
देते हैं बादः, ज़र्फ़-ए-क़दह ख़्वार देख कर

सर फोड़ना वह, ग़ालिब-ए-शोरीदः हाल का
याद आ गया मुझे, तिरी दीवार देख कर

لرزتا ہے مرا دل، زحمتِ مہرِ درخشاں پر
میں ہوں وہ قطرۂ شبنم، کہ ہو خارِ بیاباں پر

نہ چھوڑی حضرتِ یوسف نے یاں بھی خانہ آرائی
سفیدی دیدۂ یعقوب کی، پھرتی ہے زنداں پر

فنا تعلیمِ درسِ بےخودی ہوں، اُس زمانے سے
کہ مجنوں لام الف لکھتا تھا دیوارِ دبستاں پر

فراغت کس قدر رہتی مجھے، تشویشِ مرہم سے
بہم گر صلح کرتے پارہ ہائے دل نمکداں پر

نہیں اقلیمِ الفت میں، کوئی طومارِ ناز ایسا
کہ پشتِ چشم سے جس کے نہ ہووے مہر عنواں پر

مجھے اب دیکھ کر ابرِ شفق آلودہ، یاد آیا
کہ فرقت میں تری، آتش برستی تھی گلستاں پر

بجز پروازِ شوقِ ناز، کیا باقی رہا ہوگا
قیامت اِک ہوائے تند ہے، خاکِ شہیداں پر

نہ لڑ ناصح سے، غالب، کیا ہوا، گر اُس نے شدت کی
ہمارا بھی تو، آخر، زور چلتا ہے گریباں پر

६२

लरज़ता है मिरा दिल ज़ह्मत-ए-मेह्र-ए-दरख़्शाँ पर
मैं हूँ वह क़तरः-ए-शबनम, कि हो ख़ार-ए-बयाबाँ पर

न छोड़ी हज़रत-ए-यूसुफ़ ने याँ भी ख़ानः आराई
सफ़ेदी दीदः-ए-या'क़ूब की, फिरती है ज़िन्दाँ पर

फ़ना ता'लीम-ए-दर्स-ए-बेख़ुदी हूँ, उस ज़माने से
कि मजनूँ लाम अलिफ़ लिखता था दीवार-ए-दबिस्ताँ पर

फ़राग़त किस क़दर रहती मुझे, तशवीश-ए-मरहम से
बहम गर सुल्ह करते पारःहा-ए-दिल नमकदाँ पर

नहीं इक़्लीम-ए-उल्फ़त में, कोई तूमार-ए-नाज़ ऐसा
कि पुश्त-ए-चश्म से जिसके न होवे मुह्र 'अुन्वाँ पर

मुझे अब देख कर अब्र-ए-शफ़क़ आलूदः, याद आया
कि फ़ुर्क़त में तिरी, आतश बरसती थी गुलिस्ताँ पर

बजुज़ परवाज़-ए-शौक़-ए-नाज़, क्या बाक़ी रहा होगा
क़यामत इक हवा-ए-तुँद है, ख़ाक-ए-शहीदाँ पर

न लड़ नासेह् से, ग़ालिब, क्या हुआ, गर उसने शिद्दत की
हमारा भी तो, आख़िर, ज़ोर चलता है गरीबाँ पर

ہے بسکہ، ہر اک ان کے اشارے میں نشاں اور
کرتے ہیں محبت، تو گزرتا ہے گماں اور

یارب نہ وہ سمجھے ہیں، نہ سمجھیں گے مری بات
دے اور دل ان کو، جو نہ دے مجھ کو زباں اور

ابرو سے ہے کیا، اس نگہِ ناز کو، پیوند
ہے تیر مقرر، مگر اس کی ہے کماں اور

تم شہر میں ہو، تو ہمیں کیا غم جب اٹھیں گے
لے آئیں گے بازار سے، جا کر، دل و جاں اور

ہر چند سبک دست ہوئے بُت شکنی میں
ہم ہیں، تو ابھی راہ میں ہے سنگِ گراں اور

ہے خونِ جگر جوش میں، دل کھول کے روتا
ہوتے جو کئی دیدۂ خوں نابہ فشاں اور

مرتا ہوں اِس آواز پہ، ہرچند سر اُڑ جائے
جلاد کو، لیکن، وہ کہے جائیں، کہ ہاں اور

لوگوں کو ہے خورشیدِ جہاں تاب کا دھوکا
ہر روز دکھاتا ہوں میں اک داغ نہاں اور

६३

है बसकि, हर इक उनके इशारे में निशाँ और
करते हैं महब्बत, तो गुज़रता है गुमाँ और

यारब, न वह समझे हैं, न समझेंगे मिरी बात
दे और दिल उनको, जो न दे मुझको ज़बाँ और

अबरु से है क्या, उस निगह-ए-नाज़ को, पैवन्द
है तीर मुक़र्रर, मगर इसकी है कमाँ और

तुम शहर में हो, तो हमें क्या ग़म, जब उठेंगे
ले आयेंगे बाज़ार से, जाकर दिल-ओ-जाँ और

हरचन्द सुबुक दस्त हुये, बुत शिकनी में,
हम हैं, तो अभी राह में है सँग-ए-गिराँ और

है ख़ून-ए-जिगर जोश में, दिल खोल के रोता
होते जो कई दीदः-ए-ख़ूँनाबः फ़िशाँ और

मरता हूँ इस आवाज़ प, हरचन्द सर उड़जाय
जल्लाद को, लेकिन, वह कहे जायें, कि हाँ और

लोगों को है ख़ुर्शीद-ए-जहाँ ताब का धोका
हर रोज़ दिखाता हूँ मैं इक दाग़-ए-निहाँ और

لیتا، نہ اگر دل تمہیں دیتا، کوئی دم چین
کرتا، جو نہ مرتا کوئی دن، آہ و فغاں اور

پاتے نہیں جب راہ، تو چڑھ جاتے ہیں نالے
رُکتی ہے مری طبع، تو ہوتی ہے رواں اور

ہیں اور بھی دنیا میں سخنور بہت اچھے
کہتے ہیں، کہ غالب کا ہے اندازِ بیاں اور

٦٤

صفائے حیرتِ آئینہ ہے، سامانِ رنگ آخر
تغیر آبِ برجا ماندہ کا، پاتا ہے رنگ آخر

نہ کی سامانِ عیش و جاہ نے تدبیر وحشت کی
ہوا جامِ زمرد بھی مجھے، داغِ پلنگ آخر

٦٥

جنوں کی دستگیری کس سے ہو، گر ہو نہ عُریانی
گریباں چاک کا حق ہوگیا ہے، میری گردن پر

برنگِ کاغذِ آتش زدہ، نیرنگِ بیتابی
ہزار آئینہ دل باندھے ہے بالِ یک تپیدن پر

लेता, न अगर दिल तुम्हें देता, कोई दम चैन
करता, जो न मरता कोई दिन, आह-ओ-फ़ुग़ाँ और

पाते नहीं जब राह, तो चढ़ जाते हैं नाले
रुकती है मिरी तब'अ, तो होती है रवाँ और

हैं और भी दुनिया में सुख़नवर बहुत अच्छे
कहते हैं, कि ग़ालिब का है अन्दाज़-ए-बयाँ और

६४

सफ़ा-ए-हैरत-ए-आईनः है, सामान-ए-रँग आख़िर
तग़य्युर आब-ए-बर जा माँदः का, पाता है रँग आख़िर

न की सामान-ए-'ऐश-ओ-जाह ने तद्बीर वह्शत की
हुआ जाम-ए-ज़मर्रुद भी मुझे, दाग़-ए-पलँग आख़िर

६५

जुनूँ की दस्तगीरी किस से हो, गर हो न 'उरियानी
गरीबाँ चाक का हक़ हो गया है, मेरी गर्दन पर

बरँग-ए-काग़ज़-ए-आतश ज़दः नैरँग-ए-बेताबी
हज़ार आईनः दिल बाँधे है बाल-ए-यक तपीदन पर

فلک سے ہم کو عیشِ رفتہ کا، کیا کیا تقاضا ہے
متاعِ بُردہ کو، سمجھے ہوئے ہیں قرض، رہزن پر

ہم اور وہ بے سبب رنج، آشنا دشمن، کہ رکھتا ہے
شعاعِ مہر سے، تہمت نگہ کی، چشمِ روزن پر

فنا کو سونپ، گر مشتاق ہے اپنی حقیقت کا
فروغِ طالع خاشاک ہے موقوف گلخن پر

اسد بسمل ہے کس انداز کا، قاتل سے کہتا ہے
کہ مشقِ ناز کر، خونِ دو عالم میری گردن پر

٦٦

ستم کش مصلحت سے ہوں، کہ خوباں تجھ پہ عاشق ہے
تکلف برطرف، مل جائے گا تجھ سا رقیب آخر

٦٧

لازم تھا کہ دیکھو مرا رستہ کوئی دن اور
تنہا گئے کیوں، اب رہو تنہا کوئی دن اور

مٹ جائے گا سر، گر ترا پتھر نہ گھسے گا
ہوں در پہ ترے ناصیہ فرسا کوئی دن اور

फ़लक से, हमको 'अैश-ए-रफ़्तः का, क्या क्या तक़ाज़ा है
मता'-ए-बुर्दः को, समझे हुये हैं क़र्ज़, रहज़न पर

हम और वह बेसबब रँज, आशना दुश्मन, कि रखता है
शु'आ'-ए-मेहर से, तुहमत निगह की, चश्म -ए-रौज़न पर

फ़ना को सौंप, गर मुश्ताक़ है अपनी हक़ीक़त का
फरोग़-ए-ताले'-ए-ख़ाशाक है मौक़ूफ़ गिलख़न पर

असद बिस्मिल है किस अन्दाज का, क़ातिलसे कहता है
कि, मश्क़-ए-नाज कर, ख़ून-ए-दो 'आलम मेरी गर्दन पर

६६

सितम कश मस्लिहत से हूँ, कि ख़ूबाँ तुझ प 'आशिक़ है
तकल्लुफ़ बर तरफ़, मिल जायगा तुझसा रक़ीब आख़िर

६७

लाज़िम था कि देखो मिरा रस्तः कोई दिन और
तनहा गये क्यों अब रहो तनहा कोई दिन और

मिट जायेगा सर, गर तिरा पत्थर न घिसेगा
हूँ दर प तिरे नासियः फ़रसा कोई दिन और

آئے ہو کل اور آج ہی کہتے ہو، کہ جاؤں
مانا، کہ ہمیشہ نہیں اچھا، کوئی دن اور

جاتے ہوئے کہتے ہو، قیامت کو ملیں گے
کیا خوب، قیامت کا ہے گویا کوئی دن اور

ہاں اے فلکِ پیر، جواں تھا ابھی عارف
کیا تیرا بگڑتا، جو نہ مرتا کوئی دن اور

تم ماہ شبِ چاردہم تھے، مرے گھر کے
پھر کیوں نہ رہا گھر کا وہ نقشا، کوئی دن اور

تم کون سے تھے ایسے کھرے، داد و ستد کے
کرتا ملک الموت تقاضا، کوئی دن اور

مجھ سے تمہیں نفرت سہی، نیّر سے لڑائی
بچوں کا بھی دیکھا نہ تماشا کوئی دن اور

گزری نہ بہر حال یہ مدت، خوش و ناخوش
کرنا تھا، جواں مرگ، گزارا کوئی دن اور

ناداں ہو، جو کہتے ہو، کہ کیوں جیتے ہو، غالب
قسمت میں ہے، مرنے کی تمنا کوئی دن اور

आये हो कल और आज ही कहते हो, कि जाऊँ
माना, कि हमेशः नहीं अच्छा, कोई दिन और

जाते हुये कहते हो, क़यामत को मिलेंगे
क्या ख़ूब, क़यामत का है गोया कोई दिन और

हाँ अय फ़लक-ए-पीर, जवाँ था अभी 'आरिफ़
क्या तेरा बिगड़ता, जो न मरता कोई दिन और

तुम माह-ए-शब-ए-चारदहुम थे, मिरे घर के
फिर क्यों न रहा घर का वह नक़्शा कोई दिन और

तुम कौन से थे ऐसे खरे, दाद-ओ-सितद के
करता मलकुलमौत तक़ाज़ा, कोई दिन और

मुझसे तुम्हें नफ़रत सही, नय्यर से लड़ाई
बच्चों का भी देखा न तमाशा कोई दिन और

गुज़री न बहरहाल यह मुद्दत ख़ुश-ओ-नाख़ुश
करना था, जवाँमर्ग, गुज़ारा कोई दिन और

नादाँ हो, जो कहते हो, कि क्यों जीते हो ग़ालिब
क़िस्मत में है, मरने की तमन्ना कोई दिन और

۶۸

فارغ مجھے نہ جان، کہ مانندِ صبح و مہر
ہے داغِ عشق، زینتِ جیبِ کفن ہنوز

ہے نازِ مفلساں، زرِ از دست رفتہ پر
ہوں گل فروشِ شوخیِ داغِ کہن ہنوز

مے خانۂ جگر میں یہاں خاک بھی نہیں
خمیازہ کھینچے ہے بتِ بےداد فن ہنوز

۶۹

حریفِ مطلبِ مشکل نہیں، فسونِ نیاز
دعا قبول ہو یارب، کہ عمرِ خضر دراز

نہ ہو بہ ہرزہ، بیاباں نوردِ وہمِ وجود
ہنوز تیرے تصور میں ہے نشیب و فراز

وصال جلوہ تماشا ہے، پر دماغ کہاں
کہ دیجے آئینۂ انتظار کو پرواز

ہر ایک ذرۂ عاشق ہے آفتاب پرست
گئی نہ خاک ہوئے پر، ہوائے جلوۂ ناز

६८

फ़ारिग़ मुझे न जान, कि मानिन्द-ए-सुब्ह-ओ-मेह्र
है दाग़-ए-'अिश्क़, ज़ीनत-ए-जैब-ए-कफ़न हनोज़

हैं नाज़-ए-मुफ़्लिसाँ ज़र-ए-अज़दस्त रफ़्तः पर
हूँ गुल फ़रोश-ए-शोख़ि-ए-दाग़-ए-कुहन हनोज़

मैख़ान:-ए-जिगर में यहाँ ख़ाक भी नहीं
ख़मियाज़ा खेंचे है बुत-ए-बेदाद फ़न हनोज

६९

हरीफ़-ए-मतलब-ए-मुश्किल नहीं, फ़ुसून-ए-नियाज़
दु'आ क़ुबूल हो यारब, कि 'अुम्र-ए-ख़िज़्र दराज़

न हो बहरज़: बयाबाँ नवर्द-ए-वहम-ए-वुजूद
हनोज तेरे तसव्वुर में है नशेब-ओ-फ़राज़

विसाल जल्व: तमाशा है, पर दिमाग़ कहाँ
कि दीजे आईन:-ए-इन्तिज़ार को परवाज़

हर एक ज़र्र:-ए-'आशिक़ है आफ़्ताब परस्त
गई न ख़ाक हुये पर, हवा-ए-जल्व:-ए-नाज़

نہ پوچھ وسعتِ میخانۂ جنوں، غالب
جہاں، یہ کاسۂ گردوں، ہے ایک خاک انداز

۷۰

وسعتِ سعیِ کرم دیکھ، کہ سرتاسرِ خاک
گزرے ہے آبلہ پا ابرِ گہر بار ہنوز

یک قلم کاغذِ آتش زدہ، ہے صفحۂ دشت
نقشِ پا میں، ہے تپِ گرمیِ رفتار ہنوز

۷۱

کیوں کر اُس بت سے رکھوں جاں عزیز
کیا نہیں ہے مجھے ایمان عزیز

دل سے نکلا، پہ نہ نکلا دل سے
ہے ترے تیر کا پیکان عزیز

تاب لائے ہی بنے گی، غالب
واقعہ سخت ہے اور جان عزیز

न पूछ वुस'अत-ए-मैख़ानः-ए-जुनूँ, ग़ालिब
जहाँ; यह कासः-ए-गर्दूं, है एक ख़ाक अन्दाज़

७०

वुस'अत-ए-स'अि-ए-करम देख, कि सर ता सर-ए-ख़ाक
गुज़रे है आबलः पा अब्र-ए-गुहर बार हनोज़

यक क़लम काग़ज़-ए-आतश ज़दः, है सफ़हः-ए-दश्त
नक़्श-ए-पा में, है तप-ए-गर्मि-ए-रफ़्तार हनोज़

७१

क्योंकर उस बुत से रखूँ जान 'अज़ीज़
क्या नहीं है मुझे ईमान 'अज़ीज़

दिल से निकला, प न निकला दिल से
है तिरे तीर का पैकान 'अज़ीज़

ताब लाये ही बनेगी, ग़ालिब
वाक़ि'अः सख़्त है और जान 'अज़ीज़

۷۲

نہ گلِ نغمہ ہوں، نہ پردۂ ساز
میں ہوں اپنی شکست کی آواز

تو، اور آرایشِ خمِ کاکل
میں، اور اندیشہ ہاے دور و دراز

لافِ تمکیں، فریبِ سادہ دلی
ہم ہیں، اور راز ہاے سینہ گداز

ہوں گرفتارِ اُلفت صیاد
ورنہ باقی ہے طاقتِ پرواز

وہ بھی دن ہو، کہ اُس ستم گر سے
ناز کھینچوں، بجاے حسرتِ ناز

نہیں دل میں مرے، وہ قطرۂ خوں
جس سے مژگاں ہوئی نہ ہو گلباز

اے ترا غمزہ، یک قلم انگیز
اے ترا ظلم، سر بسر انداز

تو ہوا جلوہ گر، مبارک ہو
ریزشِ سجدۂ جبینِ نیاز

७२

न गुल-ए-नग़मः हूँ, न पर्दः-ए-साज़
मैं हूँ अपनी शिकस्त की आवाज़

तू, और आराइश -ए- ख़म -ए- काकुल
मैं, और अन्देशह:हा-ए-दूर-ओ-दराज़

लाफ़-ए-तमकीं, फ़रेब-ए-सादः दिली
हम हैं, और राज़हा-ए-सीनः गुदाज़

हूँ गिरफ़्तार -ए- उल्फ़त -ए- सय्याद
वर्नः बाक़ी है ताक़त-ए-परवाज़

वह भी दिन हो, कि उस सितमगर से
नाज़ खेंचूँ, बजाय हसरत-ए-नाज़

नहीं दिल में मिरे, वह क़तरः-ए-ख़ूँ
जिस से मिशगाँ हुई न हो गुलबाज़

अय तिरा ग़मज़ः, यक क़लम अँगेज़
अय तिरा ज़ुल्म, सर बसर अन्दाज़

तू हुआ जल्वः गर, मुबारक हो
रेज़िश-ए-सिज्दः-ए-जबीन-ए-नियाज़

مجھ کو پوچھا، تو کچھ غضب نہ ہوا
میں غریب اور تُو غریب نواز

اسد اللہ خاں تمام ہوا
اے دریغا، وہ رندِ شاہد باز

۷۳

مژدہ، اے ذوقِ اسیری، کہ نظر آتا ہے
دامِ خالی، قفسِ مرغِ گرفتار کے پاس

جگرِ تشنۂ آزار، تسلی نہ ہوا
جوے خوں ہم نے بہائی بُنِ ہر خار کے پاس

مند گئیں کھولتے ہی کھولتے آنکھیں، ہے، ہے
خوب وقت آئے تم، اِس عاشقِ بیمار کے پاس

میں بھی رک رک کے نہ مرتا، جو زباں کے بدلے
دشنہ اک تیز سا ہوتا، مرے غم خوار کے پاس

دہنِ شیر میں جا بیٹھیے، لیکن اے دل
نہ کھڑے ہو جیے خوبانِ دل آزار کے پاس

دیکھ کر تجھ کو، چمن بسکہ نمو کرتا ہے
خود بخود پہنچے ہے گل، گوشۂ دستار کے پاس

मुझको पूछा, तो कुछ ग़जब न हुआ
मैं ग़रीब और तू ग़रीब नवाज़

असदुल्लाह ख़ाँ तमाम हुआ
अय दरेग़ा, वह रिन्द-ए-शाहिद बाज़

७३

मुशदः अय ज़ौक़-ए-असीरी, कि नजर आता है
दाम ख़ाली, क़फ़स-ए-मुर्ग़-ए-गिरफ़्तार के पास

जिगर-ए-तश्नः -ए- आज़ार, तसल्ली न हुआ
जू-ए-ख़ूँ हम ने बहाई बुन-ए-हर ख़ार के पास

मुँद गईं खोलते ही खोलते आँखें, हय, हय
ख़ूब वक़्त आये तुम, इस 'आशिक़-ए-बीमार के पास

मैं भी रुक रुक के न मरता, जो जबाँ के बदले
दश्नः इक तेज़ सा होता, मिरे ग़मख़्वार के पास

दहन-ए-शेर में जा बैठिये, लेकिन अय दिल
न खड़े हूजिये ख़ूबान-ए-दिल आज़ार के पास

देख कर तुझको, चमन बसकि नमू करता है
ख़ुद बख़ुद पहुँचे है गुल, गोशः-ए-दस्तार के पास

مر گیا پھوڑ کے سر، غالبِ وحشی، ہے، ہے
بیٹھنا اُس کا وہ، آکر تری دیوار کے پاس

۷٤

نہ لیوے گر خسِ جوہر، طراوت سبزۂ خط سے
لگاوے خانۂ آئینہ میں رُوے نگار آتش

فروغِ حُسن سے ہوتی ہے حلِ مشکلِ عاشق
نہ نکلے شمع کے پا سے، نکالے گر نہ خار آتش

۷۵

جادۂ رہ خُور کو وقتِ شام ہے تارِ شعاع
چرخ واکرتا ہے ماہِ نو سے آغوشِ وداع

۷٦

رُخِ نگار سے، ہے سوزِ جاودانیِ شمع
ہوئی ہے آتشِ گل، آبِ زندگانیِ شمع

زبانِ اہلِ زباں میں، ہے مرگ خاموشی
یہ بات بزم میں روشن ہوئی زبانیِ شمع

मर गया फोड़ के सर, ग़ालिब-ए-वह्शी, हय, हय
बैठना उसका वह आकर तिरी दीवार के पास

७४

न लेवे गर ख़स-ए-जौहर, तरावत सब्ज़ः-ए-ख़त से
लगावे ख़ानः-ए-आईनः में रू-ए-निगार आतश

फ़रोग़-ए-हुस्न से होती है हल्ल-ए-मुश्किल-ए-'आशिक़
न निकले शम'अ के पा से, निकाले गर न ख़ार आतश

७५

जाद:-ए-रह ख़ुर को वक़्त-ए-शाम है तार-ए-शु'आ'अ
चर्ख़ वा करता है माह-ए-नौ से आग़ोश-ए-विदा'अ

७६

रुख़-ए-निगार से, है सोज़-ए-जाविदानि-ए-शम्'अ
हुई है आतश-ए-गुल, आब-ए-ज़िन्दगानि-ए-शम्'अ

ज़बान-ए-अहल-ए-ज़बाँ में, है मर्ग ख़ामोशी
यह बात बज़्म में, रौशन हुई ज़बानि-ए-शम्'अ

کرے ہے صرف بہ ایمائے شعلہ قصہ تمام
بہ طرزِ اہلِ فنا، ہے فسانہ خوانیِ شمع

غم اس کو حسرتِ پروانہ کا ہے، اے شعلہ
ترے لرزنے سے ظاہر ہے ناتوانیِ شمع

ترے خیال سے روح اہتزاز کرتی ہے
بہ جلوہ ریزیِ باد و بہ پرفشانیِ شمع

نشاطِ داغِ غمِ عشق کی بہار، نہ پوچھ
شگفتگی ہے شہیدِ گلِ خزانیِ شمع

جلے ہے دیکھ کے بالینِ یار پر مجھ کو
نہ کیوں ہو دل پہ مرے، داغِ بدگمانیِ شمع

۷۷

بیمِ رقیب سے نہیں کرتے وداعِ ہوش
مجبور یاں تلک ہوئے، اے اختیار، حیف

جلتا ہے دل، کہ کیوں نہ ہم اک بار جل گئے
اے ناتمامیِ نفسِ شعلہ بار، حیف

करे है सर्फ़ ब ईमा-ए-शो'लः क़िस्सः तमाम
बतर्ज़-ए-अह्ल-ए-फ़ना, है फ़सानः ख़्वानि-ए-शम्'अ

ग़म उसको हसरत-ए-परवानः का है, अय शो'लः
तिरे लरज़ने से ज़ाहिर है नातवानि-ए-शम्'अ

तिरे ख़याल से रूह एह्तिज़ाज करती है
ब जल्वः रेज़ि-ए-बाद-ओ-ब परफ़िशानि-ए-शम्'अ

निशात-ए-दाग़-ए-ग़म-ए-'अिश्क़ की बहार, न पूछ
शिगुफ़्तिगी है शहीद-ए-गुल-ए-ख़ज़ानि-ए-शम्'अ

जले है देख के बालीन-ए-यार पर मुझको
न क्यों हो दिल प मिरे, दाग़-ए-बदगुमानि-ए-शम्'अ

७७

बीम-ए-रक़ीब से नहीं करते विदा'-ए-होश
मजबूर याँ तलक हुये, अय इख़्तियार, हैफ़

जलता है दिल, कि क्यों न हम इक बार जल गये
अय नातमामि-ए-नफ़स-ए-शो'लः बार, हैफ़

۷۸

زخم پر چھڑکیں کہاں، طفلانِ بے پروا، نمک
کیا مزہ ہوتا، اگر پتھر میں بھی ہوتا، نمک

گردِ راہِ یار ہے سامانِ نازِ زخمِ دل
ورنہ ہوتا ہے جہاں میں کس قدر پیدا نمک

مجھ کو ارزانی رہے، تجھ کو مبارک ہو جیو
نالۂ بلبل کا درد، اور خندۂ گل کا نمک

شورِ جولاں تھا کنارِ بحر پر کس کا، کہ آج
گردِ ساحل ہے، بہ زخمِ موجۂ دریا، نمک

داد دیتا ہے مرے زخمِ جگر کی، واہ، واہ
یاد کرتا ہے مجھے، دیکھے ہے وہ جس جا نمک

چھوڑ کر جانا تنِ مجروحِ عاشق، حیف ہے
دل طلب کرتا ہے زخم، اور مانگے ہیں اعضا نمک

غیر کی منت نہ کھینچوں گا، پئے توقیرِ درد
زخم مثلِ خندۂ قاتل ہے، سر تا پا نمک

یاد ہیں، غالب تجھے وہ دن، کہ وجدِ ذوق میں
زخم سے گرتا، تو میں پلکوں سے چُنتا تھا نمک

ज़ख़्म पर छिड़कें कहाँ, तिफ़्लान-ए-बेपरवा, नमक
क्या मज़ा होता, अगर पत्थर में भी होता, नमक

गर्द-ए-राह-ए-यार है सामान-ए-नाज़-ए-ज़ख़्म-ए-दिल
वर्नः होता है जहाँ में किस क़दर पैदा, नमक

मुझको अरज़ानी रहे, तुझको मुबारक हूजियो
नालः-ए-बुलबुल का दर्द, और ख़न्दः-ए-गुल का नमक

शोर-ए-जौलाँ था किनार-ए-बह्र पर किसका, कि आज
गर्द-ए-साहिल है, बज़ख़्म-ए-मौजः-ए-दरिया, नमक

दाद देता है मिरे ज़ख़्म-ए-जिगर की, वाह, वाह
याद करता है मुझे, देखे है वह जिस जा, नमक

छोड़ कर जाना तन-ए-मजरूह-ए-'आशिक़, हैफ़ है
दिल तलब करता है ज़ख़्म, और माँगे हैं आ'ज़ा, नमक

ग़ैर की मिन्नत न खेंचूँगा, पै-ए-तौक़ीर-ए-दर्द
ज़ख़्म मिस्ल-ए-ख़न्दः-ए-क़ातिल है, सर ता पा नमक

याद हैं, ग़ालिब, तुझे वह दिन, कि वज्द-ए-ज़ौक़ में
ज़ख़्म से गिरता, तो मैं पलकों से चुनता था नमक

آہ کو چاہیے اک عمر، اثر ہونے تک
کون جیتا ہے تری زلف کے سر ہونے تک

دام ہر موج میں ہے، حلقۂ صد کامِ نہنگ
دیکھیں کیا گزرے ہے قطرے پہ، گہر ہونے تک

عاشقی صبر طلب اور تمنا بے تاب
دل کا کیا رنگ کروں، خونِ جگر ہونے تک

ہم نے مانا، کہ تغافل نہ کروگے، لیکن
خاک ہو جائیں گے ہم، تم کو خبر ہونے تک

پرتوِ خور سے ہے شبنم کو، فنا کی تعلیم
میں بھی ہوں، ایک عنایت کی نظر ہونے تک

یک نظر بیش نہیں، فرصتِ ہستی غافل
گرمیِ بزم ہے، اک رقصِ شرر ہونے تک

غمِ ہستی کا، اسد، کس سے ہو جز مرگ علاج
شمع ہر رنگ میں جلتی ہے سحر ہونے تک

७९

आह को चाहिये इक 'अुम्र, असर होने तक
कौन जीता है तिरी ज़ुल्फ़ के सर होने तक

दाम-ए-हर मौज में है, हल्क़ः-ए-सद काम-ए-निहँग
देखें क्या गुज़रे है क़तरे प, गुहर होने तक

'आशिक़ी सब्र तलब और तमन्ना बेताब
दिल का क्या रँग करूँ, ख़ून-ए-जिगर होने तक

हमने माना, कि तग़ाफ़ुल न करोगे; लेकिन
ख़ाक हो जायेंगे हम, तुमको ख़बर होने तक

परतव-ए-ख़ुर से है शबनम को, फ़ना की ता'लीम
मैं भी हूँ, एक 'अिनायत की नज़र होने तक

यक नज़र बेश नहीं, फ़ुर्सत-ए-हस्ती ग़ाफ़िल
गर्मि-ए-बज़्म है, इक रक़्स-ए-शरर होने तक

ग़म-ए-हस्ती का, असद किससे हो जुज़ मर्ग 'अिलाज
शम'अ हर रँग में जलती है सहर होने तक

۸۰

گر تجھ کو ہے یقینِ اجابت، دعا نہ مانگ
یعنی بغیرِ یک دلِ بے مدعا، نہ مانگ

آتا ہے داغِ حسرتِ دل کا شمار یاد
مجھ سے مرے گنہ کا حساب، اے خدا، نہ مانگ

۸۱

ہے کس قدر ہلاکِ فریبِ وفاے گل
بلبل کے کاروبار پہ ہیں خندہ ہاے گل

آزادیِ نسیم مبارک، کہ ہر طرف
ٹوٹے پڑے ہیں حلقۂ دامِ ہواے گل

جو تھا، سو موجِ رنگ کے دھوکے میں رہ گیا
اے واے، نالۂ لبِ خونیں نواے گل

خوش حال اُس حریفِ سیہ مست کا، کہ جو
رکھتا ہو، مثلِ سایۂ گل، سر بہ پاے گل

ایجاد کرتی ہے اُسے تیرے لیے، بہار
میرا رقیب ہے، نفسِ عطر ساے گل

८०

गर तुझको है यक़ीन-ए-इजाबत, दु'आ न माँग
या'नी बिग़ैर-ए-यक दिल-ए-बेमुद्द'आ, न माँग

आता है दाग़-ए-हसरत-ए-दिल का शुमार याद
मुझसे मिरे गुनह का हिसाब, अय ख़ुदा न माँग

८१

है किस क़दर हलाक-ए-फ़रेब-ए-वफ़ा-ए-गुल
बुलबुल के कार-ओ-बार प हैं ख़न्दःहा-ए-गुल

आज़ादि-ए-नसीम मुबारक, कि हर तरफ़
टूटे पड़े हैं हल्क़:-ए-दाम-ए-हवा-ए-गुल

जो था, सो मौज-ए-रँग के धोके में रह गया
अय वाये, नाल:-ए-लब-ए-ख़ूनीं नवा-ए-गुल

ख़ुश हाल उस हरीफ़-ए-सियह मस्त का, कि जो
रखता हो मिस्ल-ए-साय:-ए-गुल, सर ब पा-ए-गुल

ईजाद करती है उसे तेरे लिये, बहार
मेरा रक़ीब है, नफ़स-ए-'अित्र सा-ए-गुल

شرمندہ رکھتے ہیں مجھے بادِ بہار سے
مینائے بے شراب و دلِ بے ہوائے گل

سطوت سے تیرے جلوۂ حُسنِ غیور کی
خوں ہے میری نگاہ میں رنگِ ادائے گل

تیرے ہی جلوے کا ہے یہ دھوکا، کہ آج تک
بے اختیار دوڑے ہے گل درقفائے گل

غالب، مجھے ہے اُس سے ہم آغوشی آرزو
جس کا خیال ہے گلِ جیبِ قبائے گل

۸۲

غم نہیں ہوتا ہے آزادوں کو، بیش از یک نفس
برق سے کرتے ہیں روشن، شمعِ ماتم خانہ ہم

محفلیں برہم کرے ہے، گنجفہ بازِ خیال
ہیں ورق گردانیِ نیرنگِ یک بُت خانہ ہم

باوجودِ یک جہاں، ہنگامہ پیدائی نہیں
ہیں چراغانِ شبستانِ دلِ پروانہ ہم

ضعف سے ہے، نے قناعت سے، یہ ترکِ جستجو
ہیں وبالِ تکیہ گاہِ ہمتِ مردانہ ہم

शर्मिन्दः रखते हैं मुझे बाद-ए-बहार से
मीना-ए-बे शराब-ओ-दिल-ए-बे हवा-ए-गुल

सतवत से तेरे जल्वः-ए-हुस्न-ए-ग़यूर की
ख़ूँ है मिरी निगाह में रँग-ए-अदा-ए-गुल

तेरे ही जल्वे का है यह धोका, कि आज तक
बे इख़्तियार दौड़े है गुल दर क़फ़ा-ए-गुल

ग़ालिब, मुझे है उससे हम आग़ोशी आरज़ू
जिसका ख़याल है गुल-ए-जैब-ए-क़बा-ए-गुल

८२

ग़म नहीं होता है आज़ादों को, बेश अज़ यक नफ़स
बर्क़ से करते हैं रौशन, शम्'अ-ए-मातम ख़ानः हम

महफ़िलें बरहम करे है, गँजफ़ः बाज़-ए-ख़याल
हैं वरक़ गर्दानि-ए-नैरँग-ए-यक बुतख़ानः हम

बावुजूद-ए-यक जहाँ, हँगामः पैदाई नहीं
हैं चराग़ान-ए-शबिस्तान-ए-दिल-ए-परवानः हम

ज़ो'फ़ से है, ने क़ना'अत से, यह तर्क-ए-जुस्तुजू
हैं वबाल-ए-तक्यः गाह-ए-हिम्मत-ए-मर्दानः हम

دائم الحبس اس میں ہیں لاکھوں تمنائیں، اسد
جانتے ہیں سینۂ پُرخوں کو زنداں خانہ ہم

۸۳

بہ نالہ حاصلِ دل بستگی فراہم کر
متاعِ خانۂ زنجیر، جُز صدا، معلوم

۸٤

مجھ کو دیارِ غیر میں مارا، وطن سے دور
رکھ لی مرے خدا نے، مری بیکسی کی شرم

وہ حلقہ‌ہاے زُلف، کمیں میں ہیں، اے خدا
رکھ لیجو میرے دعویٰ ِ وارستگی کی شرم

۸۵

لوں وام بختِ خفتہ سے، یک خوابِ خوش، ولے
غالب، یہ خوف ہے، کہ کہاں سے ادا کروں

दाइमुल हब्स इस में हैं लाखों तमन्नायें, असद
जानते हैं सीनः-ए-पुरख़ूँ को ज़िन्दाँ ख़ानः हम

८३

ब नालः हासिल-ए-दिल बस्तगी फ़राहम कर
मता'-ए-ख़ानः-ए-ज़ंजीर, जुज़ सदा, मा'लूम

८४

मुझको दयार-ए-ग़ैर में मारा, वतन से दूर
रख ली मिरे ख़ुदा ने, मिरी बेकसी की शर्म

वह हल्क़ःहा-ए-ज़ुल्फ़, कमीं में हैं, अय ख़ुदा
रख लीजो मेरे दा'वः-ए-वारस्तगी की शर्म

८५

लूँ दाम बख़्त-ए-ख़ुफ़्तः से, यक ख़्वाब-ए-ख़ुश, वले
ग़ालिब, यह ख़ौफ़ है, कि कहाँ से अदा करूँ

۸٦

وہ فراق اور وہ وصال کہاں
وہ شب و روز و ماہ و سال کہاں

فرصتِ کاروبارِ شوق کسے
ذوقِ نظارۂ جمال کہاں

دل تو دل، وہ دماغ بھی نہ رہا
شورِ سودائے خط و خال کہاں

تھی وہ اک شخص کے تصور سے
اب وہ رعنائیِ خیال کہاں

ایسا آساں نہیں، لہو رونا
دل میں طاقت، جگر میں حال کہاں

ہم سے چھوٹا قمار خانۂ عشق
واں جو جاویں، گرہ میں مال کہاں

فکرِ دنیا میں سر کھپاتا ہوں
میں کہاں اور یہ وبال کہاں

مضمحل ہو گئے قویٰ، غالب
وہ عناصر میں اعتدال کہاں

८६

वह फ़िराक़ और वह विसाल कहाँ
वह शब-ओ-रोज़-ओ-माह-ओ-साल कहाँ

फ़ुर्सत-ए-कार-ओ-बार-ए-शौक़ किसे
ज़ौक़-ए-नज़्ज़ार:-ए-जमाल कहाँ

दिल तो दिल, वह दिमाग़ भी न रहा
शोर-ए-सौदा-ए-ख़त्त-ओ-ख़ाल कहाँ

थी वह इक शख़्स के तसव्वुर से
अब वह र'अनाइ-ए-ख़याल कहाँ

ऐसा आसाँ नहीं, लहू रोना
दिल में ताक़त, जिगर में हाल कहाँ

हम से छूटा क़िमार ख़ान:-ए-'अिश्क़
वाँ जो जावें, गिरह में माल कहाँ

फ़िक्र-ए-दुनिया में सर खपाता हूँ
मैं कहाँ और यह वबाल कहाँ

मुज़महिल होगये क़ुवा, ग़ालिब
वह 'अनासिर में ए'तिदाल कहाँ

۸۷

کی وفا ہم سے، تو غیر اس کو جفا کہتے ہیں
ہوتی آئی ہے، کہ اچھوں کو برا کہتے ہیں

آج ہم اپنی پریشانیِ خاطر اُن سے
کہنے جاتے تو ہیں، پر دیکھیے، کیا کہتے ہیں

اگلے وقتوں کے ہیں یہ لوگ اِنھیں کچھ نہ کہو
جو مے و نغمہ کو، اندوہ رُبا کہتے ہیں

دل میں آجائے ہے، ہوتی ہے جو فرصت غش سے
اور پھر کون سے نالے کو رسا کہتے ہیں

ہے پرے سرحدِ ادراک سے، اپنا مسجود
قبلے کو اہلِ نظر قبلہ نما کہتے ہیں

پائے افگار پہ، جب سے تجھے رحم آیا ہے
خارِ رہ کو ترے ہم، مہر گیا کہتے ہیں

اک شرر دل میں ہے، اُس سے کوئی گھبرائے گا کیا
آگ مطلوب ہے ہم کو، جو ہوا کہتے ہیں

دیکھیے لاتی ہے اُس شوخ کی نخوت، کیا رنگ
اُس کی ہر بات پہ ہم، نامِ خدا، کہتے ہیں

की वफ़ा हम से, तो ग़ैर उसको जफ़ा कहते हैं
होती आई है, कि अच्छों को बुरा कहते हैं

आज हम अपनी परीशानि-ए-ख़ातिर उनसे
कहने जाते तो हैं, पर देखिये, क्या कहते हैं

अगले वक़्तों के हैं यह लोग, इन्हें कुछ न कहो
जो मै-ओ-नग़म: को, अन्दोह रुबा कहते हैं

दिल में आजाये है, होती है जो फ़ुर्सत ग़श से
और फिर कौन से नाले को रसा कहते हैं

है परे सरहद-ए-इद्राक से, अपना मस्जूद
क़िबले को अहल-ए-नज़र क़िबलः नुमा कहते हैं

पा-ए-अफ़गार प, जबसे तुझे रह्म आया है
ख़ार-ए-रह को तिरे हम, मेह्र गिया कहते हैं

इक शरर दिल में है, उससे कोई घबरायेगा क्या
आग मतलूब है हमको, जो हवा कहते हैं

देखिये लाती है उस शोख़ की नख़्वत, क्या रँग
उसकी हर बात प हम, नाम-ए-ख़ुदा, कहते हैं

وحشت و شیفتہ اب مرثیہ کہویں، شاید
مر گیا غالبِ آشفتہ نوا، کہتے ہیں

۸۸

آبرو کیا خاک اُس گل کی، کہ گلشن میں نہیں
ہے گریباں ننگِ پیراہن، جو دامن میں نہیں

ضعف سے، اے گریہ، کچھ باقی مرے تن میں نہیں
رنگ ہو کر اُڑ گیا، جو خوں کہ دامن میں نہیں

ہو گئے ہیں جمع، اجزاے نگاہِ آفتاب
ذرے، اُس کے گھر کی دیواروں کے روزن میں نہیں

کیا کہوں تاریکیِ زندانِ غم، اندھیر ہے
پنبہ نورِ صبح سے کم، جس کے روزن میں نہیں

رونقِ ہستی ہے عشقِ خانہ ویراں ساز سے
انجمن بے شمع ہے، گر برق خرمن میں نہیں

زخم سلوانے سے، مجھ پر چارہ جوئی کا ہے طعن
غیر سمجھا ہے، کہ لذت زخمِ سوزن میں نہیں

بسکہ ہیں ہم اک بہارِ ناز کے مارے ہوئے
جلوۂ گل کے سوا، گرد اپنے مدفن میں نہیں

वह्शत-ओ-शेफ़्तः अब मरसियः कहवें, शायद
मर गया ग़ालिब-ए-आशुफ़्तः नवा, कहते हैं

८८

आबरू क्या ख़ाक उस गुल की, कि गुलशन में नहीं
है गरीबाँ नँग-ए-पैराहन, जो दामन में नहीं

ज़ो'फ़ से, अय गिरियः, कुछ बाक़ी मिरे तन में नहीं
रँग हो कर उड़ गया, जो ख़ूँ कि दामन में नहीं

हो गये हैं जम'अ, अज्ज़ा-ए-निगाह-ए-आफ़ताब
ज़र्रे, उस के घर की दीवारों के रौज़न में नहीं

क्या कहूँ तारीकि-ए-ज़िन्दान-ए-ग़म, अंधेर है
पँबः नूर-ए-सुब्ह से कम, जिस के रौज़न में नहीं

रौनक़-ए-हस्ती है 'अिश्क़-ए-ख़ानः वीराँ साज़ से
अंजुमन बे शम्'अ है, गर बर्क़ ख़िर्मन में नहीं

ज़ख़्म सिलवाने से, मुझ पर चारः जूई का है ता'न
ग़ैर समझा है; कि लज़्ज़त ज़ख़्म-ए-सूज़न में नहीं

बसकि हैं हम इक बहार-ए-नाज़ के मारे हुये
जल्वः-ए-गुल के सिवा, गर्द अपने मदफ़न में नहीं

قطرہ قطرہ، اک ہیولیٰ ہے، نئے ناسور کا
خوں بھی، ذوقِ درد سے، فارغ مرے تن میں نہیں

لے گئی ساقی کی نخوت، قلزم آشامی مری
موجِ مے کی آج رگ مینا کی گردن میں نہیں

ہو فشارِ ضعف میں کیا ناتوانی کی نمود
قد کے جھکنے کی بھی گنجایش مرے تن میں نہیں

تھی وطن میں شان کیا غالب، کہ ہو غربت میں قدر
بے تکلف، ہوں وہ مشتِ خس، کہ گلخن میں نہیں

۸۹

عہدے سے مدحِ ناز کے، باہر نہ آ سکا
گر اک ادا ہو، تو اُسے اپنی قضا کہوں

حلقے ہیں چشم ہائے کشادہ بسوے دل
ہر تارِ زلف کو نگہِ سُرمہ سا کہوں

میں اور صد ہزار نوائے جگر خراش
تو، اور ایک وہ نشنیدن، کہ کیا کہوں

ظالم، مرے گماں سے مجھے منفعل نہ چاہ
ہے،ہے، خدا نکردہ، تجھے بے وفا کہوں

क़तरः क़तरः, इक हयूला है, नये नासूर का
ख़ूँ भी, ज़ौक़-ए-दर्द से, फ़ारिग़ मिरे तन में नहीं

ले गई साक़ी की नख़्वत, क़ुल्ज़ुम आशामी मिरी
मौज-ए-मै की आज रग मीना की गर्दन में नहीं

हो फ़िशार-ए-ज़ो'फ़ में क्या नातवानी की नुमूद
क़द के झुकने की भी गुंजाइश मिरे तन में नहीं

थी वतन में शान क्या ग़ालिब, कि हो ग़ुर्बत में क़द्र
बे तकल्लुफ़, हूँ वह मुश्त-ए-ख़स, कि गुलख़न में नहीं

८९

'ओह्दे से मद्ह-ए-नाज़ के, बाहर न आ सका
गर इक अदा हो, तो उसे अपनी क़ज़ा कहूँ

हल्क़े हैं चश्महा-ए-कुशादः ब सू-ए-दिल
हर तार-ए-ज़ुल्फ़ को निगह-ए-सुर्मः सा कहूँ

मैं और सद हज़ार नवा-ए-जिगर ख़राश
तू, और एक वह न शुनीदन, कि क्या कहूँ

ज़ालिम, मिरे गुमाँ से मुझे मुनफ़'अिल न चाह
हय, हय, ख़ुदा न करदः, तुझे बेवफ़ा कहूँ

۹۰

مہرباں ہو کے بلا لو مجھے، چاہو جس وقت
میں گیا وقت نہیں ہوں کہ، پھر آ بھی نہ سکوں

ضعف میں، طعنۂ اغیار کا شکوہ کیا ہے
بات کچھ سر تو نہیں ہے، کہ اُٹھا بھی نہ سکوں

زہر ملتا ہی نہیں مجھ کو، ستم گر، ورنہ
کیا قسم ہے ترے ملنے کی، کہ کھا بھی نہ سکوں

۹۱

ہم سے کھل جاؤ، بوقتِ مے پرستی، ایک دن
ورنہ ہم چھیڑیں گے، رکھ کر عذرِ مستی، ایک دن

غرۂ اوجِ بنائے عالمِ امکاں نہ ہو
اس بلندی کے نصیبوں میں ہے پستی، ایک دن

قرض کی پیتے تھے مے، لیکن سمجھتے تھے کہ ہاں
رنگ لائے گی ہماری فاقہ مستی، ایک دن

نغمہ ہائے غم کو بھی، اے دل، غنیمت جانیے
بے صدا ہو جائے گا، یہ سازِ ہستی ایک دن

९०

मेह्‌रबाँ होके बुलालो मुझे, चाहो जिस वक़्त
मैं गया वक़्त नहीं हूँ, कि फिर आ भी न सकूँ

जो'फ़ में, ता'नः-ए-अग़यार का शिक्वा क्या है
बात कुछ सर तो नहीं है, कि उठा भी न सकूँ

जह्‌र मिलता ही नहीं मुझको, सितमगर वर्नः
क्या क़सम है तिरे मिलने की, कि खा भी न सकूँ

९१

हमसे खुल जाओ, बवक़्त-ए-मै परस्ती, एक दिन
वर्नः हम छेड़ेंगे, रखकर 'उज़्र-ए-मस्ती एक दिन

ग़र्रः-ए-औज-ए-बिना-ए-'आलम-ए-इम्काँ न हो
इस बलन्दी के नसीबों में है पस्ती, एक दिन

क़र्ज़ की पीते थे मै, लेकिन समझते थे, कि हाँ
रँग लायेगी हमारी फ़ाक़ः मस्ती, एक दिन

नग़्मःहा-ए-ग़म को भी, अय दिल ग़नीमत जानिये
बेसदा हो जायगा, यह साज़-ए-हस्ती, एक दिन

دھول دھپّا اُس سراپا ناز کا شیوہ نہیں
ہم ہی کر بیٹھے تھے، غالب، پیش دستی ایک دن

۹۲

ہم پر، جفا سے، ترکِ وفا کا گماں نہیں
اک چھیڑ ہے، و گر نہ مُراد امتحاں نہیں

کس منھ سے شکر کیجیے، اِس لطفِ خاص کا
پُرسش ہے اور پائے سخن درمیاں نہیں

ہم کو ستم عزیز، سِتم گر کو ہم عزیز
نا مہرباں نہیں ہے، اگر مہرباں نہیں

بوسہ نہیں، نہ دیجیے، دشنام ہی سہی
آخر زباں تو رکھتے ہو تم، گر دہاں نہیں

ہرچند جاں گدازیِ قہر و عتاب ہے
ہرچند پُشت گرمیِ تاب و تواں نہیں

جاں مطربِ ترانۂ ہَل مِن مَزید ہے
لب پردہ سنجِ زمزمۂ الاماں نہیں

خنجر سے چیر سینہ، اگر دل نہ ہو دونیم
دل میں چُھری چبھو، مژہ گر خونچکاں نہیں

धौल धप्पा उस सरापा नाज़ का शेवः नहीं
हम ही कर बैठे थे, ग़ालिब, पेश दस्ती एक दिन

९२

हम पर, जफ़ा से, तर्क-ए-वफ़ा का गुमाँ नहीं
इक छेड़ है, वगरनः मुराद इम्तिहाँ नहीं

किस मुँह से शुक्र कीजिये, इस लुत्फ़-ए-ख़ास का
पुरसिश है और पा-ए-सुख़न दरमियाँ नहीं

हमको सितम 'अज़ीज़, सितमगर को हम 'अज़ीज़
ना मेह्रबाँ नहीं है, अगर मेह्रबाँ नहीं

बोसः नहीं, न दीजिये, दुश्नाम ही सही
आख़िर ज़बाँ तो रखते हो तुम, गर दहाँ नहीं

हरचन्द जाँ गुदाज़ि-ए-क़ह्र-ओ-'अिताब है
हरचन्द पुश्त गर्मि -ए- ताब -ओ- तवाँ नहीं

जाँ मुतरिब-ए-तरानः-ए-हल मिन मज़ीद है
लब पर्दः सँज-ए-ज़मज़मः-ए-अलअमाँ नहीं

ख़ंजर से चीर सीनः, अगर दिल न हो दुनीम
दिल में छुरी चुभो, मिश़ः गर ख़ूँचकाँ नहीं

ہے ننگِ سینہ، دل اگر آتش کدہ نہ ہو
ہے عارِ دل، نفس اگر آذر فشاں نہیں

نقصاں نہیں جنوں میں، بلا سے ہو گھر خراب
سو گز زمیں کے بدلے، بیاباں گراں نہیں

کہتے ہو، کیا لکھا ہے تری سر نوشت میں
گویا جبیں پہ سجدۂ بت کا نشاں نہیں

پاتا ہوں اُس سے داد کچھ اپنے کلام کی
رُوح القدس اگرچہ، مرا ہم زباں نہیں

جاں ہے بہاے بوسہ، ولے کیوں کہے ابھی
غالب کو جانتا ہے، کہ وہ نیم جاں نہیں

۹۳

مانعِ دشت نوردی کوئی تدبیر نہیں
ایک چکّر ہے، مرے پانوں میں زنجیر نہیں

شوق اُس دشت میں دوڑائے ہے مجھ کو، کہ جہاں
جادہ غیر از نگہِ دیدۂ تصویر نہیں

حسرتِ لذتِ آزار رہی جاتی ہے
جادۂ راہِ وفا، جُز دم شمشیر نہیں

है नँग-ए-सीनः, दिल अगर आतश कदः न हो
है 'आर-ए-दिल, नफ़स अगर आज़र फ़िशाँ नहीं

नुक़साँ नहीं जुनूँ में, बला से हो घर ख़राब
सौ गज़ ज़मीं के बदले, बयाबाँ गिराँ नहीं

कहते हो, क्या लिखा है तिरी सरनविश्त में
गोया जबीं प सिज्दः-ए-बुत का निशाँ नहीं

पाता हूँ उस से दाद कुछ अपने कलाम की
रूहुलक़ुदुस अगरचेः, मिरा हमज़बाँ नहीं

जाँ है बहा-ए-बोसः, वले क्यों कहे, अभी
ग़ालिब को जानता है, कि वह नीमजाँ नहीं

९३

माने'-ए-दश्त नवर्दी कोई तदबीर नहीं
एक चक्कर है, मिरे पाँव में ज़ंजीर नहीं

शौक़ उस दश्त में दौड़ाये है मुझको, कि जहाँ
जादः ग़ैर अज़ निगह-ए-दीदः-ए-तस्वीर नहीं

हसरत-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार रही जाती है
जादः-ए-राह-ए-वफ़ा, जुज़ दम-ए-शमशीर नहीं

رنجِ نومیدیِ جاوید، گوارا رہیو
خوش ہوں گر نالہ زبونی کشِ تاثیر نہیں

سر کھجاتا ہے، جہاں زخمِ سر اچھا ہو جائے
لذتِ سنگ بہ اندازۂ تقریر نہیں

جب کرم رخصتِ بیباکی و گستاخی دے
کوئی تقصیر بجز خجلتِ تقصیر نہیں

غالب، اپنا یہ عقیدہ ہے، بقولِ ناسخ
آپ بے بہرہ ہے، جو معتقدِ میر نہیں

۹٤

مت مردمکِ دیدہ میں سمجھو یہ نگاہیں
ہیں جمع سویدائے دلِ چشم میں آہیں

۹۵

برشکالِ گریۂ عاشق ہے، دیکھا چاہیے
کھل گئی مانندِ گل، سو جا سے دیوارِ چمن

اُلفتِ گل سے غلط ہے دعویٰ وارستگی
سرو ہے با وصفِ آزادی گرفتارِ چمن

रँज-ए-नौमीदि-ए-जावेद, गवारा रहियो
ख़ुश हूँ गर नालः ज़बूनी कश-ए-तासीर नहीं

सर खुजाता है, जहाँ ज़ख़्म-ए-सर अच्छा हो जाय
लज़्ज़त-ए-सँग ब अन्दाज़ः-ए-तक़रीर नहीं

जब करम रुख़सत-ए-बेबाकि-ओ-गुस्ताख़ी दे
कोई तक़्सीर बजुज़ ख़जलत-ए-तक़्सीर नहीं

ग़ालिब, अपना यह 'अक़ीदः है, बक़ौल-ए-नासिख़
आप बेबहरः है, जो मो'तक़िद-ए-मीर नहीं

९४

मत मर्दुमक-ए-दीदः में समझो यह निगाहें
हैं जम'अ सुवैदा-ए-दिल-ए-चश्म में आहें

९५

बर्शकाल-ए-गिरियः-ए-'आशिक़ है, देखा चाहिये
खिल गई मानिन्द-ए-गुल, सौ जा से दीवार-ए-चमन

उल्फ़त-ए-गुल से ग़लत है दा'वः-ए-वारस्तगी
सर्व है बावस्फ़-ए-आज़ादी गिरफ़्तार-ए-चमन

۹۶

عشق تاثیر سے نومیــــد نہیں
جـاں سُپـاری شجرِ بید نہیں

سلطنت دست بدست آئی ہے
جـامِ مے، خـاتمِ جمشید نہیں

ہے تجلی تری سـامانِ وجود
ذرہ بے پرتوِ خورشید نہیں

راز معشوق نہ رسوا ہو جـائے
ورنہ مر جـانے میں کچھ بھید نہیں

گردشِ رنگِ طرب سے ڈر ہے
غم محـــرومیِ جـاوید نہیں

کہتے ہیں، جیتے ہیں اُمید پہ لوگ
ہم کو جینے کی بھی اُمید نہیں

۹۷

جہـاں تیرا نقشِ قدم دیکھتے ہیں
خیـاباں خیـاباں اِرم دیکھتے ہیں

९६

'अिश्क़ तासीर से नौमीद नहीं
जाँ सुपारी शजर-ए-बेद नहीं

सल्तनत दस्त बदस्त आई है
जाम-ए-मै, ख़ातम-ए-जमशेद नहीं

है तजल्ली तिरी सामान-ए-वुजूद
ज़र्रः बे परतव-ए-खुरशीद नहीं

राज़-ए-मा'शूक़ न रुस्वा हो जाये
वर्नः मर जाने में कुछ भेद नहीं

गर्दिश-ए-रँग-ए-तरब से डर है
ग़म-ए-महरूमि-ए-जावेद नहीं

कहते हैं, जीते हैं उम्मीद प लोग
हम को जीने की भी उम्मीद नहीं

९७

जहाँ तेरा नक़्श-ए-क़दम देखते हैं
ख़ियाबाँ ख़ियाबाँ इरम देखते हैं

دل آشفتگاں خالِ کنجِ دہن کے
سویدا میں سیرِ عدم دیکھتے ہیں

ترے سرو قامت سے، اک قدِ آدم
قیامت کے فتنے کو، کم دیکھتے ہیں

تماشا کر اے محوِ آئینہ داری
تجھے کس تمنا سے ہم دیکھتے ہیں

سُراغِ تفِ نالہ لے، داغِ دل سے
کہ شب رو کا نقشِ قدم دیکھتے ہیں

بنا کر فقیروں کا ہم بھیس، غالب
تماشائے اہلِ کرم دیکھتے ہیں

۹۸

ملتی ہے خُوئے یار سے نار، اِلتہاب میں
کافر ہوں، گر نہ ملتی ہو راحت عذاب میں

کب سے ہوں، کیا بتاؤں، جہانِ خراب میں
شب ہائے ہجر کو بھی رکھوں گر حساب میں

تا پھر نہ انتظار میں نیند آئے عمر بھر
آنے کا وعدہ کر گئے، آئے جو خواب میں

दिल आशुफ़्तगाँ ख़ाल-ए-कुंज-ए-दहन के
सुवैदा में सैर-ए-'अदम देखते हैं

तिरे सर्व क़ामत से, इक क़द्द-ए-आदम
क़यामत के फ़ितने को, कम देखते हैं

तमाशा कर अय महव-ए-आईनादारी
तुझे किस तमन्ना से हम देखते हैं

सुराग़-ए-तुफ़-ए-नाल: ले, दाग़-ए-दिल से
कि शब रौ का नक़्श-ए-क़दम देखते हैं

बना कर फ़क़ीरों का हम भेस, ग़ालिब
तमाशा-ए-अहल-ए-करम देखते हैं

९८

मिलती है ख़ू-ए-यार से नार, इल्तहाब में
काफ़िर हूँ, गर न मिलती हो राहत 'अज़ाब में

कब से हूँ, क्या बताऊँ, जहान-ए-ख़राब में
शबहा-ए-हिज्र को भी रखूँ गर हिसाब में

ता फिर न इन्तिज़ार में नीन्द आये 'उम्र भर
आने का वा'द: कर गये, आये जो ख़्वाब में

قاصد کے آتے آتے، خط اک اور لکھ رکھوں
میں جانتا ہوں، جو وہ لکھیں گے جواب میں

مجھ تک کب، ان کی بزم میں، آتا تھا دورِ جام
ساقی نے کچھ ملا نہ دیا ہو شراب میں

جو منکرِ وفا ہو، فریب اُس پہ کیا چلے
کیوں بدگماں ہوں دوست سے، دشمن کے باب میں

میں مضطرب ہوں وصل میں، خوفِ رقیب سے
ڈالا ہے تم کو وہم نے، کس پیچ و تاب میں

میں اور حظِ وصل، خدا ساز بات ہے
جاں نذر دینی بھول گیا، اضطراب میں

ہے تیوری چڑھی ہوئی، اندر نقاب کے
ہے اک شکن پڑی ہوئی، طرفِ نقاب میں

لاکھوں لگاؤ، ایک چُرانا نگاہ کا
لاکھوں بناؤ، ایک بگڑنا عتاب میں

وہ نالہ، دل میں خس کے برابر جگہ نہ پائے
جس نالے سے شگاف پڑے آفتاب میں

وہ سحر، مدعا طلبی میں نہ کام آئے
جس سحر سے سفینہ رواں ہو سراب میں

क़ासिद के आते आते, ख़त इक और लिख रखूँ
मैं जानता हूँ, जो वह लिखेंगे जवाब में

मुझ तक कब, उनकी बज़्म में, आता था दौर-ए-जाम
साक़ी ने कुछ मिला न दिया हो शराब में

जो मुन्किर-ए-वफ़ा हो, फ़रेब उस प क्या चले
क्यों बदगुमाँ हूँ दोस्त से, दुश्मन के बाब में

मैं मुज़्तरिब हूँ वस्ल में, ख़ौफ़-ए-रक़ीब से
डाला है तुमको वह्म ने, किस पेच-ओ-ताब में

मैं और हज़्ज़-ए-वस्ल, ख़ुदासाज़ बात है
जाँ नज़्र देनी भूल गया, इज़्तिराब में

है तेवरी चढ़ी हुई, अन्दर निक़ाब के
है इक शिकन पड़ी हुई, तर्फ़-ए-निक़ाब में

लाखों लगाव, एक चुराना निगाह का
लाखों बनाव, एक बिगड़ना 'अिताब में

वह नालः, दिल में ख़स के बराबर जगह न पाये
जिस नाले से शिगाफ़ पड़े आफ़ताब में

वह सेह्र, मुद्'आ तलबी में न काम आये
जिस सेह्र से सफ़ीनः रवाँ हो सराब में

غالب، چھٹی شراب، پر اب بھی، کبھی کبھی
پیتا ہوں روزِ ابر و شبِ ماہتاب میں

۹۹

کل کے لئے کر آج نہ خست شراب میں
یہ سوءِ ظن ہے ساقیِ کوثر کے باب میں

ہیں آج کیوں ذلیل، کہ کل تک نہ تھی پسند
گستاخیِ فرشتہ ہماری جناب میں

جاں کیوں نکلنے لگتی ہے تن سے، دمِ سماع
گر وہ صدا سمائی ہے چنگ و رباب میں

رو میں ہے رخشِ عمر، کہاں، دیکھیے، تھمے
نے ہاتھ باگ پر ہے، نہ پا ہے رکاب میں

اُتنا ہی مجھ کو اپنی حقیقت سے بُعد ہے
جتنا کہ وہمِ غیر سے ہوں پیچ و تاب میں

اصلِ شہود و شاہد و مشہود ایک ہے
حیراں ہوں، پھر مشاہدہ ہے کس حساب میں

ہے مشتمل نمودِ صور پر وجودِ بحر
یاں کیا دھرا ہے قطرہ و موج و حباب میں

ग़ालिब छुटी शराब, पर अब भी, कभी कभी
पीता हूँ रोज़-ए-अब्र-ओ-शब-ए-माहताब में

९९

क्ल के लिये कर आज न ख़िस्सत शराब में
यह सू-ए-ज़न है साक़ि-ए-कौसर के बाब में

हैं आज क्यों ज़लील, कि कल तक न थी पसन्द
गुस्ताख़ि-ए-फ़रिश्तः हमारी जनाब में

जाँ क्यों निकलने लगती है तन से, दम-ए-समा'अ
गर वह सदा समाई है चँग-ओ-रबाब में

रौ में है रख़्श-ए-'अुम्र, कहाँ, देखिये, थमे
ने हाथ बाग पर है, न पा है रिकाब में

उतना ही मुझको अपनी हक़ीक़त से बो'द है
जितना कि वह्म-ए-ग़ैर से हूँ पेच-ओ-ताब में

अस्ल-ए-शुहूद-ओ-शाहिद-ओ-मशहूद एक है
हैराँ हूँ, फिर मुशाहिदः है किस हिसाब में

है मुश्तमिल नुमूद-ए-सुवर पर वुजूद-ए-बह्र
याँ क्या धरा है क़तरः-ओ-मौज-ओ-हबाब में

شرم اک ادائے ناز ہے، اپنے ہی سے سہی
ہیں کتنے بے حجاب، کہ ہیں یوں حجاب میں

آرایشِ جمال سے فارغ نہیں ہنوز
پیشِ نظر ہے آئینہ دائم نقاب میں

ہے غیبِ غیب، جس کو سمجھتے ہیں ہم شہود
ہیں خواب میں ہنوز، جو جاگے ہیں خواب میں

غالب، ندیم دوست سے، آتی ہے بوے دوست
مشغولِ حق ہوں، بندگیِ بوتراب میں

۱۰۰

حیراں ہوں، دل کو روؤں، کہ پیٹوں جگر کو میں
مقدور ہو، تو ساتھ رکھوں نوحہ گر کو میں

چھوڑا نہ رشک نے، کہ ترے گھر کا نام لوں
ہر اک سے پوچھتا ہوں، کہ جاؤں کدھر کو میں

جانا پڑا رقیب کے در پر، ہزار بار
اے کاش، جانتا نہ تری رہ گزر کو میں

ہے کیا، جو کس کے باندھیے، میری بلا ڈرے
کیا جانتا نہیں ہوں، تمھاری کمر کو میں

शर्म इक अदा-ए-नाज़ है, अपने ही से सही
हैं कितने बे हिजाब, कि हैं यों हिजाब में

आराइश-ए-जमाल से फ़ारिग़ नहीं हनोज़
पेश-ए-नज़र है आइनः दाइम निक़ाब में

है ग़ैब-ए-ग़ैब, जिसको समझते हैं हम शुहूद
हैं ख़्वाब में हनोज़, जो जागे हैं ख़्वाब में

ग़ालिब, नदीम-ए-दोस्त से, आती है बू-ए-दोस्त
मशग़ूल-ए-हक़ हूँ, बन्दगि-ए-बू तुराब में

१००

हैराँ हूँ, दिल को रोऊँ, कि पीटूँ जिगर को मैं
मक़दूर हो, तो साथ रखूँ नौहःगर को मैं

छोड़ा न रश्क ने, कि तिरे घर का नाम लूँ
हर इक से पूछता हूँ, कि जाऊँ किधर को मैं

जाना पड़ा रक़ीब के दर पर, हज़ार बार
अय काश, जानता न तिरी रहगुज़र को मैं

है क्या, जो कस के बाँधिये, मेरी बला डरे
क्या जानता नहीं हूँ, तुम्हारी कमर को मैं

لو، وہ بھی کہتے ہیں کہ یہ بے ننگ و نام ہے
یہ جانتا اگر، تو لٹاتا نہ گھر کو میں

چلتا ہوں تھوڑی دور، ہر اک تیز رو کے ساتھ
پہچانتا نہیں ہوں ابھی، راہبر کو میں

خواہش کو، احمقوں نے، پرستش دیا قرار
کیا پوجتا ہوں اُس بتِ بیداد گر کو میں

پھر بے خودی میں بھول گیا، راہِ کوے یار
جاتا وگرنہ ایک دن اپنی خبر کو میں

اپنے پہ کر رہا ہوں قیاس، اہلِ دہر کا
سمجھا ہوں دل پذیر، متاعِ ہنر کو میں

غالب، خدا کرے کہ سوار سمندِ ناز
دیکھوں علی بہادرِ عالی گہر کو میں

۱۰۱

ذکر میرا، بہ بدی بھی، اُسے منظور نہیں
غیر کی بات بگڑ جائے، تو کچھ دور نہیں

وعدۂ سیرِ گلستاں ہے، خوشا طالعِ شوق
مژدۂ قتل مقدر ہے، جو مذکور نہیں

लो, वह भी कहते हैं कि यह बे नँग-ओ-नाम है
यह जानता अगर, तो लुटाता न घर को मैं

चलता हूँ थोड़ी दूर; हर इक तेज़ रौ के साथ
पहचानता नहीं हूँ अभी, राहबर को मैं

ख़्वाहिश को, अहमक़ों ने, परस्तिश दिया क़रार
क्या पूजता हूँ उस बुत-ए-बेदादगर को मैं

फ़िर बेख़ुदी में भूल गया, राह-ए-कू-ए-यार
जाता वगरनः एक दिन अपनी ख़बर को मैं

अपने प कर रहा हूँ क़ियास, अह्ल-ए-दह्र का
समझा हूँ दिल पिज़ीर, मता'-ए-हुनर को मैं

ग़ालिब, ख़ुदा करे कि सवार-ए-समन्द-ए-नाज़
देखूँ 'अली बहादुर-ए-'आली गुहर को मैं

१०१

ज़िक्र मेरा, बबदी भी, उसे मंज़ूर नहीं
ग़ैर की बात बिगड़ जाय, तो कुछ दूर नहीं

वा'द:-ए-सैर-ए-गुलिस्ताँ है, ख़ुशा ताले'-ए-शौक़
मुश्दः-ए-क़त्ल मुक़द्दर है, जो मज़कूर नहीं

شاہدِ ہستیِ مطلق کی کمر ہے عالم
لوگ کہتے ہیں کہ ہے، پر ہمیں منظور نہیں

قطرہ اپنا بھی حقیقت میں ہے دریا، لیکن
ہم کو تقلیدِ تنک ظرفیِ منصور نہیں

حسرت، اے ذوقِ خرابی، کہ وہ طاقت نہ رہی
عشقِ پُرعربدہ کی گوں تنِ رنجور نہیں

میں جو کہتا ہوں، کہ ہم لیں گے قیامت میں تمہیں
کس رعونت سے وہ کہتے ہیں، کہ ہم حور نہیں

ظلم کر، ظلم، اگر لطف دریغ آتا ہو
تو تغافل میں کسی رنگ سے معذور نہیں

صاف دُردی کشِ پیمانۂ جم ہیں، ہم لوگ
وائے، وہ بادہ، کہ افشردۂ انگور نہیں

ہوں ظہوری کے مقابل میں خفائی غالب
میرے دعوے پہ یہ حجت ہے، کہ مشہور نہیں

۱۰۲

نالہ جز حسنِ طلب، اے ستم ایجاد، نہیں
ہے تقاضائے جفا، شکوۂ بیداد نہیں

शाहिद-ए-हस्ति-ए-मुत्लक़ की कमर है 'आलम
लोग कहते हैं कि है, पर हमें मंज़ूर नहीं

क़तरः अपना भी हक़ीक़त में है दरिया, लेकिन
हमको तक़लीद-ए-तुनुक ज़रफ़ि-ए-मंसूर नहीं

हसरत, अय ज़ौक़-ए-ख़राबी, कि वह ताक़त न रही
'अिश्क़-ए-पुर 'अर्बदः की गौं तन-ए-रंजूर नहीं

मैं जो कहता हूँ, कि हम लेंगे क़यामत में तुम्हें
किस र'अूनत से वह कहते हैं, कि हम हूर नहीं

ज़ुल्म कर, ज़ुल्म, अगर लुत्फ़ दरेग़ आता हो
तू तग़ाफ़ुल में किसी रँग से मा'ज़ूर नहीं

साफ़ दुर्दी कश-ए-पैमानः-ए-जम हैं, हम लोग
वाय, वह बादः, कि अफ़शुरदः-ए-अँगूर नहीं

हूँ जहूरी के मुक़ाबिल में ख़िफ़ाई ग़ालिब
मेरे दा'वे प यह हुज्जत है, कि मशहूर नहीं

१०२

नालः जुज़ हुस्न-ए-तलब, अय सितम इजाद, नहीं
है तक़ाज़ा-ए-जफ़ा, शिक्वः-ए-बेदाद नहीं

عشق و مزدوریِ عشرت گہِ خسرو، کیا خوب
ہم کو تسلیم نکو نامیِ فرہاد نہیں

کم نہیں وہ بھی خرابی میں، پہ وسعت معلوم
دشت میں، ہے مجھے وہ عیش، کہ گھر یاد نہیں

اہلِ بینش کو، ہے طوفانِ حوادث، مکتب
لطمۂ موج، کم از سیلیِ استاد، نہیں

وائے محرومیِ تسلیم و بدا حالِ وفا
جانتا ہے، کہ ہمیں طاقتِ فریاد نہیں

رنگِ تمکینِ گل ولالہ پریشاں کیوں ہے
گر چراغانِ سرِ رہ گزرِ باد نہیں

سبدِ گل کے تلے بند کرے ہے گلچیں
مژدہ، اے مرغ، کہ گلزار میں صیّاد نہیں

نفی سے کرتی ہے اثبات تراوش گویا
دی ہی جائے دہن اس کو دمِ ایجاد، نہیں

کم نہیں، جلوہ گری میں، ترے کوچے سے بہشت
یہی نقشہ ہے، ولے اس قدر آباد نہیں

کرتے کس منھ سے ہو، غربت کی شکایت، غالب
تم کو بے مہریِ یارانِ وطن یاد نہیں

'अिश्क़-ओ-मज़दूरि-ए-'अिश्रत गह्-ए-ख़ुसरू क्या ख़ूब
हम को तसलीम निकुनामि-ए-फ़रहाद नहीं

कम नहीं वह भी ख़राबी में, प वुस'अत मा'लूम
दश्त में, है मुझे वह 'अैश, कि घर याद नहीं

अहल-ए-बीनिश को, है तूफ़ान-ए-हवादिस, मक्तब
लतमः-ए-मौज, कम अज़ सेलि-ए-उस्ताद, नहीं

वाये महरूमि-ए-तसलीम-ओ-बदा हाल-ए-वफ़ा
जानता है, कि हमें ताक़त-ए-फ़रियाद नहीं

रँग-ए-तमकीन-ए-गुल-ओ-लालः परीशाँ क्यों है
गर चराग़ान-ए-सर-ए-रह गुज़र-ए-बाद नहीं

सबद-ए-गुल के तले बन्द करे है गुलचीं
मुशदः, अय मुर्ग़, कि गुलज़ार में सय्याद नहीं

नफ़ि से करती है इस्बात तराविश गोया
दी ही जा-ए-दहन उस को दम-ए-ईजाद, नहीं

कम नहीं, जल्वः गरी में, तिरे कूचे से बिहिश्त
यही नक़्शः है, वले इस क़दर आबाद नहीं

करते किस मुँह से हो, ग़ुर्बत की शिकायत, ग़ालिब
तुम को बेमेह्रि-ए-यारान-ए-वतन याद नहीं

۱۰۳

دونوں جہان دے کے، وہ سمجھے، یہ خوش رہا
یاں آپڑی یہ شرم، کہ تکرار کیا کریں

تھک تھک کے، ہر مقام پہ دو چار رہ گئے
تیرا پتا نہ پائیں، تو ناچار کیا کریں

کیا شمع کے نہیں ہیں ہوا خواہ اہلِ بزم
ہو غم ہی جاں گداز، تو غم خوار کیا کریں

۱۰۴

ہو گئی ہے غیر کی شیریں بیانی، کار گر
عشق کا اُس کو گماں ہم بے زبانوں پر نہیں

۱۰۵

قیامت ہے، کہ سُن لیلیٰ کا دشتِ قیس میں آنا
تعجب سے وہ بولا، یوں بھی ہوتا ہے زمانے میں

دلِ نازک پہ اُس کے رحم آتا ہے مجھے، غالب
نہ کرسر گرم اُس کافر کو اُلفت آزمانے میں

१०३

दोनों जहान दे के, वह समझे, यह ख़ुश रहा
याँ आपड़ी यह शर्म, कि तकरार क्या करें

थक थक के, हर मक़ाम प दो चार रह गये
तेरा पता न पायें, तो नाचार क्या करें

क्या शम्'अ के नहीं हैं हवा ख़्वाह अहल-ए-बज़्म
हो ग़म ही जाँ गुदाज़, तो ग़मख़्वार क्या करें

१०४

हो गई है ग़ैर की शीरीं बयानी, कारगर
'अिश्क़ का उसको गुमाँ हम बेज़बानों पर नहीं

१०५

क़यामत है, कि सुन लैला का दश्त-ए-क़ैस में आना
त'अज्जुब से वह बोला, यों भी होता है ज़माने में

दिल-ए-नाज़ुक प उस के रह्म आता है मुझे, ग़ालिब
न कर सरगर्म उस काफ़िर को उल्फ़त आज़माने में

۱۰۶

دل لگا کر لگ گیا اُن کو بھی تنہا بیٹھنا
بارے، اپنی بے کسی کی ہم نے پائی داد، یاں

ہیں زوال آمادہ، اجزا آفرینش کے تمام
مہرِ گردوں ہے چراغِ رہ گزارِ باد، یاں

۱۰۷

یہ ہم جو ہجر میں، دیوار و در کو دیکھتے ہیں
کبھی صبا کو، کبھی نامہ بر کو دیکھتے ہیں

وہ آئیں گھر میں ہمارے، خدا کی قدرت ہے
کبھی ہم اُن کو، کبھی اپنے گھر کو دیکھتے ہیں

نظر لگے نہ کہیں، اُس کے دست و بازو کو
یہ لوگ کیوں مرے زخمِ جگر کو دیکھتے ہیں

ترے جواہرِ طرفِ کلہ کو کیا دیکھیں
ہم اوجِ طالعِ لعل و گہر کو دیکھتے ہیں

१०६

दिल लगाकर लग गया उनको भी तन्हा बैठना
बारे, अपनी बेकसी की हमने पाई दाद, याँ

हैं जवाल आमादः अज्ज़ा आफ़रीनिश के तमाम
मेह्‌र-ए-गर्दूं है चराग़-ए-रह्‌गुज़ार-ए-बाद, याँ

१०७

यह हम जो हिज्र में, दीवार-ओ-दर को देखते हैं
कभी सबा को, कभी नामःबर को देखते हैं

वह आयें घर में हमारे, ख़ुदा की क़ुदरत है
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं

नज़र लगे न कहीं, उसके दस्त-ओ-बाज़ू को
यह लोग क्यों मिरे ज़ख़्म-ए-जिगर को देखते हैं

तिरे जवाहिर-ए-तर्फ़-ए-कुलह को क्या देखें
हम औजे ताले'-ए-ला'ल-ओ-गुहर को देखते हैं

نہیں، کہ مجھ کو قیامت کا اعتقاد نہیں
شبِ فراق سے، روزِ جزا، زیاد نہیں

کوئی کہے، کہ شبِ مہ میں کیا بُرائی ہے
بلا سے، آج اگر دن کو ابر و باد نہیں

جو آؤں سامنے اُن کے، تو مرحبا نہ کہیں
جو جاؤں واں سے کہیں کو، تو خیرباد نہیں

کبھی جو یاد بھی آتا ہوں میں، تو کہتے ہیں
کہ آج بزم میں کچھ فتنہ و فساد نہیں

علاوہ عید کے ملتی ہے، اور دن بھی، شراب
گدائے کوچۂ مے خانہ نامراد نہیں

جہاں میں ہو غم و شادی بہم، ہمیں کیا کام
دیا ہے ہم کو خدا نے وہ دل، کہ شاد نہیں

تم اُن کے وعدے کا ذکر اُن سے کیوں کرو، غالب
یہ کیا، کہ تم کہو، اور وہ کہیں، کہ یاد نہیں

१०८

नहीं, कि मुझको क़ियामत का एʻतिक़ाद नहीं
शब-ए-फ़िराक़ से, रोज़-ए-जज़ा, ज़ियाद नहीं

कोई कहे, कि शब-ए-मह में क्या बुराई है
बला से, आज अगर दिन को अब्र-ओ-बाद नहीं

जो आऊँ सामने उनके, तो मरहबा न कहें
जो जाऊँ वाँ से कहीं को, तो ख़ैरबाद नहीं

कभी जो याद भी आता हूँ मैं, तो कहते हैं
कि, आज बज़्म में कुछ फ़ितनः-ओ-फ़साद नहीं

ʻअलावः ʻईद के मिलती है, और दिन भी, शराब
गदा-ए-कूचः-ए-मैख़ानः नामुराद नहीं

जहाँ में हो ग़म-ओ-शादी बहम, हमें क्या काम
दिया है हम को ख़ुदा ने वह दिल, कि शाद नहीं

तुम उन के वाʻदे का ज़िक्र उन से क्यों करो, ग़ालिब
यह क्या, कि तुम कहो, और वह कहें, कि याद नहीं

۱۰۹

تیرے توسن کو صبا باندھتے ہیں
ہم بھی مضموں کی ہوا باندھتے ہیں

آہ کا کس نے اثر دیکھا ہے
ہم بھی اک اپنی ہوا باندھتے ہیں

تیری فرصت کے مقابل، اے عمر
برق کو پا بہ حنا باندھتے ہیں

قیدِ ہستی سے رہائی، معلوم
اشک کو بے سر و پا باندھتے ہیں

نشـۂ رنگ سے، ہے واشدِ گل
مست کب بندِ قبا باندھتے ہیں

غلطی ہائے مضامیں مت پوچھ
لوگ نالے کو رسا باندھتے ہیں

اہلِ تدبیر کی واماندگیاں
آبلوں پر بھی حنا باندھتے ہیں

سادہ پرکار ہیں خوباں، غالب
ہم سے پیمان وفا باندھتے ہیں

१०९

तेरे तौसन को सबा बाँधते हैं
हम भी मज़मूँ की हवा बाँधते हैं

आह का किसने असर देखा है
हम भी इक अपनी हवा बाँधते हैं

तेरी फ़ुर्सत के मुक़ाबिल, अय 'उम्र
बर्क़ को पा ब हिना बाँधते हैं

क़ैद-ए-हस्ती से रिहाई, मा'लूम
अश्क को बे सर-ओ-पा बाँधते हैं

नश्शः-ए-रँग से, है वाशुद-ए-गुल
मस्त कब बन्द-ए-क़िबा बाँधते हैं

ग़लतीहा-ए-मज़ामीं मत पूछ
लोग नाले को रसा बाँधते हैं

अहल-ए-तदबीर की वामान्दगियाँ
आबलों पर भी हिना बाँधते हैं

सादः पुरकार हैं ख़ूबाँ, ग़ालिब
हम से पैमान-ए-वफ़ा बाँधते हैं

۱۱۰

زمانہ سخت کم آزار ہے بجانِ اسد
وگرنہ ہم تو توقع زیادہ رکھتے ہیں

۱۱۱

دائم پڑا ہوا ترے در پر نہیں ہوں میں
خاک ایسی زندگی پہ، کہ پتھر نہیں ہوں میں

کیوں گردشِ مدام سے گھبرا نہ جائے دل
انسان ہوں، پیالہ و ساغر نہیں ہوں میں

یارب، زمانہ مجھ کو مٹاتا ہے کس لئے
لوحِ جہاں پہ حرفِ مکرر نہیں ہوں میں

حد چاہیے سزا میں، عقوبت کے واسطے
آخر گناہگار ہوں، کافر نہیں ہوں میں

کس واسطے عزیز نہیں جانتے مجھے
لعل و زمرد و زر و گوہر نہیں ہوں میں

رکھتے ہو تم قدم مری آنکھوں سے کیوں دریغ
رتبے میں مہر و ماہ سے کمتر نہیں ہوں میں

११०

ज़मानः सख़्त कम आज़ार है बजान-ए-असद
वगरनः हम तो तवक़्क़ो' ज़ियादः रखते हैं

१११

दाइम पड़ा हुआ तिरे दर पर नहीं हूँ मैं
ख़ाक ऐसी ज़िन्दगी प, कि पत्थर नहीं हूँ मैं

क्यों गर्दिश-ए-मुदाम से घबरा न जाये दिल
इंसान हूँ, पियालः-ओ-साग़र नहीं हूँ मैं

यारब, ज़मानः मुझको मिटाता है किस लिये
लौह-ए-जहाँ प हर्फ़-ए-मुकर्रर नहीं हूँ मैं

हद चाहिये सज़ा में, 'उक़ूबत के वास्ते
आख़िर गुनाहगार हूँ, क़ाफ़िर नहीं हूँ मैं

किस वास्ते 'अज़ीज़ नहीं जानते मुझे
ला'ल-ओ-ज़मर्रुद-ओ-ज़र-ओ-गौहर नहीं हूँ मैं

रखते हो तुम क़दम मिरी आँखों से क्यों दरेग़
रुतबे में मेहर-ओ-माह से कमतर नहीं हूँ मैं

کرتے ہو مجھ کو منعِ قدم بوس کس لیے
کیا آسمان کے بھی برابر نہیں ہوں میں

غالب، وظیفہ خوار ہو، دو شاہ کو دعا
وہ دن گئے کہ کہتے تھے، نوکر نہیں ہوں میں

۱۱۲

سب کہاں، کچھ لالہ و گل میں نمایاں ہو گئیں
خاک میں کیا صورتیں ہوں گی، کہ پنہاں ہو گئیں

یاد تھیں، ہم کو بھی، رنگا رنگ بزم آرائیاں
لیکن اب نقش و نگارِ طاقِ نسیاں ہو گئیں

تھیں بنات النعشِ گردوں، دن کو پردے میں نہاں
شب کو اُن کے جی میں کیا آئی، کہ عریاں ہو گئیں

قید میں یعقوب نے لی، گو، نہ یوسف کی خبر
لیکن آنکھیں روزنِ دیوارِ زنداں ہو گئیں

سب رقیبوں سے ہوں ناخوش، پر زنانِ مصر سے
ہے زلیخا خوش، کہ محوِ ماہِ کنعاں ہو گئیں

جوئے خوں آنکھوں سے بہنے دو، کہ ہے شامِ فراق
میں یہ سمجھوں گا، کہ شمعیں دو فروزاں ہو گئیں

करते हो मुझको मन'-ए-क़दम बोस किस लिये
क्या आसमान के भी बराबर नहीं हूँ मैं

ग़ालिब, वज़ीफ: ख़्वार हो, दो शाह को दु'आ
वह दिन गये कि कहते थे, नौकर नहीं हूँ मैं

११२

सब कहाँ, कुछ लाल:-ओ-गुल में नुमायाँ हो गईं
ख़ाक में क्या सूरतें होंगी, कि पिन्हाँ हो गईं

याद थीं, हम को भी, रँगारँग बज़्म आराइयाँ
लेकिन अब नक़्श-ओ-निगार-ए-ताक़-ए-निसियाँ हो गईं

थीं बनातुन्ना'श-ए-गर्दूं, दिन को पर्दे में निहाँ
शब को उनके जी में क्या आई, कि 'उरियाँ हो गईं

क़ैद में या'क़ूब ने ली, गो, न यूसुफ़ की ख़बर
लेकिन आँखें रौज़न-ए-दीवार-ए-ज़िन्दाँ हो गईं

सब रक़ीबों से हों नाख़ुश, पर ज़नान-ए-मिस्र से
है ज़ुलैख़ा ख़ुश, कि महव-ए-माह-ए-कन'आँ हो गईं

जू-ए-ख़ूँ आँखों से बहने दो, कि है शाम-ए-फ़िराक़
मैं यह समझूँगा, कि शम'अें दो फ़ुरोज़ाँ हो गईं

ان پری زادوں سے لیں گے خلد میں ہم انتقام
قدرتِ حق سے، یہی حوریں اگر واں ہو گیں

نیند اُسکی ہے، دماغ اُس کا ہے، راتیں اُسکی ہیں
تیری زلفیں، جس کے بازو پر، پریشاں ہو گئیں

میں چمن میں کیا گیا، گو یاد بستاں کھل گیا
بُلبلیں سُن کر مرے نالے، غزل خواں ہو گئیں

وہ نگاہیں کیوں ہوئی جاتی ہیں، یارب، دل کے پار
جو مری کوتاہیِ قسمت سے، مژگاں ہو گئیں

بس کہ روکا میں نے، اور سینے میں اُبھریں پے بہ پے
میری آہیں بخیۂ چاکِ گریباں ہو گئیں

واں گیا بھی میں، تو اُن کی گالیوں کا کیا جواب
یاد تھیں جتنی دعائیں، صرفِ درباں ہو گئیں

جاں فزا ہے بادہ، جس کے ہاتھ میں جام آگیا
سب لکیریں ہاتھ کی گویا رگِ جاں ہو گئیں

ہم موحد ہیں، ہمارا کیش ہے ترکِ رسوم
ملّتیں جب مٹ گئیں. اجزائے ایماں ہو گئیں

رنج سے خُوگر ہوا انساں، تو مٹ جاتا ہے رنج
مشکلیں مجھ پر پڑیں اتنی، کہ آساں ہو گئیں

इन परीज़ादों से लेंगे ख़ुल्द में हम इन्तिक़ाम
क़ुदरत-ए-हक़ से, यही हूरें अगर वाँ हो गईं

नीन्द उसकी है, दिमाग़ उसका है, रातें उसकी हैं
तेरी ज़ुल्फ़ें, जिस के बाज़ू पर, परीशाँ हो गईं

मैं चमन में क्या गया, गोया दबिस्ताँ खुल गया
बुलबुलें सुन कर मिरे नाले, ग़ज़लख़्वाँ हो गईं

वह निगाहें क्यों हुई जाती हैं, यारब, दिल के पार
जो मिरी कोताहि-ए-क़िस्मत से मिश़गाँ हो गईं

बसकि रोका मैं ने, और सीने में उभरीं पै ब पै
मेरी आहें बख़िय:-ए-चाक-ए-गरीबाँ हो गईं

वाँ गया भी मैं, तो उनकी गालियों का क्या जवाब
याद थीं जितनी दु'आयें, सर्फ़-ए-दरबाँ हो गईं

जाँ फ़िज़ा है बाद:, जिसके हाथ में जाम आ गया
सब लकीरें हाथ की, गोया रग-ए-जाँ हो गईं

हम मुव्वहिद हैं, हमारा केश है, तर्क-ए-रुसूम
मिल्लतें जब मिट गईं, अज्ज़ा-ए-ईमाँ हो गईं

रँज से ख़ूगर हुआ इंसाँ, तो मिट जाता है रँज
मुश्किलें मुझ पर पड़ीं इतनी, कि आसाँ हो गईं

یوں ہی گر روتا رہا غالب، تو اے اہلِ جہاں
دیکھنا ان بستیوں کو تم، کہ ویراں ہو گئیں

۱۱۳

دیوانگی سے، دوش پہ زُنّار بھی نہیں
یعنی ہماری جیب میں اک تار بھی نہیں

دل کو نیازِ حسرتِ دیدار کر چکے
دیکھا تو ہم میں طاقتِ دیدار بھی نہیں

ملنا ترا اگر نہیں آساں، تو سہل ہے
دشوار تو یہی ہے، کہ دشوار بھی نہیں

بے عشق عمر کٹ نہیں سکتی ہے، اور یاں
طاقت بہ قدرِ لذتِ آزار بھی نہیں

شوریدگی کے ہاتھ سے، ہے سر وبالِ دوش
صحرا میں، اے خدا، کوئی دیوار بھی نہیں

گنجایشِ عداوتِ اغیار، اک طرف
یاں دل میں، ضعف سے، ہوسِ یار بھی نہیں

ڈر نالہ ہائے زار سے میرے، خدا کو مان
آخر نوائے مرغِ گرفتار بھی نہیں

यों ही गर रोता रहा ग़ालिब, तो अय अह्ल-ए-जहाँ
देखना इन बस्तियों को तुम, कि वीराँ हो गईं

११३

दीवानगी से, दोश प ज़ुन्नार भी नहीं
या'नी हमारी जैब में इक तार भी नहीं

दिल को नियाज़-ए-हसरत-ए-दीदार कर चुके
देखा तो हम में ताक़त-ए-दीदार भी नहीं

मिलना तिरा अगर नहीं आसाँ, तो सह्ल है
दुश्वार तो यही है, कि दुश्वार भी नहीं

बे 'अिश्क़ 'अुम्र कट नहीं सकती है, और याँ
ताक़त ब क़द्र-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार भी नहीं

शोरीदगी के हाथ से, है सर वबाल-ए-दोश
सहरा में, अय ख़ुदा, कोई दीवार भी नहीं

गुँजाइश-ए-'अदावत-ए-अग़यार इक तरफ़
याँ दिल में, ज़ो'फ़ से, हवस-ए-यार भी नहीं

डर नाल:हा-ए-ज़ार से मेरे, ख़ुदा को मान
आख़िर नवा-ए-मुर्ग़-ए-गिरफ़्तार भी नहीं

دل میں ہے یار کی صفِ مژگاں سے روکشی
حالانکہ طاقتِ خلشِ خار بھی نہیں

اس سادگی پہ کون نہ مرجائے، اے خدا
لڑتے ہیں اور ہاتھ میں تلوار بھی نہیں

دیکھا اسد کو خلوت و جلوت میں بارہا
دیوانہ گر نہیں ہے، تو ہشیار بھی نہیں

۱۱٤

نہیں ہے زخم کوئی بخیے کے درخُور، مرے تن میں
ہوا ہے تارِ اشکِ یاس رشتہ چشمِ سوزن میں

ہوئی ہے مانع ذوقِ تماشا، خانہ ویرانی
کفِ سیلاب باقی ہے، برنگِ پنبہ روزن میں

ودیعت خانۂ بے دادِ کاوش ہائے مژگاں ہوں
نگینِ نامِ شاہد ہے مرے ہرقطرہ خوں تن میں

بیاں کس سے ہو، ظلمت گستری میرے شبستاں کی
شبِ مہ ہو، جو رکھ دیں پنبہ دیواروں کے روزن میں

نکوہش مانعِ بے ربطیِ شورِ جنوں آئی
ہوا ہے خندۂ احباب بخیہ جیب و دامن میں

दिल में है यार की सफ़-ए-मिश्गाँ से रूकशी
हालाँकि ताक़त-ए-ख़लिश-ए-ख़ार भी नहीं

इस सादगी प कौन न मर जाये, अय ख़ुदा
लड़ते हैं और हाथ में तलवार भी नहीं

देखा असद को ख़ल्वत-ओ-जल्वत में बारहा
दीवानः गर नहीं है, तो हुशियार भी नहीं

११४

नहीं है ज़ख़्म कोई बख़िये के दरख़ुर, मिरे तन में
हुआ है तार-ए-अश्क-ए-यास रिश्तः चश्म-ए-सूज़न में

हुई है माने'-ए-ज़ौक़-ए-तमाशा, ख़ानः वीरानी
कफ़-ए-सैलाब बाक़ी है, बरँग-ए-पँबः रौज़न में

वदी'अत ख़ानः-ए-बेदाद-ए-काविशहाः-ए-मिश्गाँ हूँ
नगीन-ए-नाम-ए-शाहिद है मिरे हर क़तरः ख़ूँ तन में

बयाँ किससे हो, ज़ुल्मत गुस्तरी मेरे शबिस्ताँ की
शब-ए-मह हो, जो रख दें पँबः दीवारों के रौज़न में

निकोहिश माने'-ए-बेरब्ति-ए-शोर-ए-जुनूँ आई
हुआ है ख़न्दः-ए-अहबाब बख़ियः जैब-ओ-दामन में

ہوئے اُس مہروش کے جلوۂ تمثال کے آگے
پرافشاں جوہر آئینے میں، مثلِ ذرہ روزن میں

نہ جانوں نیک ہوں یا بد ہوں، پر صحبت مخالف ہے
جو گل ہوں تو ہوں گلخن میں، جو خس ہوں تو ہوں گلشن میں

ہزاروں دل دیے، جوشِ جنونِ عشق نے مجھ کو
سیہ ہو کر سویدا ہو گیا ہر قطرہ خوں تن میں

اسد، زندانیِ تاثیرِ اُلفت ہائے خوباں ہوں
خمِ دستِ نوازش ہو گیا ہے طوق گردن میں

۱۱۵

مزے جہان کے اپنی نظر میں خاک نہیں
سوائے خونِ جگر، سو جگر میں خاک نہیں

مگر غبار ہوئے پر، ہوا اُڑا لے جائے
وگرنہ تاب و تواں بال و پر میں خاک نہیں

یہ کس بہشت شمائل کی آمد آمد ہے
کہ غیرِ جلوۂ گل رہ گزر میں خاک نہیں

بھلا اُسے نہ سہی، کچھ مجھی کو رحم آتا
اثر مرے نفسِ بے اثر میں خاک نہیں

हुये उस मेह्र वश के जल्वः-ए-तिम्साल के आगे
पर अफ़शाँ जौह्र आईने में, मिस्ल-ए-ज़र्रः रौज़न में

न जानूँ नेक हूँ या बद हूँ, पर सोहबत मुख़ालिफ़ है
जो गुल हूँ तो हूँ गुलख़न में, जो ख़स हूँ तो हूँ गुलशन में

हज़ारों दिल दिये, जोश-ए-जुनून-ए-'अिश्क़ ने मुझको
सियह होकर सुवैदा हो गया हर क़तरः ख़ूँ तन में

असद, ज़िन्दानि-ए-तासीर-ए-उल्फ़तहा-ए-ख़ूबाँ हूँ
ख़म-ए-दस्त-ए-नवाज़िश हो गया है तौक़ गर्दन में

११५

मज़े जहान के अपनी नज़र में ख़ाक नहीं
सिवाये ख़ून-ए-जिगर, सो जिगर में ख़ाक नहीं

मगर ग़ुबार हुये पर, हवा उड़ा ले जाये
वगरनः ताब-ओ-तवाँ बाल-ओ-पर में ख़ाक नहीं

यह किस बिहिश्त शमाइल की आमद आमद है
कि ग़ैर-ए-जल्वः-ए-गुल रहगुज़र में ख़ाक नहीं

भला उसे न सही, कुछ मुझी को रह्म आता
असर मिरे नफ़स-ए-बेअसर में ख़ाक नहीं

خیالِ جلوۂ گل سے خراب ہیں میکش
شراب خانے کے دیوار و در میں خاک نہیں

ہوا ہوں عشق کی غارت گری سے شرمندہ
سوائے حسرتِ تعمیر گھر میں خاک نہیں

ہمارے شعر ہیں اب صرف دل لگی کے، اسد
کھلا، کہ فائدہ عرضِ ہنر میں خاک نہیں

۱۱۶

دل ہی تو ہے، نہ سنگ و خشت، درد سے بھر نہ آئے کیوں
روئیں گے ہم ہزار بار، کوئی ہمیں ستائے کیوں

دیر نہیں، حرم نہیں، در نہیں، آستاں نہیں
بیٹھے ہیں رہ گزر پہ ہم، کوئی ہمیں اُٹھائے کیوں

جب وہ جمالِ دل فروز، صورتِ مہرِ نیم روز
آپ ہی ہو نظارہ سوز، پردے میں منھ چھپائے کیوں

دشنۂ غمزہ جاں ستاں، ناوکِ ناز بے پناہ
تیرا ہی عکسِ رخ سہی، سامنے تیرے آئے کیوں

قیدِ حیات و بندِ غم، اصل میں دونوں ایک ہیں
موت سے پہلے، آدمی غم سے نجات پائے کیوں

ख़याल-ए-जल्वः-ए-गुल से ख़राब हैं मैकश
शराब ख़ाने के दीवार-ओ-दर में ख़ाक नहीं

हुआ हूँ 'अिश्क़ की ग़ारतगरी से शर्मिन्दः
सिवाये हसरत-ए-ता'मीर घर में ख़ाक नहीं

हमारे शे'र हैं अब सिर्फ़ दिल्लगी के, असद
खुला, कि फ़ायदः अर्ज़-ए-हुनर में ख़ाक नहीं

११६

दिल ही तो है, न सँग-ओ-ख़िश्त, दर्द से भर न आये क्यों
रोयेंगे हम हज़ार बार, कोई हमें सताये क्यों

दैर नहीं, हरम नहीं, दर नहीं, आस्ताँ नहीं
बैठे हैं रहगुज़र प हम, कोई हमें उठाये क्यों

जब वह जमाल-ए-दिल फ़रोज, सूरत-ए-मेह्र-ए-नीमरोज़
आप ही हो नजारः सोज, पर्दे में मुँह छुपाये क्यों

दश्नः-ए-ग़मजः जाँ सिताँ, नावक-ए-नाज़ बे पनाह
तेरा ही 'अक्स-ए-रुख़ सही, सामने तेरे आये क्यों

क़ैद-ए-हयात-ओ-बन्द-ए-ग़म, अस्ल में दोनों एक हैं
मौत से पहले, आदमी ग़म से नजात पाये क्यों

حسن اور اُس پہ حسنِ ظن، رہ گئی بوالہوس کی شرم
اپنے پہ اعتماد ہے، غیر کو آزمائے کیوں

واں وہ غرورِ عز و ناز، یاں یہ حجابِ پاسِ وضع
راہ میں ہم ملیں کہاں، بزم میں وہ بلائے کیوں

ہاں وہ نہیں خدا پرست، جاؤ وہ بے وفا سہی
جس کو ہو دین و دل عزیز، اُس کی گلی میں جائے کیوں

غالبِ خستہ کے بغیر، کون سے کام بند ہیں
روئیے زار زار کیا، کیجیے ہائے ہائے کیوں

۱۱۷

غنچۂ نا شگفتہ کو دور سے مت دکھا، کہ یوں
بوسے کو پوچھتا ہوں میں، منہ سے مجھے بتا، کہ یوں

پرسشِ طرزِ دلبری، کیجیے کیا، کہ بِن کہے
اُس کے ہر اک اِشارے سے نکلے ہے یہ ادا، کہ یوں

رات کے وقت مے پیے، ساتھ رقیب کو لیے
آئے وہ یاں خدا کرے، پر نہ کرے خدا، کہ یوں

غیر سے رات کیا بنی، یہ جو کہا، تو دیکھیے
سامنے آن بیٹھنا، اور یہ دیکھنا کہ یوں

हुस्न और उस प हुस्न-ए-ज़न, रह गई बुल्हवस की शर्म
अपने प ए'तिमाद है, ग़ैर को आज़माये क्यों

वाँ वह ग़ुरूर-ए-'अिज़्ज़-ओ-नाज़, याँ यह हिजाब-ए-पास-ए-वज़्'अ
राह में हम मिलें कहाँ, बज़्म में वह बुलाये क्यों

हाँ वह नहीं ख़ुदा परस्त, जाओ वह बेवफ़ा सही
जिसको हो दीन-ओ-दिल 'अज़ीज़, उसकी गली में जाये क्यों

ग़ालिब-ए-ख़स्तः के बिग़ैर, कौन से काम बन्द हैं
रोइये ज़ार ज़ार क्या, कीजिये हाय हाय क्यों

११७

ग़ुंचः-ए-नाशिगुफ़्तः को दूर से मत दिखा, कि यों
बोसे को पूछता हूँ मैं, मुँह से मुझे बता, कि यों

पुरसिश-ए-तर्ज़-ए-दिलबरी, कीजिये क्या, कि बिन कहे
उसके हर इक इशारे से निकले है यह अदा, कि यों

रात के वक़्त मै पिये, साथ रक़ीब को लिये
आये वह याँ ख़ुदा करे, पर न करे ख़ुदा, कि यों

ग़ैर से रात क्या बनी, यह जो कहा, तो देखिये
सामने आन बैठना, और यह देखना कि यों

بزم میں اُس کے روبرو، کیوں نہ خموش بیٹھیے
اُس کی تو خامشی میں بھی، ہے یہی مدعا کہ یوں

میں نے کہا کہ بزمِ ناز چاہیے غیر سے، تہی
سن کے ستم ظریف نے مجھ کو اُٹھا دیا، کہ یوں

مجھ سے کہا جو یار نے، جاتے ہیں ہوش کس طرح
دیکھ کے میری بے خودی چلنے لگی ہوا، کہ یوں

کب مجھے کوے یار میں، رہنے کی وضع یاد تھی
آئینہ دار بن گئی، حیرتِ نقشِ پا، کہ یوں

گر ترے دل میں ہو خیال، وصل میں شوق کا زوال
موجِ محیطِ آب میں، مارے ہے دست و پا، کہ یوں

جو یہ کہے، کہ ریختہ کیوں کہ ہو رشکِ فارسی
گفتۂ غالب ایک بار پڑھ کے اُسے سنا، کہ یوں

۱۱۸

حسد سے دل اگر افسردہ ہے، گرمِ تماشا ہو
کہ چشمِ تنگ، شاید، کثرتِ نظارہ سے وا ہو

بہ قدرِ حسرتِ دل، چاہیے ذوقِ معاصی بھی
بھروں یک گوشۂ دامن، گر آبِ ہفت دریا ہو

बज़्म में उसके रूबरू, क्यों न ख़मोश बैठिये
उसकी तो ख़ामुशी में भी, है यही मुद्द'आ कि यों

मैंने कहा कि, बज़्म-ए-नाज़ चाहिये ग़ैर से, तिही
सुन के सितम ज़रीफ़ ने मुझको उठा दिया, कि यों

मुझसे कहा जो यार ने, जाते हैं होश किस तरह
देख के मेरी बेख़ुदी, चलने लगी हवा, कि यों

कब मुझे कू-ए-यार, में रहने की वज़्'अ याद थी
आइनःदार बन गई, हैरत-ए-नक़्श-ए-पा, कि यों

गर तिरे दिल में हो ख़याल, वस्ल में शौक़ का ज़वाल
मौज मुहीत-ए-आब में, मारे है दस्त-ओ-पा, कि यों

जो यह कहे, कि रेख़्तः क्योंकि हो रश्क-ए-फ़ारसी
गुफ़्तः-ए-ग़ालिब एक बार पढ़के उसे सुना, कि यों

११८

हसद से दिल अगर अफ़सुर्दः है, गर्म-ए-तमाशा हो
कि चश्म-ए-तँग, शायद, कसरत-ए-नज़्ज़ारः से वा हो

बक़द्र-ए-हसरत-ए-दिल, चाहिये ज़ौक़-ए-म'आसी भी
भरूँ यक गोशः-ए-दामन, गर आब-ए-हफ़्त दरिया हो

اگر وہ سرو قد، گرمِ خرامِ ناز آجاوے
کفِ ہر خاکِ گلشن شکلِ قمری نالہ فرسا ہو

۱۱۹

کعبے میں جا رہا، تو نہ دو طعنہ، کیا کہیں
بھولا ہوں حقِ صحبتِ اہلِ کنشت کو

طاعت میں تا، رہے نہ مے و انگبیں کی لاگ
دوزخ میں ڈال دو، کوئی لے کر بہشت کو

ہوں منحرف نہ کیوں، رہ و رسمِ ثواب سے
ٹیڑھا لگا ہے قط، قلمِ سرنوشت کو

غالب، کچھ اپنی سعی سے لہنا نہیں مجھے
خرمن جلے، اگر نہ ملخ کھائے کشت کو

۱۲۰

وارستہ اس سے ہیں، کہ محبت ہی کیوں نہ ہو
کیجے ہمارے ساتھ، عداوت ہی کیوں نہ ہو

چھوڑا نہ مجھ میں ضعف نے رنگ اختلاط کا
ہے دل پہ بار، نقشِ محبت ہی کیوں نہ ہو

अगर वह सर्व क़द, गर्म-ए-ख़िराम-ए-नाज़ आ जावे
कफ़-ए-हर खाक़-ए-गुलशन शक्ल-ए-क़ुमरी नालः फ़र्सा हो

११९

का'बे में जारहा, तो न दो ता'नः, क्या कहीं
भूला हूँ हक़्क़-ए-सोहबत-ए-अह्ल-ए-कुनिश्त को

ता'अत में ता, रहे न मै-ओ-अँगबीं की लाग
दोज़ख़ में डाल दो, कोई लेकर बिहिश्त को

हूँ मुंहरिफ़ न क्यों, रह-ओ-रस्म-ए-सवाब से
टेढ़ा लगा है क़त, क़लम-ए-सरनविश्त को

ग़ालिब, कुछ अपनी स'अि से लहना नहीं मुझे
ख़रमन जले, अगर न मलख़ खाये किश्त को

१२०

वारस्तः उससे हैं, कि महब्बत ही क्यों न हो
कीजे हमारे साथ, 'अदावत ही क्यों न हो

छोड़ा न मुझमें ज़ो'फ़ ने रँग इख़्तिलात का
है दिल प बार, नक़्श-ए-महब्बत ही क्यों न हो

ہے مجھ کو تجھ سے تذکرۂ غیر کا گِلا
ہر چند بر سبیلِ شکایت ہی کیوں نہ ہو

پیدا ہوئی ہے، کہتے ہیں، ہر درد کی دوا
یوں ہو، تو چارۂ غم اُلفت ہی کیوں نہ ہو

ڈالا نہ بے کسی نے کسی سے معاملہ
اپنے سے کھینچتا ہوں، خجالت ہی کیوں نہ ہو

ہے آدمی بجائے خود، اک محشرِ خیال
ہم انجمن سمجھتے ہیں، خلوت ہی کیوں نہ ہو

ہنگامۂ زبونیِ ہمت ہے، انفعال
حاصل نہ کیجے دہر سے، عبرت ہی کیوں نہ ہو

وارستگی بہانۂ بیگانگی نہیں
اپنے سے کر، نہ غیر سے، وحشت ہی کیوں نہ ہو

مٹتا ہے فوتِ فرصتِ ہستی کا غم کوئی
عمرِ عزیز صرفِ عبادت ہی کیوں نہ ہو

اُس فتنہ خُو کے در سے اب اُٹھتے نہیں، اسد
اس میں ہمارے سر پہ قیامت ہی کیوں نہ ہو

है मुझको तुझसे तज़किर:-ए-ग़ैर का गिला
हरचन्द बरसबील-ए-शिकायत ही क्यों न हो

पैदा हुई है, कहते हैं, हर दर्द की दवा
यों हो, तो चार:-ए-ग़म-ए-उल्फ़त ही क्यों न हो

डाला न बेकसी ने किसी से मु'ग्रामला
ग्रपने से खेंचता हूँ, ख़जालत ही क्यों न हो

है ग्रादमी बजाये ख़ुद, इक महशर-ए-ख़याल
हम ग्रंजुमन समझते हैं, ख़ल्वत ही क्यों न हो

हँगाम:-ए-ज़बूनि-ए-हिम्मत है, इन्फ़ि'ग्राल
हासिल न कीजे दहर से, 'ग्रिब्रत ही क्यों न हो

वारस्तगी बहान: -ए- बेगानगी नहीं
ग्रपने से कर, न ग़ैर से, वहशत ही क्यों न हो

मिटता है फ़ौत-ए-फ़ुर्सत-ए-हस्ती का ग़म कोई
ग्रुम्र-ए-'ग्रज़ीज़ सर्फ़-ए-'ग्रिबादत ही क्यों न हो

उस फ़ितन: ख़ू के दर से ग्रब उठते नहीं, ग्रसद
इसमें हमारे सर प क़यामत ही क्यों न हो

قفس میں ہوں گر اچھا بھی نہ جانیں میرے شیون کو
مرا ہونا بُرا کیا ہے، نوا سنجانِ گلشن کو

نہیں گر ہمدمی آساں، نہ ہو یہ رشک کیا کم ہے
نہ دی ہوتی، خدایا، آرزوے دوست دشمن کو

نہ نکلا آنکھ سے تیری اک آنسو، اُس جراحت پر
کیا سینے میں جس نے خوں چکاں، مژگانِ سوزن کو

خدا شرمائے ہاتھوں کو، کہ رکھتے ہیں کشا کش میں
کبھی میرے گریباں کو، کبھی جاناں کے دامن کو

ابھی ہم قتل گہ کا دیکھنا آساں سمجھتے ہیں
نہیں دیکھا شناور جوے خوں میں، تیرے توسن کو

ہوا چرچا جو میرے پانؤں کی زنجیر بننے کا
کیا بیتاب کاں میں، جنبشِ جوہر نے آہن کو

خوشی کیا، کھیت پر میرے، اگر سوبار ابر آوے
سمجھتا ہوں، کہ ڈھونڈے ہے ابھی سے برق خرمن کو

وفا داری، بہ شرطِ اُستواری، اصلِ ایماں ہے
مرے بت خانہ میں، تو کعبے میں گاڑو برہمن کو

१२१

क़फ़स में हूँ, गर अच्छा भी न जानें मेरे शेवन को
मिरा होना बुरा क्या है, नवा सँजान-ए-गुलशन को

नहीं गर हमदमी आसाँ, न हो यह रश्क क्या कम है
न दी होती, ख़ुदाया, आरज़ु-ए-दोस्त दुश्मन को

न निकला आँख से तेरी इक आँसू, उस जराहत पर
किया सीने में जिसने ख़ूँचकाँ, मिश़गान-ए-सूज़न को

ख़ुदा शरमाये हाथों को, कि रखते हैं कशाकश में
कभी मेरे गरीबाँ को, कभी जानाँ के दामन को

अभी हम क़त्लगह का देखना आसाँ समझते हैं
नहीं देखा शनावर जू-ए-ख़ूँ में तेरे तौसन को

हुआ चर्चा जो मेरे पाँव की ज़ंजीर बनने का
किया बेताब काँ में, जुँबिश-ए-जौहर ने आहन को

ख़ुशी क्या, खेत पर मेरे, अगर सौ बार अब्र आवे
समझता हूँ, कि ढूण्डे है अभी से बर्क़ ख़िरमन को

वफ़ादारी, बशर्त-ए-उस्तुवारी, अस्ल-ए-ईमाँ है
मरे बुतख़ाने में, तो का'बे में गाड़ो बरहमन को

شہادت تھی مری قسمت میں، جو دی تھی یہ خُو مجھ کو
جہاں تلوار کو دیکھا، جُھکا دیتا تھا گردن کو

نہ لٹتا دن کو، تو کب رات کو یوں بے خبر سوتا
رہا کھٹکا نہ چوری کا، دعا دیتا ہوں رہزن کو

سخن کیا کہہ نہیں سکتے، کہ جویا ہوں جواہر کے
جگر کیا ہم نہیں رکھتے، کہ کھو دیں جا کے معدن کو

مرے شاہِ سلیماں جاہ سے نسبت نہیں، غالب
فریدون و جم و کیخسرو و داراب و بہمن کو

۱۲۲

دھوتا ہوں جب میں پینے کو، اُس سیم تن کے پانؤ
رکھتا ہے، ضد سے، کھینچ کے باہر لگن کے پانؤ

دی سادگی سے جان، پڑوں کوہ کن کے پانؤ
ہیہات، کیوں نہ ٹوٹ گئے، پیرزن کے پانؤ

بھاگے تھے ہم بہت، سو اُسی کی سزا ہے یہ
ہو کر اسیر دابتے ہیں، راہ زن کے پانؤ

مرہم کی جستجو میں، پھرا ہوں جو دُور دُور
تن سے سوا فگار ہیں، اس خستہ تن کے پانؤ

शहादत थी मिरी क़िस्मत में, जो दी थी यह ख़ू मुझको
जहाँ तलवार को देखा, झुका देता था गर्दन को

न लुटता दिन को, तो कब रात को यों बेख़बर सोता
रहा खटका न चोरी का, दुआ देता हूँ रहज़न को

सुख़न क्या कह नहीं सकते, कि जोया हूँ जवाहिर के
जिगर क्या हम नहीं रखते, कि खोदें जाके मा'दन को

मिरे शाह-ए-सुलेमाँ जाह से निस्बत नहीं, ग़ालिब
फ़रीदून-ओ-जम-ओ-कैख़ुसरु-ओ-दाराब-ओ-बहमन को

१२२

धोता हूँ जब मैं पीने को, उस सीमतन के पाँव
रखता है, ज़िद से, खेंच के बाहर लगन के पाँव

दी सादगी से जान, पड़ूँ कोहकन के पाँव
हैहात, क्यों न टूट गये, पीरज़न के पाँव

भागे थे हम बहुत, सो उसी की सज़ा है यह
होकर असीर दाबते हैं, राहज़न के पाँव

मरहम की जुस्तुजू में, फिरा हूँ जो दूर दूर
तन से सिवा फ़िगार हैं, इस ख़स्तःतन के पाँव

اللہ رے ذوقِ دشت نوردی، کہ بعدِ مرگ
ہلتے ہیں خود بخود مرے،اندر کفن کے پانوٗ

ہے جوشِ گل بہار میں یاں تک، کہ ہر طرف
اُڑتے ہوئے اُلجھتے ہیں، مرغِ چمن کے پانوٗ

شب کو کسی کے خواب میں آیا نہ ہو کہیں
دُکھتے ہیں آج اُس بتِ نازک بدن کے پانوٗ

غالب، مرے کلام میں کیوں کر مزا نہ ہو
پیتا ہوں دھو کے خسروِ شیریں سخن کے پانوٗ

۱۲۳

واں اس کو ہولِ دل ہے، تو یاں میں ہوں شرمسار
یعنی یہ میری آہ کی تاثیر سے نہ ہو

اپنے کو دیکھتا نہیں ذوقِ ستم تو دیکھ
آئینہ تا کہ دیدۂ نخچیر سے نہ ہو

۱۲٤

واں پہنچ کر جو غش آتا پےِ ہم ہے ہم کو
صد رہ آہنگِ زمیں بوسِ قدم ہے ہم کو

अल्लह रे ज़ौक़-ए-दश्त नवर्दी, कि बा'द-ए-मर्ग
हिलते हैं ख़ुद बख़ुद मिरे, अन्दर कफ़न के पाँव

है जोश-ए-गुल बहार में याँ तक, कि हर तरफ़
उड़ते हुये उलझते हैं, मुर्ग़-ए-चमन के पाँव

शब को किसी के ख़्वाब में आया न हो कहीं
दुखते हैं आज उस बुत-ए-नाज़ुक बदन के पाँव

ग़ालिब, मिरे कलाम में क्योंकर मज़ा न हो
पीता हूँ धोके ख़ुसरू-ए-शीरीं सुख़न के पाँव

१२३

वाँ उसको हौल-ए-दिल है, तो याँ मैं हूँ शर्मसार
या'नी यह मेरी आह की तासीर से न हो

अपने को देखता नहीं, ज़ौक़-ए-सितम तो देख
आईनः ताकि दीदः-ए-नख़्चीर से न हो

१२४

वाँ पहुँचकर जो ग़श आता पै-ए-हम है हम को
सदरह आहँग-ए-ज़मीं बोस-ए-क़दम है हम को

دل کو میں، اور مجھے دل، محوِ وفا رکھتا ہے
کس قدر ذوقِ گرفتاریِ ہم ہے ہم کو

ضعف سے، نقش پےِ مور، ہے طوقِ گردن
تیرے کوچے سے، کہاں طاقتِ رم ہے ہم کو

جان کر کیجے تغافل، کہ کچھ اُمید بھی ہو
یہ نگاہِ غلط انداز تو سم ہے ہم کو

رشکِ ہم طرحی و دردِ اثرِ بانگِ حزیں
نالۂ مرغِ سحر، تیغِ دو دم ہے ہم کو

سر اُڑانے کے جو وعدے کو مکرر چاہا
ہنس کے بولے کہ، ترے سر کی قسم ہے ہم کو

دل کے خوں کرنے کی کیا وجہ، و لیکن ناچار
پاسِ بے رونقیِ دیدہ اہم ہے ہم کو

تم وہ نازک، کہ خموشی کو فغاں کہتے ہو
ہم وہ عاجز، کہ تغافل بھی ستم ہے ہم کو

قطعہ

لکھنؤ آنے کا باعث نہیں کھلتا، یعنی
ہوسِ سیر و تماشا، سو وہ کم ہے ہم کو

दिल को मैं, और मुझे दिल, मह्‌व-ए-वफ़ा रखता है
किस क़दर ज़ौक़-ए-गिरफ़्तारि-ए-हम है हम को

जो'फ़ से, नक़्श-ए-पै-ए-मोर, है तौक़-ए-गर्दन
तेरे कूचे से, कहाँ ताक़त-ए-रम है हम को

जान कर कीजे तग़ाफ़ुल, कि कुछ उम्मीद भी हो
यह निगाह-ए-ग़लत अन्दाज़ तो सम है हम को

रश्क-ए-हमतरहि-ओ-दर्द-ए-असर-ए-बाँग-ए-हज़ीं
नालः-ए-मुर्ग़-ए-सहर, तेग़-ए-दुदम है हम को

सर उड़ाने के जो वा'दे को मुकर्रर चाहा
हँस के बोले कि, तिरे सर की क़सम है हम को

दिल के ख़ूँ करने की क्या वज्‌ह, वलेकिन नाचार
पास-ए-बेरौनक़ि-ए-दीदः अहम है हम को

तुम वह नाज़ुक, कि ख़मोशी को फ़ुग़ाँ कहते हो
हम वह 'आजिज़, कि तग़ाफ़ुल भी सितम है हम को

क़त'अ:

लखनऊ आने का बा'अिस नहीं खुलता, या'नी
हवस-ए-सैर-ओ-तमाशा, सो वह कम है हम को

مقطعِ سلسلۂ شوق نہیں ہے یہ شہر
عزمِ سیرِ نجف و طوفِ حرم ہے ہم کو

لیے جاتی ہے کہیں ایک توقع، غالب
جادۂ رہ کششِ کافِ کرم ہے ہم کو

۱۲۵

تم جانو، تم کو غیر سے جو رسم و راہ ہو
مجھ کو بھی پوچھتے رہو، تو کیا گناہ ہو

بچتے نہیں مواخذۂ روزِ حشر سے
قاتل اگر رقیب ہے، تو تم گواہ ہو

کیا وہ بھی بے گنہ کش و حق ناشناس ہیں
مانا کہ تم بشر نہیں، خورشید و ماہ ہو

اُبھرا ہوا نقاب میں ہے اُن کے، ایک تار
مرتا ہوں میں، کہ یہ نہ کسی کی نگاہ ہو

جب میکدہ چھٹا، تو پھر اب کیا جگہ کی قید
مسجد ہو، مدرسہ ہو، کوئی خانقاہ ہو

سنتے ہیں جو بہشت کی تعریف، سب درست
لیکن خدا کرے، وہ تری جلوہ گاہ ہو

मक़त'-ए-सिलसिलः-ए-शौक़ नहीं है यह शह्र
'अज़्म-ए-सैर-ए-नजफ़-ओ-तौफ़-ए-हरम है हम को

लिये जाती है कहीं एक तवक़्क़ो'अ, ग़ालिब
जादः-ए-रह कशिश-ए-काफ़-ए-करम है हम को

१२५

तुम जानो, तुम को ग़ैर से जो रस्म-ओ-राह हो
मुझको भी पूछते रहो, तो क्या गुनाह हो

बचते नहीं मुआख़जः -ए-रोज़-ए-हश्र से
क़ातिल अगर रक़ीब है, तो तुम गवाह हो

क्या वह भी बेगुनह कुश-ओ-हक़ ना शनास हैं
माना कि तुम बशर नहीं, ख़ुर्शीद-ओ-माह हो

उभरा हुआ निक़ाब में है उनके, एक तार
मरता हूँ मैं, कि यह न किसी की निगाह हो

जब मैकदः छुटा, तो फिर अब क्या जगह की क़ैद
मस्जिद हो, मद्रसः हो, कोई ख़ानक़ाह हो

सुनते हैं जो बिहिश्त की ता'रीफ़, सब दुरुस्त
लेकिन ख़ुदा करे, वह तिरी जल्वःगाह हो

غالب بھی گر نہ ہو، تو کچھ ایسا ضرر نہیں
دنیا ہو، یارب، اور مرا بادشاہ ہو

۱۲۶

گئی وہ بات، کہ ہو گفتگو، تو کیوں کر ہو
کہے سے کچھ نہ ہوا، پھر کہو، تو کیوں کر ہو

ہمارے ذہن میں، اِس فکر کا ہے نام وصال
کہ گر نہ ہو، تو کہاں جائیں، ہو، تو کیوں کر ہو

ادب ہے اور یہی کشمکش، تو کیا کیجے
حیا ہے اور یہی گو مگو، تو کیوں کر ہو

تمہیں کہو، کہ گزارا صنم پرستوں کا
بتوں کی ہو اگر ایسی ہی خُو، تو کیوں کر ہو

اُلجھتے ہو تم، اگر دیکھتے ہو آئینہ
جو تم سے شہر میں ہوں ایک دو، تو کیوں کر ہو

جسے نصیب ہو، روزِ سیاہ میرا سا
وہ شخص دن نہ کہے رات کو، تو کیوں کر ہو

ہمیں پھر اُن سے اُمید، اور اُنھیں ہماری قدر
ہماری بات ہی پوچھیں نہ وُو، تو کیوں کر ہو

ग़ालिब भी गर न हो, तो कुछ ऐसा ज़रर नहीं
दुनिया हो, यारब, और मिरा बादशाह हो

१२६

गई वह बात, कि हो गुफ़्तुगू तो क्योंकर हो
कहे से कुछ न हुआ, फिर कहो, तो क्योंकर हो

हमारे ज़ेहन में, इस फ़िक्र का है नाम है विसाल
कि गर न हो, तो कहाँ जायें, हो, तो क्योंकर हो

अदब है और यही कशमकश, तो क्या कीजे
हया है और यही गोमगो, तो क्योंकर हो

तुम्हीं कहो, कि गुज़ारा सनम परस्तों का
बुतों की हो अगर ऐसी ही ख़ू, तो क्योंकर हो

उलझते हो तुम, अगर देखते हो आईन:
जो तुमसे शह्र में हों एक दो, तो क्योंकर हो

जिसे नसीब हो, रोज़-ए-सियाह मेरा सा
वह शख़्स दिन न कहे रात को, तो क्योंकर हो

हमें फिर उनसे उमीद, और उन्हें हमारी क़द्र
हमारी बात ही पूछें न वो, तो क्योंकर हो

غلط نہ تھا، ہمیں خط پر، گماں تسلّی کا
نہ مانے دیدۂ دیدار جو، تو کیوں کر ہو

بتاؤ اُس مژہ کو دیکھ کر، ہو مجھ کو قرار
یہ نیش ہو رگِ جاں میں فرو، تو کیوں کر ہو

مجھے جنوں نہیں، غالب، ولے بہ قولِ حضور
فراقِ یار میں تسکین ہو، تو کیوں کر ہو

۱۲۷

کسی کو دے کے دل، کوئی نواسنجِ فغاں کیوں ہو
نہ ہو جب دل ہی سینے میں، تو پھر منھ میں زباں کیوں ہو

وہ اپنی خو نہ چھوڑیں گے، ہم اپنی وضع کیوں چھوڑیں
سبک سر بن کے کیا پوچھیں، کہ ہم سے سر گراں کیوں ہو

کیا غم خوار نے رسوا، لگے آگ اس محبت کو
نہ لاوے تاب جو غم کی، وہ میرا رازداں کیوں ہو

وفا کیسی، کہاں کا عشق، جب سر پھوڑنا ٹھہرا
تو پھر اے سنگ دل، تیرا ہی سنگِ آستاں کیوں ہو

قفس میں، مجھ سے رودادِ چمن کہتے، نہ ڈر، ہمدم
گری ہے جس پہ کل بجلی، وہ میرا آشیاں کیوں ہو

ग़लत न था, हमें ख़त पर, गुमाँ तसल्ली का
न माने दीदः-ए-दीदार जू, तो क्योंकर हो

बताओ उस मिश़: को देखकर, हो मुझको क़रार
यह नेश हो रग-ए-जाँ में फ़रो, तो क्योंकर हो

मुझे जुनूँ नहीं, ग़ालिब, वले बक़ौल-ए-हुज़ूर
फ़िराक़-ए-यार में तस्कीन हो, तो क्योंकर हो

१२७

किसी को देके दिल कोई नवा सँज-ए-फ़ुग़ाँ क्यों हो
न हो जब दिल ही सीने में, तो फिर मुँह में ज़बाँ क्यों हो

वह अपनी ख़ू न छोड़ेंगे, हम अपनी वज़्'अ क्यों छोड़ें
सुबुक सर बन के क्या पूछें, कि हमसे सरगिराँ क्यों हो

किया ग़मख़्वार ने रुस्वा; लगे आग इस महब्बत को
न लावे ताब जो ग़म की, वह मेरा राज़दाँ क्यों हो

वफ़ा कैसी, कहाँ का 'अिश्क़, जब सर फोड़ना ठहरा
तो फिर, अय सँग दिल, तेरा ही सँग-ए-आस्ताँ क्यों हो

क़फ़स में, मुझसे रूदाद-ए-चमन कहते, न डर, हमदम
गिरी है जिस प कल बिजली, वह मेरा आशियाँ क्यों हो

یہ کہہ سکتے ہو، ہم دل میں نہیں ہیں، پر یہ بتلاؤ
کہ جب دل میں تمہیں تم ہو، تو آنکھوں سے نہاں کیوں ہو

غلط ہے جذبِ دل کا شکوہ، دیکھو، جرم کس کا ہے
نہ کھینچو گر تم اپنے کو، کشاکش درمیاں کیوں ہو

یہ فتنہ، آدمی کی خانہ ویرانی کو کیا کم ہے
ہوئے تم دوست جس کے، دشمن اُس کا آسماں کیوں ہو

یہی ہے آزمانا، تو ستانا کس کو کہتے ہیں
عدو کے ہو لیے جب تم، تو میرا امتحاں کیوں ہو

کہا تم نے کہ، کیوں ہو غیر کے ملنے میں رسوائی
بجا کہتے ہو، سچ کہتے ہو، پھر کہیو کہ، ہاں کیوں ہو

نکالا چاہتا ہے کام کیا طعنوں سے تُو، غالب
ترے بے مہر کہنے سے، وہ تجھ پر مہرباں کیوں ہو

۱۲۸

رہیے اب ایسی جگہ چل کر، جہاں کوئی نہ ہو
ہم سخن کوئی نہ ہو اور ہم زباں کوئی نہ ہو

بے در و دیوار سا اک گھر بنایا چاہیے
کوئی ہمسایہ نہ ہو اور پاسباں کوئی نہ ہو

यह कह सक्ते हो, हम दिल में नहीं हैं, पर यह बतलाओ
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो, तो आँखों से निहाँ क्यों हो

गलत है जज़्ब-ए-दिल का शिक्वः, देखो जुर्म किस का है
न खेंचो गर तुम अपने को, कशाकश दरमियाँ क्यों हो

यह फ़ितनः, आदमी की ख़ानःवीरानी को क्या कम है
हुये तुम दोस्त जिसके, दुश्मन उसका आस्माँ क्यों हो

यही है आजमाना, तो सताना किस को कहते हैं
'अदू के हो लिये जब तुम, तो मेरा इम्तिहाँ क्यों हो

कहा तुमने कि, क्यों हो ग़ैर के मिलने में रुस्वाई
बजा कहते हो, सच कहते हो, फिर कहियो कि हाँ क्यों हो

निकाला चाहता है काम क्या ता'नों से तू, ग़ालिब
तिरे बेमेह्र कहने से, वह तुझ पर मेह्रबाँ क्यों हो

१२८

रहिये अब ऐसी जगह चलकर, जहाँ कोई न हो
हम सुख़न कोई न हो और हम ज़बाँ कोई न हो

बेदर-ओ-दीवार सा इक घर बनाया चाहिये
कोई हमसायः न हो और पास्बाँ कोई न हो

پڑیے گر بیمار، تو کوئی نہ ہو تیمار دار
اور اگر مر جائیے، تو نوحہ خواں کوئی نہ ہو

۱۲۹

از مہر تا بہ ذرہ دل و دل ہے آئینہ
طوطی کو شش جہت سے مقابل ہے آئینہ

۱۳۰

ہے سبزہ زار ہر در و دیوارِ غم کدہ
جس کی بہار یہ ہو، پھر اُس کی خزاں نہ پوچھ

ناچار بے کسی کی بھی حسرت اُٹھائیے
دشواریِ رہ و ستمِ ہم رہاں نہ پوچھ

۱۳۱

صد جلوہ رُو برو ہے جو مژگاں اُٹھائیے
طاقت کہاں، کہ دید کا احساں اُٹھائیے

ہے سنگ پر، براتِ معاشِ جنونِ عشق
یعنی ہنوز منتِ طفلاں اُٹھائیے

पड़िये गर बीमार, तो कोई न हो तीमारदार
और अगर मर जाइये, तो नौहः ख़्वाँ कोई न हो

१२९

अज़ मेहर ता ब ज़र्रः दिल-ओ-दिल है आइनः
तूती को शश जिहत से मुक़ाबिल है आइनः

१३०

है सब्ज़ः ज़ार हर दर-ओ-दीवार-ए-ग़मकदः
जिसकी बहार यह हो, फिर उसकी ख़ज़ाँ न पूछ

नाचार बेकसी की भी हसरत उठाइये
दुश्वारि-ए-रह-ओ-सितम-ए-हमरहाँ न पूछ

१३१

सद जल्वः रू ब रू है, जो मिश़गाँ उठाइये
ताक़त कहाँ, कि दीद का एहसाँ उठाइये

है सँग पर, बरात-ए-म'आश-ए-जुनून-ए-'अिश्क़
या'नी हनोज़ मिन्नत-ए-तिफ़्लाँ उठाइये

دیوار، بارِ منتِ مزدور سے ، ہے خم
اے خانماں خراب، نہ احساں اُٹھائیے

یا میرے زخمِ رشک کو رُسوا نہ کیجیے
یا پردۂ تبسمِ پنہاں اُٹھائیے

۱۳۲

مسجد کے زیرِ سایہ خرابات چاہیے
بھوں پاس آنکھ، قبلۂ حاجات، چاہیے

عاشق ہوئے ہیں آپ بھی، اک اور شخص پر
آخر ستم کی کچھ تو مکافات چاہیے

دے داد، اے فلک، دلِ حسرت پرست کی
ہاں کچھ نہ کچھ تلافیِ مافات چاہیے

سیکھے ہیں مہ رُخوں کے لئے ہم مصوری
تقریب کچھ تو بہرِ ملاقات چاہیے

مے سے غرض نشاط ہے، کس رُوسیاہ کو
اک گونہ بے خودی مجھے دن رات چاہیے

ہے رنگِ لالہ و گل و نسریں، جدا جدا
ہر رنگ میں بہار کا اثبات چاہیے

दीवार, बार-ए-मिन्नत-ए-मज़दूर से, है ख़म
अय ख़ान्माँ ख़राब, न एहसाँ उठाइये

या मेरे ज़ख़्म-ए-रश्क को रुस्वा न कीजिये
या पर्दः-ए-तबस्सुम-ए-पिन्हाँ उठाइये

१३२

मस्जिद के ज़ेर-ए-सायः, ख़राबात चाहिये
भौं पास आँख, क़िबलः-ए-हाजात चाहिये

'आशिक़ हुये हैं आप भी, इक और शख़्स पर
आख़िर सितम की कुछ तो मुकाफ़ात चाहिये

दे दाद, अय फ़लक, दिल-ए-हसरत परस्त की
हाँ कुछ न कुछ तलाफ़ि-ए-माफ़ात चाहिये

सीखे हैं महरुख़ों के लिये हम मुसव्विरी
तक़रीब कुछ तो बहर-ए-मुलाक़ात चाहिये

मै से ग़रज़ नशात है किस रूसियाह को
इक गूनः बेख़ुदी मुझे दिन रात चाहिये

है रँग-ए-लालः-ओ-गुल-ओ-नसरीं, जुदा जुदा
हर रँग में बहार का इस्बात चाहिये

سر پائے خُم پہ چاہیے ہنگامِ بےخودی
رُو سُوئے قبلہ وقتِ مناجات چاہیے

یعنی بہ حسبِ گردشِ پیمانۂ صفات
عارف ہمیشہ مستِ مےِ ذات چاہیے

نشو و نما ہے اصل سے، غالب، فروع کو
خاموشی ہی سے نکلے ہے، جو بات چاہیے

۱۳۳

بساطِ عجز میں تھا ایک دل، یک قطرہ خوں وہ بھی
سو رہتا ہے، باندازِ چکیدن سر نگوں، وہ بھی

رہے اُس شوخ سے آزردہ ہم چندے، تکلف سے
تکلف برطرف، تھا ایک اندازِ جنوں وہ بھی

خیالِ مرگ، کب تسکیں دلِ آزردہ کو بخشے
مرے دامِ تمنا میں ہے اک صیدِ زبوں، وہ بھی

نہ کرتا کاش نالہ، مجھ کو کیا معلوم تھا، ہمدم
کہ ہوگا باعثِ افزایشِ دردِ دروں وہ بھی

نہ اتنا بُرشِ تیغِ جفا پر ناز فرماؤ
مرے دریائے بیتابی میں ہے اک موجِ خوں وہ بھی

सर पा-ए-ख़ुम प चाहिये हँगाम-ए-बेख़ुदी
रू सू-ए-क़िबलः वक़्त-ए-मुनाजात चाहिये

या'नी ब हस्ब-ए-गर्दिश-ए-पैमानः-ए-सिफ़ात
आरिफ़ हमेशः मस्त-ए-मै-ए-ज़ात चाहिये

नश्व-ओ-नुमा है अस्ल से, ग़ालिब-फ़ुरू'अ को
ख़ामोशी ही से निक्ले है, जो बात चाहिये

१३३

बिसाते 'अिज्ज़ में था एक दिल, यक क़तरः ख़ूँ वह भी
सो रहता है, बअन्दाज़-ए-चकीदन सर निगूँ, वह भी

रहे उस शोख़ से आज़ुर्दः हम चन्दे, तकल्लुफ़ से
तकल्लुफ़ बरतरफ़, था एक अन्दाज़-ए-जुनूँ वह भी

ख़याल-ए-मर्ग, कब तस्कीं दिल-ए-आज़ुर्दः को बख़्शे
मिरे दाम-ए-तमन्ना में है इक सैद-ए-ज़ुबूँ, वह भी

न करता काश नालः, मुझको क्या मा'लूम था, हमदम
कि होगा बाइस-ए-अफ़ज़ाइश-ए-दर्द-ए-दुरूँ वह भी

न इतना बुर्रिश-ए-तेग़-ए-जफ़ा पर नाज़ फ़रमाओ
मिरे दरिया-ए-बेताबी में है इक मौज-ए-ख़ूँ वह भी

مے عشرت کی خواہش، ساقیِ گردوں سے کیا کیجے
لیے بیٹھا ہے، اک دو چار جام واژگوں وہ بھی

مرے دل میں ہے، غالب، شوقِ وصل و شکوۂ ہجراں
خدا وہ دن کرے، جو اُس سے میں یہ بھی کہوں، وہ بھی

۱۳٤

ہے بزمِ بتاں میں سخن آزردہ لبوں سے
تنگ آئے ہیں ہم، ایسے خوشامد طلبوں سے

ہے دورِ قدح، وجہِ پریشانیِ صہبا
یک بار لگا دو خُمِ مے، میرے لبوں سے

رندانِ درِ مے کدہ، گستاخ ہیں، زاہد
زنہار نہ ہونا طرف، ان بے ادبوں سے

بے دادِ وفا دیکھ، کہ جاتی رہی آخر
ہر چند مری جان کو تھا ربط لبوں سے

۱۳۵

تا، ہم کو شکایت کی بھی باقی نہ رہے جا
سن لیتے ہیں، گو ذکر ہمارا نہیں کرتے

मै-ए-'अिश्रत की ख़्वाहिश, साक़ि-ए-गर्दूं से क्या कीजे
लिये बैठा है, इक दो चार जाम-ए-वाशगूँ वह भी

मिरे दिल में है, ग़ालिब, शौक़-ए-वस्ल-ओ-शिकव:-ए-हिजराँ
ख़ुदा वह दिन करे, जो उससे मैं यह भी कहूँ, वह भी

१३४

है बज़्म-ए-बुताँ में सुख़न आज़ुर्द: लबों से
तँग आये हैं हम, ऐसे ख़ुशामद तलबों से

है दौर-ए-क़दह, वजूह-ए-परीशानि-ए-सह्बा
यक बार लगा दो ख़ुम-ए-मै मेरे लबों से

रिन्दान-ए-दर-ए-मैकद:, गुस्ताख़ हैं, ज़ाहिद
ज़िन्हार न होना तरफ़, इन बेअदबों से

बेदाद-ए-वफ़ा देख, कि जाती रही आख़िर
हरचन्द मिरी जान को था रब्त लबों से

१३५

ता, हम को शिकायत की भी बाक़ी न रहे जा
सुन लेते हैं, गो जिक्र हमारा नहीं करते

غالب، ترا احوال سنا دیں گے ہم اُن کو
وہ سن کے بلا لیں، یہ اجارا نہیں کرتے

۱۳۶

گھر میں تھا کیا، کہ ترا غم اُسے غارت کرتا
وہ جو رکھتے تھے، ہم اک حسرتِ تعمیر، سو ہے

۱۳۷

غمِ دنیا سے، گر پائی بھی فرصت، سر اُٹھانے کی
فلک کا دیکھنا، تقریب تیرے یاد آنے کی

کھلے گا کس طرح مضموں مرے مکتوب کا، یارب
قسم کھائی ہے اُس کافر نے، کاغذ کے جلانے کی

لپٹنا پرنیاں میں شعلۂ آتش کا آساں ہے
ولے مشکل ہے حکمت، دل میں سوزِ غم چھپانے کی

اُنہیں منظور اپنے زخمیوں کا دیکھ آنا تھا
اُٹھے تھے سیرِ گل کو، دیکھنا شوخی بہانے کی

ہماری سادگی تھی، التفاتِ ناز پر مرنا
ترا آنا نہ تھا، ظالم، مگر تمہید جانے کی

ग़ालिब, तिरा अहवाल सुना देंगे हम उनको
वह सुन के बुला लें, यह इजारा नहीं करते

१३६

घर में था क्या, कि तिरा ग़म उसे ग़ारत करता
वह जो रखते थे हम इक हसरत-ए-ता'मीर, सो है

१३७

ग़म-ए-दुनिया से, गर पाई भी फ़ुर्सत, सर उठाने की
फ़लक का देखना, तक़रीब तेरे याद आने की

खुलेगा किस तरह मज़मूँ मिरे मक्तूब का, यारब
क़सम खाई है उस काफ़िर ने, काग़ज़ के जलाने की

लिपटना परनियाँ में शो'लः-ए-आतश का आसाँ है
वले मुश्किल है हिक्मत, दिल में सोज़-ए-ग़म छुपाने की

उन्हें मंज़ूर अपने ज़ख़्मियों का देख आना था
उठे थे सैर-ए-गुल को, देखना शोख़ी बहाने की

हमारी सादगी थी, इल्तिफ़ात-ए-नाज़ पर मरना
तिरा आना न था, ज़ालिम, मगर तम्हीद जाने की

لکد کوبِ حوادث کا تحمل کر نہیں سکتی
مری طاقت، کہ ضامن تھی بتوں کے ناز اُٹھانے کی

کہوں کیا خوبیِ اوضاعِ ابنائے زماں، غالب
بدی کی اس نے، جس سے ہم نے کی تھی بارہا نیکی

۱۳۸

حاصل سے ہاتھ دھو بیٹھ، اے آرزو خرامی
دل جوشِ گریہ میں ہے ڈوبی ہوئی اسامی

اُس شمع کی طرح سے، جس کو کوئی بجھادے
میں بھی جلے ہوؤں میں، ہوں داغ ناتمامی

۱۳۹

کیا تنگ ہم ستم زدگاں کا جہان ہے
جس میں کہ ایک بیضۂ مور آسمان ہے

ہے کائنات کو حرکت تیرے ذوق سے
پرَتو سے آفتاب کے،ذرے میں جان ہے

حال آنکہ ہے یہ سیلیِ خارا سے لالہ رنگ
غافل کو میرے شیشے پہ مے کا گمان ہے

लक्द कोब-ए-हवादिस का तहम्मुल कर नहीं सकती
मिरी ताक़त, कि ज़ामिन थी बुतों के नाज़ उठाने की

कहूँ क्या ख़ूबि-ए-औज़ा'-ए-इबना-ए-ज़माँ, ग़ालिब
बदी की उसने, जिस से हमने की थी बारहा नेकी

१३८

हासिल से हाथ धो बैठ, अय आरज़ू ख़िरामी
दिल जोश-ए-गिरियः में है डूबी हुई असामी

उस शम्'अ की तरह से, जिसको कोई बुझा दे
मैं भी जले हुओं में, हूँ दाग़-ए-नातमामी

१३९

क्या तँग हम सितमज़दगाँ का जहान है
जिसमें कि एक बैज़:-ए-मोर आसमान है

है कायनात को हरकत तेरे ज़ौक़ से
परतौ से आफ़ताब के, ज़र्रे में जान है

हालआँकि है यह सेलि-ए-ख़ारा से लाल: रँग
ग़ाफ़िल को मेरे शीशे प मै का गुमान है

کی اُس نے گرم سینۂ اہلِ ہوس میں جا
آوے نہ کیوں پسند، کہ ٹھنڈا مکان ہے

کیا خوب، تم نے غیر کو بوسہ نہیں دیا
بس چُپ رہو، ہمارے بھی منہ میں زبان ہے

بیٹھا ہے جو کہ سایۂ دیوارِ یار میں
فرمانروائے کشورِ ہندوستان ہے

ہستی کا اعتبار بھی غم نے مٹا دیا
کس سے کہوں کہ داغِ جگر کا نشان ہے

ہے بارے اعتمادِ وفاداری اس قدر
غالب ہم اس میں خوش ہیں، کہ نامہربان ہے

۱٤۰

درد سے میرے ہے تجھ کو بے قراری ہائے ہائے
کیا ہوئی ظالم تری غفلت شعاری ہائے ہائے

تیرے دل میں گر، نہ تھا آشوبِ غم کا حوصلہ
تو نے پھر کیوں کی تھی میری غمگساری ہائے ہائے

کیوں مری غم خوارگی کا تجھ کو آیا تھا خیال
دشمنی اپنی تھی میری دوستداری ہائے ہائے

की उसने गर्म सीनः-ए-अहल-ए-हवस में जा
आवे न क्यों पसन्द, कि ठण्डा मकान है

क्या ख़ूब, तुमने ग़ैर को बोसः नहीं दिया
बस चुप रहो, हमारे भी मुँह में जबान है

बैठा है जो कि सायः-ए-दीवार-ए-यार में
फ़रमाँरवा -ए- किश्वर -ए- हिन्दोस्तान है

हस्ती का ए'तिबार भी ग़म ने मिटा दिया
किससे कहूँ कि दाग़-ए-जिगर का निशान है

है बारे ए'तिमाद-ए-वफ़ादारी इस क़दर
ग़ालिब, हम इसमें ख़ुश हैं, कि नामेह्रबान है

१४०

दर्द से मेरे है तुझको बेक़रारी हाय हाय
क्या हुई जालिम तिरी ग़फ़लत शि'आरी हाय हाय

तेरे दिल में गर, न था आशोब-ए-ग़म का हौसलः
तूने फिर क्यों की थी मेरी ग़मगुसारी हाय हाय

क्यों मिरी ग़मख़्वारगी का तुझको आया था ख़याल
दुश्मनी अपनी थी मेरी दोस्तदारी हाय हाय

عمر بھر کا تو نے پیمانِ وفا باندھا تو کیا
عمر کو بھی تو نہیں ہے پایداری ہائے ہائے

زہر لگتی ہے مجھے آب و ہوائے زندگی
یعنی تجھ سے تھی اسے ناسازگاری ہائے ہائے

گل فشانی ہائے نازِ جلوہ کو کیا ہو گیا
خاک پر ہوتی ہے تیری لالہ کاری ہائے ہائے

شرمِ رسوائی سے، جا چھپنا نقابِ خاک میں
ختم ہے اُلفت کی تجھ پر پردہ داری ہائے ہائے

خاک میں ناموسِ پیمانِ محبت مل گئی
اُٹھ گئی دنیا سے راہ و رسمِ یاری ہائے ہائے

ہاتھ ہی تیغ آزما کا کام سے جاتا رہا
دل پہ اک لگنے نہ پایا زخمِ کاری ہائے ہائے

کس طرح کاٹے کوئی، شب ہائے تارِ برشکال
ہے نظر خُو کردۂ اختر شماری، ہائے ہائے

گوش مہجورِ پیام و چشم محرومِ جمال
ایک دل، تِس پر یہ نا اُمید واری، ہائے ہائے

عشق نے پکڑا نہ تھا، غالب، ابھی وحشت کا رنگ
رہ گیا، تھا دل میں جو کچھ ذوقِ خواری، ہائے ہائے

'अ़म्र भर का तूने पैमान-ए-वफ़ा बाँधा तो क्या
'अ़म्र को भी तो नहीं है पायदारी हाय हाय

जह्‌र लगती है मुझे आब-ओ-हवा-ए-ज़िन्दगी
या'नी तुझसे थी उसे नासाज़गारी हाय हाय

गुलफ़िशानीहा-ए-नाज़-ए-जल्वः को क्या हो गया
ख़ाक पर होती है तेरी लालःकारी हाय हाय

शर्म-ए-रुस्वाई से, जा छुपना निक़ाब-ए-ख़ाक में
ख़त्म है उल्फ़त की तुझपर पर्दःदारी हाय हाय

ख़ाक में नामूस-ए-पैमान-ए-महब्बत मिल गई
उठ गई दुनिया से राह-ओ-रस्म-ए-यारी हाय हाय

हाथ ही तेग़ आज़्मा का काम से जाता रहा
दिल प इक लगने न पाया ज़ख़्म-ए-कारी हाय हाय

किस तरह काटे कोई, शबहा-ए-तार-ए-बर्शकाल
है नज़र ख़ू करदः-ए-अख़्तर शुमारी हाय हाय

गोश महजूर-ए-पयाम-ओ-चश्म महरूम-ए-जमाल
एक दिल, तिसपर यह नाउम्मीदवारी हाय हाय

'अिश्क़ ने पकड़ा न था, ग़ालिब, अभी वह्‌शत का रँग
रह गया, था दिल में जो कुछ ज़ौक़-ए-ख़्वारी हाय हाय

۱٤۱

سر گشتگی میں، عالمِ ہستی سے یاس ہے
تسکیں کو دے نوید، کہ مرنے کی آس ہے

لیتا نہیں مرے دلِ آوارہ کی خبر
اب تک وہ جانتا ہے، کہ میرے ہی پاس ہے

کیجے بیاں سُرورِ تبِ غم کہاں تلک
ہر مُو مرے بدن پہ زبانِ سپاس ہے

ہے وہ غرورِ حسن سے بیگانۂ وفا
ہر چند اُس کے پاس دلِ حق شناس ہے

پی، جس قدر ملے، شبِ مہتاب میں شراب
اِس بلغمی مزاج کو گرمی ہی راس ہے

ہر اک مکان کو ہے مکیں سے شرف، اسد
مجنوں جو مر گیا ہے، تو جنگل اُداس ہے

۱٤۲

گر خامشی سے فائدہ، اخفائے حال ہے
خوش ہوں، کہ میری بات سمجھنی محال ہے

१४१

सर गश्तगी में, 'आलम-ए-हस्ती से यास है
तस्कीं को दे नवेद, कि मरने की आस है

लेता नहीं मिरे दिल-ए-आवारः की ख़बर
अबतक वह जानता है, कि मेरे ही पास है

कीजे बयाँ सुरूर-ए-तब-ए-ग़म कहाँ तलक
हर मू मिरे बदन प ज़बान-ए-सिपास है

है वह ग़ुरूर-ए-हुस्न से बेगानः-ए-वफ़ा
हरचन्द उसके पास दिल-ए-हक़ शनास है

पी, जिस क़दर मिले, शब-ए-महताब में शराब
इस बलग़मी मिज़ाज को गर्मी ही रास है

हर इक मकान को है मकीं से शरफ़, असद
मजनूँ जो मर गया है, तो जँगल उदास है

१४२

गर ख़ामुशी से फ़ायदः, इख़फ़ा-ए-हाल है
ख़ुश हूँ, कि मेरी बात समझनी मुहाल है

کس کو سناؤں حسرتِ اظہار کا گلا
دل فردِ جمع و خرچ زباں ہائے لال ہے

کس پردے میں ہے آئینہ پرداز، اے خدا
رحمت، کہ عذر خواہ لبِ بے سوال ہے

ہے ہے، خدا نخواستہ، وہ اور دشمنی
اے شوق، منفعل، یہ تجھے کیا خیال ہے

مشکیں لباسِ کعبہ، علی کے قدم سے جان
نافِ زمین ہے، نہ کہ نافِ غزال ہے

وحشت پہ میری عرصۂ آفاق تنگ تھا
دریا زمین کو عرقِ انفعال ہے

ہستی کے مت فریب میں آجائیو، اسد
عالم تمام حلقۂ دامِ خیال ہے

۱٤۳

تم اپنے شکوے کی باتیں، نہ کھود کھود کے پوچھو
حذر کرو مرے دل سے، کہ اس میں آگ دبی ہے

دلا، یہ درد و الم بھی تو مغتنم ہے، کہ آخر
نہ گریۂ سحری ہے، نہ آہِ نیم شبی ہے

किसको सुनाऊँ हस्रत-ए-इज़्हार का गिला
दिल फ़र्द-ए-जम'-ओ-ख़र्च ज़बाँहा-ए-लाल है

किस पर्दे में है आइनःपरदाज़, अय ख़ुदा
रहमत, कि 'अुज़्रख़्वाह लब-ए-बेसवाल है

है है, ख़ुदा न ख़्वास्तः वह और दुश्मनी
अय शौक़, मुनफ़'अिल, यह तुझे क्या ख़याल है

मिश्कीं लिबास-ए-का'बः, 'अली के क़दम से जान
नाफ़-ए-ज़मीन है, न कि नाफ़-ए-ग़ज़ाल है

वहशत प मेरी 'अर्सः-ए-आफ़ाक़ तँग था
दरिया ज़मीन को 'अरक़-ए-इन्फ़ि'आल है

हस्ती के मत फ़रेब में आजाइयो, असद
'आलम तमाम हल्कः-ए-दाम-ए-ख़याल है

१४३

तुम अपने शिकवे की बातें, न खोद खोद के पूछो
हज़र करो मिरे दिल से, कि इसमें आग दबी है

दिला, यह दर्द-ओ-अलम भी तो मुग़तनम है, कि आख़िर
न गिरियः-ए-सहरी है, न आह-ए-नीमशबी है

۱٤٤

ایک جا حرفِ وفا لکھا تھا، سو بھی مٹ گیا
ظاہرا کاغذ ترے خط کا غلط بردار ہے

جی جلے ذوقِ فنا کی ناتمامی پر نہ کیوں
ہم نہیں جلتے، نفس ہر چند آتش بار ہے

آگ سے، پانی میں بجھتے وقت، اُٹھتی ہے صدا
ہر کوئی درماندگی میں نالے سے ناچار ہے

ہے وہی بدمستیِ ہر ذرہ کا خود عذر خواہ
جس کے جلوے سے زمیں تا آسماں سرشار ہے

مجھ سے مت کہہ، تو ہمیں کہتا تھا اپنی زندگی
زندگی سے بھی مرا جی اِن دنوں بیزار ہے

آنکھ کی تصویر سرنامے پہ کھینچی ہے، کہ تا
تجھ پہ کھل جاوے، کہ اِسکو حسرتِ دیدار ہے

۱٤٥

پینس میں گزرتے ہیں جو کوچے سے وہ میرے
کندھا بھی کہاروں کو بدلنے نہیں دیتے

१४४

एक जा हर्फ़-ए-वफ़ा लिक्खा था, सो भी मिट गया
जाहिरा काग़ज़ तिरे ख़त का ग़लत बरदार है

जी जले ज़ौक़-ए-फ़ना की नातमामी पर न क्यों
हम नहीं जलते, नफ़स हरचन्द आतशबार है

आग से, पानी में बुझते वक़्त, उठती है सदा
हर कोई दरमाँदगी में नाले से नाचार है

है वही बदमस्ति-ए-हर ज़र्रः का ख़ुद 'उज़्रख़्वाह
जिसके जल्वे से ज़मीं ता आसमाँ सरशार है

मुझसे मत कह, तू हमें कहता था अपनी ज़िन्दगी
ज़िन्दगी से भी मिरा जी इन दिनों बेज़ार है

आँख की तस्वीर सरनामे प खेंची है, कि ता
तुझ प खुल जावे, कि इसको हसरत-ए-दीदार है

१४५

पीनस में गुज़रते हैं जो कूचे से वह मेरे
कंधा भी कहारों को बदलने नहीं देते

۱٤٦

مری ہستی فضائے حیرت آبادِ تمنا ہے
جسے کہتے ہیں نالہ وہ اِسی عالم کا عنقا ہے

خزاں کیا، فصلِ گل کہتے ہیں کسکو، کوئی موسم ہو
وہی ہم ہیں، قفس ہے، اور ماتم بال و پر کا ہے

وفائے دلبراں ہے اتفاقی، ورنہ، اے ہمدم
اثر فریادِ دل ہائے حزیں کا، کس نے دیکھا ہے

نہ لائی شوخی اندیشہ تابِ رنجِ نومیدی
کفِ افسوس ملنا عہدِ تجدیدِ تمنا ہے

۱٤٧

رحم کر، ظالم، کہ کیا بودِ چراغِ کشتہ ہے
نبضِ بیمارِ وفا، دودِ چراغِ کشتہ ہے

دل لگی کی آرزو، بےچین رکھتی ہے ہمیں
ورنہ یاں بے رونقی، سودِ چراغِ کشتہ ہے

१४६

मिरी हस्ती फ़ज़ा-ए-हैरत आबाद-ए-तमन्ना है
जिसे कहते हैं नालः वह इसी 'आलम का 'अन्क़ा है

ख़िज़ाँ क्या, फ़स्ल-ए-गुल कहते हैं किस को, कोई मौसम हो
वही हम हैं, क़फ़स है, और मातम बाल-ओ-पर का है

वफ़ा-ए-दिलबराँ है इत्तिफ़ाक़ी, वर्नः, अय हमदम
असर फ़रियाद-ए-दिलहा-ए-हज़ीं का, किसने देखा है

न लाई शोख़ि-ए-अन्देशः ताब-ए-रँज-ए-नौमीदी
कफ़-ए-अफ़सोस मलना 'अह्द-ए-तजदीद-ए-तमन्ना है

१४७

रह्म कर ज़ालिम, कि क्या बूद-ए-चराग़-ए-कुश्तः है
नब्ज़-ए-बीमार-ए-वफ़ा, दूद-ए-चराग़-ए-कुश्तः है

दिल्लगी की आरज़ू, बेचैन रखती है हमें
वर्नः याँ बेरौनक़ी, सूद-ए-चराग़-ए-कुश्तः है

۱٤۸

چشمِ خوباں خامشی میں بھی نوا پرداز ہے
سرمہ، تو کہوے، کہ دودِ شعلۂ آواز ہے

پیکرِ عشاق، سازِ طالعِ ناساز ہے
نالہ گویا گردشِ سیارہ کی آواز ہے

دست گاہِ دیدۂ خونبارِ مجنوں دیکھنا
یک بیاباں جلوۂ گل، فرشِ پا انداز ہے

۱٤۹

عشق مجھ کو نہیں، وحشت ہی سہی
میری وحشت، تری شہرت ہی سہی

قطع کیجے نہ تعلق ہم سے
کچھ نہیں ہے تو عداوت ہی سہی

میرے ہونے میں، ہے کیا رسوائی
اے، وہ مجلس نہیں، خلوت ہی سہی

ہم بھی دشمن تو نہیں ہیں اپنے
غیر کو تجھ سے محبت ہی سہی

१४८

चश्म-ए-ख़ूबाँ ख़ामुशी में भी नवा पर्दाज़ है
सुर्मः, तू कहवे, कि दूद-ए-शो'लः-ए-आवाज़ है

पैकर-ए-'अुश्शाक़, साज़-ए-ताले'-ए-नासाज़ है
नालः गोया गर्दिश-ए-सय्यारः की आवाज़ है

दस्तगाह-ए-दीदः-ए-ख़ूँबार-ए-मजनूँ देखना
यक बयाबाँ जल्वः-ए-गुल फ़र्श-ए-पा अन्दाज़ है

१४९

'अिश्क़ मुझको नहीं, वहशत ही सही
मेरी वहशत, तिरी शोहरत ही सही

क़त'अ कीजे न त'अल्लुक़ हम से
कुछ नहीं है, तो 'अदावत ही सही

मेरे होने में है क्या रुस्वाई
अय, वह मज्लिस नहीं, ख़ल्वत ही सही

हम भी दुश्मन तो नहीं हैं अपने
ग़ैर को तुझ से महब्बत ही सही

اپنی ہستی ہی سے ہو، جو کچھ ہو
آگہی گر نہیں، غفلت ہی سہی

عمر ہر چند کہ ہے برق خرام
دل کے خوں کرنے کی فرصت ہی سہی

ہم کوئی ترکِ وفا کرتے ہیں
نہ سہی عشق، مصیبت ہی سہی

کچھ تو دے، اے فلکِ ناانصاف
آہ و فریاد کی رخصت ہی سہی

ہم بھی تسلیم کی خو ڈالیں گے
بے نیازی تری عادت ہی سہی

یار سے چھیڑ چلی جائے، اسد
گر نہیں وصل، تو حسرت ہی سہی

۱۵۰

ہے آرمیدگی میں نکوہش بجا مجھے
صبحِ وطن ہے خندۂ دنداں نما مجھے

ڈھونڈے ہے اُس مغنّیِ آتش نفس کو جی
جس کی صدا ہو جلوۂ برقِ فنا مجھے

अपनी हस्ती ही से हो, जो कुछ हो
आगही गर नहीं ग़फ़्लत ही सही

'अुम्र हरचन्द कि है बर्क़ ख़िराम
दिल के ख़ूँ करने की फ़ुर्सत ही सही

हम कोई तर्क-ए-वफ़ा करते हैं
न सही 'अिश्क़, मुसीबत ही सही

कुछ तो दे, अय फ़लक-ए-ना-इंसाफ़
आह-ओ-फ़र्याद की रुख़सत ही सही

हम भी तस्लीम की खू डालेंगे
बेनियाज़ी तिरी 'आदत ही सही

यार से छेड़ चली जाये, असद
गर नहीं वस्ल, तो हसरत ही सही

१५०

है आर्मीदगी में निकोहिश बजा मुझे
सुब्ह-ए-वतन है ख़न्द:-ए-दन्दाँनुमा मुझे

ढूण्डे है उस मुग़न्नि-ए-आतश नफ़स को जी
जिसकी सदा हो जल्व:-ए-बर्क़-ए-फ़ना मुझे

مستانہ طے کروں ہوں رہِ وادیِ خیال
تا بازگشت سے نہ رہے مدعا مجھے

کرتا ہے بسکہ باغ میں تو بے حجابیاں
آنے لگی ہے نکہتِ گل سے حیا مجھے

کھلتا کسی پہ کیوں، مرے دل کا معاملہ
شعروں کے انتخاب نے رُسوا کیا مجھے

۱۵۱

زندگی اپنی جب اس شکل سے گزری، غالب
ہم بھی کیا یاد کریں گے، کہ خدا رکھتے تھے

۱۵۲

اُس بزم میں، مجھے نہیں بنتی حیا کیے
بیٹھا رہا، اگرچہ اِشارے ہوا کیے

دل ہی تو ہے، سیاستِ درباں سے ڈر گیا
میں، اور جاؤں در سے ترے، بن صدا کیے

رکھتا پھروں ہوں، خرقہ و سجادہ رہنِ مے
مدت ہوئی ہے، دعوتِ آب و ہوا کیے

मस्तानः तय करूँ हूँ रह-ए-वादि-ए-ख़याल
ता बाज़गश्त से न रहे मुद्दआ मुझे

करता है बसकि बाग़ में तू बेहिजाबियाँ
आने लगी है नक्हत-ए-गुल से हया मुझे

खुलता किसी प क्यों, मिरे दिल का मुआमलः
शे'रों के इन्तिख़ाब ने रुस्वा किया मुझे

१५१

जिन्दगी अपनी जब इस शक्ल से गुज़री, ग़ालिब
हम भी क्या याद करेंगे, कि ख़ुदा रखते थे

१५२

उस बज़्म में, मुझे नहीं बनती हया किये
बैठा रहा, अगर्चेः इशारे हुआ किये

दिल ही तो है, सियासत-ए-दर्बां से डर गया
मैं, और जाऊँ दर से तिरे, बिन सदा किये

रखता फिरूँ हूँ, ख़िर्क़ः-ओ-सज्जादः रह्न-ए-मै
मुद्दत हुई है, दा'वत-ए-आब-ओ-हवा किये

بے صرفہ ہی گزرتی ہے، ہو گرچہ عمرِ خضر
حضرت بھی کل کہیں گے، کہ ہم کیا کیا کیے

مقدور ہو تو خاک سے پوچھوں کہ، اے لئیم
تو نے وہ گنج ہائے گرانمایہ کیا کیے

کس روز تہمتیں نہ تراشا کیے عدو
کس دن ہمارے سر پہ نہ آرے چلا کیے

صحبت میں غیر کی، نہ پڑی ہو کہیں یہ خُو
دینے لگا ہے بوسہ بغیر التجا کیے

ضد کی ہے اور بات، مگر خُو بُری نہیں
بھولے سے اُس نے سینکڑوں وعدے وفا کیے

غالب، تمہیں کہو، کہ ملے گا جواب کیا
مانا، کہ تم کہا کیے اور وہ سنا کیے

۱۵۳

رفتارِ عمر، قطعِ رہِ اضطراب ہے
اس سال کے حساب کو، برق آفتاب ہے

مینائے مے ہے سرو، نشاطِ بہار سے
بالِ تدرو جلوۂ موجِ شراب ہے

बेसर्फ़: ही गुज़रती है, हो गर्चे: 'अुम्र-ए-ख़िज़्र
हज़रत भी कल कहेंगे, कि हम क्या किया किये

मक़्दूर हो तो ख़ाक से पूछूँ कि, अय लईम
तू ने वह गँजहा-ए-गिराँमाय: क्या किये

किस रोज़ तुहमतें न तराशा किये 'अदू
किस दिन हमारे सर प न आरे चला किये

सोहबत में ग़ैर की, न पड़ी हो कहीं यह ख़ू
देने लगा है बोस: बिग़ैर इल्तिजा किये

ज़िद की है और बात, मगर ख़ू बुरी नहीं
भूले से उसने सैकड़ों वा'दे वफ़ा किये

ग़ालिब, तुम्हीं कहो, कि मिलेगा जवाब क्या
माना कि तुम कहा किये और वह सुना किये

१५३

रफ़्तार-ए-'अुम्र, क़त'-ए-रह-ए-इज़्तिराब है
इस साल के हिसाब को, बर्क़ आफ़ताब है

मीना-ए-मै है सर्व, नशात-ए-बहार से
बाल-ए-तदर्व जल्व:-ए-मौज-ए-शराब है

زخمی ہوا ہے پاشنہ پاے ثبات کا
نے بھاگنے کی گوں، نہ اقامت کی تاب ہے

جا دادِ بادہ نوشیِ رنداں ہے شش جہت
غافل گماں کرے ہے، کہ گیتی خراب ہے

نظارہ کیا حریف ہو، اُس برقِ حسن کا
جوشِ بہار، جلوہ کو جس کے نقاب ہے

میں نامراد دل کی تسلی کو کیا کروں
مانا، کہ تیرے رُخ سے نگہ کامیاب ہے

گزرا اسد، مسرتِ پیغامِ یار سے
قاصد پہ مجھ کو رشکِ سوال و جواب ہے

۱۵٤

دیکھنا قسمت، کہ آپ اپنے پہ رشک آجائے ہے
میں اُسے دیکھوں، بھلا کب مجھ سے دیکھا جائے ہے

ہاتھ دھو دل سے، یہی گرمی گر اندیشے میں ہے
آبگینہ، تندیِ صہبا سے، پگھلا جائے ہے

غیر کو، یارب، وہ کیوں کر منعِ گستاخی کرے
گر حیا بھی اس کو آتی ہے، تو شرما جائے ہے

ज़ख़्मी हुआ है पाश्नः पा-ए-सबात का
ने भागने की गौं, न इक़ामत की ताब है

जादाद-ए-बादः नोशि-ए-रिन्दाँ है शश जिहत
ग़ाफ़िल गुमाँ करे है, कि गेती ख़राब है

नज़्ज़ारः क्या हरीफ़ हो, उस बर्क़-ए-हुस्न का
जोश-ए-बहार, जल्वे को जिसके निक़ाब है

मैं नामुराद दिल की तसल्ली को क्या करूँ
माना, कि तेरे रुख़ से निगह कामयाब है

गुज़रा असद, मसर्रत-ए-पैग़ाम-ए-यार से
क़ासिद प मुझको रश्क-ए-सवाल-ओ-जवाब है

१५४

देखना क़िस्मत, कि आप अपने प रश्क आजाये है
मैं उसे देखूँ, भला कब मुझसे देखा जाये है

हाथ धो दिल से, यही गर्मी गर अन्देशे में है
आबगीनः, तुन्दि-ए-सहबा से पिघला जाये है

ग़ैर को, यारब, वह क्योंकर मन'-ए-गुस्ताख़ी करे
गर हया भी उसको आती है, तो शर्मा जाये है

شوق کو یہ لت، کہ ہر دم نالہ کھینچے جائیے
دل کی وہ حالت، کہ دم لینے سے گھبرا جائے ہے

دور چشمِ بد، تری بزمِ طرب سے، واہ، واہ
نغمہ ہو جاتا ہے، واں گر نالہ میرا جائے ہے

گرچہ ہے طرزِ تغافل، پردہ دارِ رازِ عشق
پر ہم ایسے کھوئے جاتے ہیں، کہ وہ پا جائے ہے

اُس کی بزم آرائیاں سن کر، دلِ رنجور، یاں
مثلِ نقشِ مدعائے غیر بیٹھا جائے ہے

ہو کے عاشق، وہ پری رُخ، اور نازک بن گیا
رنگ کھلتا جائے ہے، جتنا کہ اُڑتا جائے ہے

نقش کو اُس کے، مصور پر بھی کیا کیا ناز ہیں
کھینچتا ہے جس قدر، اُتنا ہی کھنچتا جائے ہے

سایہ میرا، مجھ سے مثلِ دُود بھاگے ہے، اسد
پاس مجھ آتش بجاں کے، کس سے ٹھہرا جائے ہے

۱۵۵

گرمِ فریاد رکھا، شکلِ نہالی نے مجھے
تب اماں ہجر میں دی، بردِ لیالی نے مجھے

शौक़ को यह लत, कि हरदम नालः खेंचे जाइये
दिल की वह हालत, कि दम लेने से घबरा जाये है

दूर चश्म-ए-बद, तिरी बज़्म-ए-तरब से, वाह, वाह
नग़्मः हो जाता है, वाँ गर नालः मेरा जाये है

गरचेः है तर्ज़-ए-तग़ाफ़ुल, पर्दःदार-ए-राज़-ए-'अिश्क़,
पर हम ऐसे खोये जाते हैं, कि वह पा जाये है

उसकी बज़्म आराइयाँ सुनकर, दिल-ए-रंजूर, याँ
मिस्ल-ए-नक़्श-ए-मुद्द'आ-ए-ग़ैर बैठा जाये है

होके 'आशिक़, वह परीरुख़, और नाज़ुक बन गया
रँग खुलता जाये है, जितना कि उड़ता जाये है

नक़्श को उसके, मुसव्विर पर भी क्या क्या नाज़ हैं
खेंचता है जिस क़दर, उतना ही खिंचता जाये है

सायः मेरा, मुझसे मिस्ल-ए-दूद भागे है, असद
पास मुझ आतश बजाँ के, किससे ठहरा जाये है

१५५

गर्म-ए-फ़रियद रखा, शक्ल-ए-निहाली ने मुझे
तब अमाँ हिज्र में दी, बर्द-ए-लियाली ने मुझे

نسیہ و نقدِ دوعالم کی حقیقت معلوم
لے لیا مجھ سے، مری ہمتِ عالی نے مجھے

کثرت آرائیِ وحدت، ہے پرستاریِ وہم
کر دیا کافر، اِن اصنامِ خیالی نے مجھے

ہوسِ گُل کا تصور میں بھی کھٹکا نہ رہا
عجب آرام دیا، بے پر و بالی نے مجھے

۱۵۶

کار گاہِ ہستی میں، لالہ داغ ساماں ہے
برقِ خرمنِ راحت، خونِ گرم دہقاں ہے

غنچہ تاشگفتن ہا، برگ عافیت معلوم
باوجودِ دلجمعی، خوابِ گُل پریشاں ہے

ہم سے رنجِ بے تابی کس طرح اُٹھایا جائے
داغ پشتِ دستِ عجز، شعلہ خس بہ دنداں ہے

۱۵۷

اُگ رہا ہے درو دیوار سے سبزہ، غالب
ہم بیاباں میں ہیں اور گھر میں بہار آئی ہے

निस्य:-ओ-नक़्द-ए-दो 'आलम की हक़ीक़त मा'लूम
ले लिया मुझ से, मिरी हिम्मत-ए-'आली ने मुझे

कस्रत आराइ-ए-वहदत, है परस्तारि-ए-वह्म
कर दिया काफ़िर, इन असनाम-ए-ख़याली ने मुझे

हवस-ए-गुल का तसव्वुर में भी खटका न रहा
'अजब आराम दिया, बेपर-ओ-बाली ने मुझे

१५६

कारगाह-ए-हस्ती में, लाल: दाग़ सामाँ है
बर्क़-ए-ख़रमन-ए-राहत, ख़ून-ए-गर्म-ए-देहक़ाँ है

ग़ुँच: ता शिगुफ़्तनहा, बर्ग-ए-'आफ़ियत मा'लूम
बावुजूद-ए-दिलजम'ई, ख़्वाब-ए-गुल परीशाँ है

हम से रँज-ए-बेताबी किस तरह उठाया जाय
दाग़ पुश्त-ए-दस्त-ए-'अिज्ज़, शो'ल: ख़स ब दन्दाँ है

१५७

उग रहा है दर-ओ-दीवार से सब्ज़:, ग़ालिब
हम बयाबाँ में हैं और घर में बहार आई है

سادگی پر اُس کی، مر جانے کی حسرت، دل میں ہے
بس نہیں چلتا، کہ پھر خنجر کفِ قاتل میں ہے

دیکھنا تقریر کی لذت، کہ جو اُس نے کہا
میں نے یہ جانا، کہ گویا یہ بھی میرے دل میں ہے

گرچہ ہے کس کس برائی سے، ولے با ایں ہمہ
ذکر میرا، مجھ سے بہتر ہے، کہ اُس محفل میں ہے

بس، ہجومِ نااُمیدی، خاک میں مل جائے گی
یہ جو اک لذت ہماری سعیِ بے حاصل میں ہے

رنجِ رہ کیوں کھینچیے، واماندگی کو عشق ہے
اُٹھ نہیں سکتا، ہمارا جو قدم منزل میں ہے

جلوہ زارِ آتشِ دوزخ، ہمارا دل سہی
فتنۂ شورِ قیامت، کس کی آب و گِل میں ہے

ہے دلِ شوریدۂ غالب، طلسمِ پیچ و تاب
رحم کر اپنی تمنا پر، کہ کس مشکل میں ہے

१५८

सादगी पर उसकी, मरजाने की हसरत, दिल में है
बस नहीं चलता, कि फिर ख़ंजर कफ़-ए-क़ातिल में है

देखना तक़रीर की लज़्ज़त, कि जो उसने कहा
मैंने यह जाना, कि गोया यह भी मेरे दिल में है

गरचे: है किस किस बुराई से, वले बा ई हमः
ज़िक्र मेरा, मुझसे बेहतर है, कि उस महफ़िल में है

बस, हुजूम-ए-ना उमीदी, ख़ाक में मिल जायगी
यह जो इक लज़्ज़त हमारी स'इ-ए-बे हासिल में है

रँज-ए-रह क्यों खेंचिये, वामान्दगी को 'इश्क़ है
उठ नहीं सकता, हमारा जो क़दम मंज़िल में है

जल्वः ज़ार-ए-आतश-ए-दोज़ख़, हमारा दिल सही
फ़ितनः-ए-शोर-ए-क़यामत, किसकी आब-ओ-गिल में है

है दिल-ए-शोरीदः-ए-ग़ालिब, तिलिस्म-ए-पेच-ओ-ताब
रहम कर अपनी तमन्ना पर, कि किस मुश्किल में है

دل سے تری نگاہ جگر تک اُتر گئی
دونوں کو اک ادا میں رضامند کر گئی

شق ہو گیا ہے سینہ، خوشا لذتِ فراغ
تکلیفِ پردہ داریِ زخمِ جگر گئی

وہ بادۂ شبانہ کی سرمستیاں کہاں
اُٹھیے بس اب، کہ لذتِ خوابِ سحر گئی

اُڑتی پھرے ہے خاک مری، کوئے یار میں
بارے اب اے ہوا، ہوسِ بال و پر گئی

دیکھو تو، دلفریبیِ اندازِ نقشِ پا
موجِ خرامِ یار بھی، کیا گل کتر گئی

ہر بوالہوس نے حسن پرستی شعار کی
اب آبروے شیوۂ اہلِ نظر گئی

نظارے نے بھی، کام کیا واں نقاب کا
مستی سے ہر نگہ ترے رُخ پر بکھر گئی

فردا و دی کا تفرقہ یک بار مٹ گیا
کل تم گئے، کہ ہم پہ قیامت گذر گئی

१५९

दिल से तिरी निगाह जिगर तक उतर गई
दोनों को इक अदा में रज़ामन्द कर गई

शक़ हो गया है सीनः, ख़ुशा लज़्ज़त-ए-फ़राग़
तक्लीफ़-ए-पर्दः दारि-ए-ज़ख़्म-ए-जिगर गई

वह बादः-ए-शबानः की सरमस्तियाँ कहाँ
उठिये बस अब, कि लज़्ज़त-ए-ख़्वाब-ए-सहर गई

उड़ती फिरे है ख़ाक मिरी, कू-ए-यार में
बारे अब अय हवा, हवस-ए-बाल-ओ-पर गई

देखो तो, दिलफ़रेबि-ए-अन्दाज़-ए-नक़्श-ए-पा
मौज-ए-ख़िराम-ए-यार भी, क्या गुल कतर गई

हर बुल्हवस ने हुस्न परस्ती शिʻआर की
अब आबरु-ए-शेवः-ए-अह्ल-ए-नज़र गई

नज़्ज़ारे ने भी, काम किया वाँ निक़ाब का
मस्ती से हर निगह तिरे रुख़ पर बिखर गई

फ़रदा-ओ-दी का तफ़रिक़ः यक बार मिट गया
कल तुम गये, कि हम प क़यामत गुज़र गई

مارا زمانے نے، اسد اللہ خاں، تمہیں
وہ ولولے کہاں، وہ جوانی کدھر گئی

۱٦۰

تسکیں کو ہم نہ روئیں جو ذوقِ نظر ملے
حورانِ خلد میں تری صورت مگر ملے

اپنی گلی میں، مجھ کو نہ کر دفن، بعدِ قتل
میرے پتے سے خلق کو کیوں تیرا گھر ملے

ساقی گری کی شرم کرو آج، ورنہ ہم
ہر شب پیا ہی کرتے ہیں مے، جس قدر ملے

تجھ سے تو کچھ کلام نہیں، لیکن اے ندیم
میرا سلام کہیو، اگر نامہ بر ملے

تم کو بھی ہم دکھائیں، کہ مجنوں نے کیا کیا
فرصت کشاکشِ غمِ پنہاں سے گر ملے

لازم نہیں، کہ خضر کی ہم پیروی کریں
مانا، کہ اک بزرگ ہمیں ہم سفر ملے

اے ساکنانِ کوچۂ دلدار، دیکھنا
تم کو کہیں جو غالبِ آشفتہ سر ملے

मारा ज़माने ने, असदुल्लाह ख़ाँ, तुम्हें
वह वलवले कहाँ, वह जवानी किधर गई

१६०

तस्कीं को हम न रोयें, जो ज़ौक़-ए-नज़र मिले
हूरान-ए-ख़ुल्द में तिरी सूरत मगर मिले

अपनी गली में, मुझको न कर दफ़्न, बा'द-ए-क़त्ल
मेरे पते से ख़ल्क़ को क्यों तेरा घर मिले

साक़ीगरी की शर्म करो आज, वर्नः हम
हर शब पिया ही करते हैं मै, जिस क़दर मिले

तुझसे तो कुछ कलाम नहीं, लेकिन अय नदीम
मेरा सलाम कहियो, अगर नामःबर मिले

तुमको भी हम दिखायें, कि मजनूँ ने क्या किया
फ़ुर्सत कशाकश-ए-ग़म-ए-पिन्हाँ से गर मिले

लाज़िम नहीं, कि ख़िज़्र की हम पैरवी करें
माना कि इक बुज़ुर्ग हमें हमसफ़र मिले

अय साकिनान-ए-कूचः-ए-दिल्दार, देखना
तुमको कहीं जो ग़ालिब-ए-आशुफ़्तः सर मिले

۱٦۱

کوئی دن، گر زندگانی اور ہے
اپنے جی میں ہم نے ٹھانی اور ہے

آتشِ دوزخ میں، یہ گرمی، کہاں
سوزِ غم ہاے نہانی اور ہے

بارہا دیکھی ہیں اُن کی رنجشیں
پر کچھ اب کے سر گرانی اور ہے

دے کے خط، منھ دیکھتا ہے نامہ بر
کچھ تو پیغامِ زبانی اور ہے

قاطعِ اعمار، ہیں اکثر نجوم
وہ بلاے آسمانی اور ہے

ہو چکیں، غالب بلائیں سب تمام
ایک مرگِ ناگہانی اور ہے

۱٦۲

کوئی اُمید بر نہیں آتی
کوئی صورت نظر نہیں آتی

१६१

कोई दिन, गर जिन्दगानी और है
अपने जी में हम ने ठानी और है

आतश-ए-दोज़ख़ में, यह गर्मी, कहाँ
सोज़-ए-ग़म्हा-ए-निहानी और है

बारहा देखी हैं उनकी रँजिशें
पर कुछ अबके सरगिरानी और है

दे के ख़त, मुँह देखता है नामःबर
कुछ तो पैग़ाम-ए-ज़बानी और है

क़ाते'-ए-आ'मार, हैं अक्सर नुजूम
वह बला-ए-आस्मानी और है

हो चुकीं, ग़ालिब, बलायें सब तमाम
एक मर्ग-ए-नागहानी और है

१६२

कोई उम्मीद बर नहीं आती
कोई सूरत नज़र नहीं आती

موت کا ایک دن مُعیّن ہے
نیند کیوں رات بھر نہیں آتی

آگے آتی تھی حالِ دل پہ ہنسی
اب کسی بات پر نہیں آتی

جانتا ہوں ثوابِ طاعت و زہد
پر طبیعت اِدھر نہیں آتی

ہے کچھ ایسی ہی بات، جو چپ ہوں
ورنہ کیا بات کر نہیں آتی

کیوں نہ چیخوں، کہ یاد کرتے ہیں
میری آواز گر نہیں آتی

داغِ دل گر نظر نہیں آتا
بُو بھی اے چارہ گر نہیں آتی

ہم وہاں ہیں، جہاں سے ہم کو بھی
کچھ ہماری خبر نہیں آتی

مرتے ہیں آرزو میں مرنے کی
موت آتی ہے، پر نہیں آتی

کعبے کس منھ سے جاؤ گے، غالب
شرم تم کو مگر نہیں آتی

•

मौत का एक दिन मु'अइयन है
नीन्द क्यों रात भर नहीं आती

आगे आती थी हाल-ए-दिल प हँसी
अब किसी बात पर नहीं आती

जानता हूँ सवाब-ए-ता'अत-ओ-ज़ोह्द
पर तबी'अत इधर नहीं आती

है कुछ ऐसी ही बात, जो चुप हूँ
वर्नः क्या बात कर नहीं आती

क्यों न चीख़ूँ, कि याद करते हैं
मेरी आवाज़ गर नहीं आती

दाग़-ए-दिल गर नज़र नहीं आता
बू भी अय चारःगर नहीं आती

हम वहाँ हैं, जहाँ से हम को भी
कुछ हमारी ख़बर नहीं आती

मरते हैं आरज़ू में मरने की
मौत आती है, पर नहीं आती

का'बे किस मुँह से जाओगे ग़ालिब
शर्म तुम को मगर नहीं आती

١٦٣

دلِ ناداں، تجھے ہوا کیا ہے
آخر اس درد کی دوا کیا ہے

ہم ہیں مشتاق اور وہ بیزار
یا الٰہی، یہ ماجرا کیا ہے

میں بھی منھ میں زبان رکھتا ہوں
کاش، پوچھو، کہ مدعا کیا ہے

قطعہ

جب کہ تجھ بن نہیں کوئی موجود
پھر یہ ہنگامہ اے خدا کیا ہے

یہ پری چہرہ لوگ کیسے ہیں
غمزہ و عشوہ و ادا کیا ہے

شکنِ زلفِ عنبریں کیوں ہے
نگہِ چشمِ سرمہ سا کیا ہے

سبزہ و گل کہاں سے آئے ہیں
ابر کیا چیز ہے، ہوا کیا ہے

१६३

दिल-ए-नादाँ, तुझे हुआ क्या है
आख़िर इस दर्द की दवा क्या है

हम हैं मुश्ताक़ और वह बेज़ार
या इलाही, यह माजरा क्या है

मैं भी मुँह में ज़बान रखता हूँ
काश, पूछो, कि मुद्'आ क्या है

क़त'अ:

जबकि तुझ बिन नहीं कोई मौजूद
फिर यह हँगामः अय ख़ुदा क्या है

यह परी चेह्र: लोग कैसे हैं
ग़मज़:-ओ-'अिश्व:-ओ-अदा क्या है

शिकन-ए-ज़ुल्फ़-ए-'अँबरीं क्यों है
निगह-ए-चश्म-ए-सुर्मः सा क्या है

सब्ज़:-ओ-गुल कहाँ से आये हैं
अब्र क्या चीज़ है, हवा क्या है

ہم کو اُن سے، وفا کی ہے اُمید
جو نہیں جانتے، وفا کیا ہے

ہاں بھلا کر، ترا بھلا ہو گا
اور درویش کی صدا کیا ہے

جان تم پر نثار کرتا ہوں
میں نہیں جانتا، دعا کیا ہے

میں نے مانا کہ کچھ نہیں غالب
مفت ہاتھ آئے، تو بُرا کیا ہے

۱٦٤

کہتے تو ہو تم سب، کہ بتِ غالیہ مُو آئے
ایک مرتبہ گھبرا کے کہو کوئی کہ، وُو آئے

ہوں کش مکشِ نزع میں، ہاں جذبِ محبت
کچھ کہہ نہ سکوں، پر وہ مرے پوچھنے کو آئے

ہے صاعقہ و شعلہ و سیماب کا عالم
آنا ہی سمجھ میں مری آتا نہیں، گو آئے

ظاہر ہے، کہ گھبرا کے نہ بھاگیں گے نکیرین
ہاں، منہ سے مگر بادۂ دو شینہ کی بو آئے

हमको उनसे, वफ़ा की है उम्मीद
जो नहीं जानते, वफ़ा क्या है

हाँ भला कर, तिरा भला होगा
और दर्वेश की सदा क्या है

जान तुम पर निसार करता हूँ
मैं नहीं जानता, दु'आ क्या है

मैं ने माना कि कुछ नहीं ग़ालिब
मुफ़्त हाथ आये, तो बुरा क्या है

१६४

कहते तो हो तुम सब, कि बुत-ए-ग़ालियः मू आये
इक मर्तबः घबरा के कहो कोई कि, वो आये

हूँ कशमकश-ए-नज़'अ में, हाँ जज़्ब-ए-महब्बत
कुछ कह न सकूँ, पर वह मिरे पूछने को आये

है सा'अिक़ः-ओ-शो'लः-ओ-सीमाब का 'आलम
आना ही समझ में मिरी आता नहीं, गो आये

ज़ाहिर है, कि घबरा के न भागेंगे नकीरैन
हाँ, मुँह से मगर बादः-ए-दोशीनः की बू आये

جلاد سے ڈرتے ہیں، نہ واعظ سے جھگڑتے
ہم سمجھے ہوئے ہیں اُسے، جس بھیس میں جو آئے

ہاں اہلِ طلب، کون سنے طعنۂ نایافت
دیکھا، کہ وہ ملتا نہیں، اپنے ہی کو کھو آئے

اپنا نہیں وہ شیوہ، کہ آرام سے بیٹھیں
اُس در پہ نہیں بار، تو کعبے ہی کو ہو آئے

کی ہم نفسوں نے اثرِ گریہ میں تقریر
اچھے رہے آپ اُس سے، مگر مجھ کو ڈبو آئے

اُس انجمنِ ناز کی کیا بات ہے، غالب
ہم بھی گئے واں، اور تری تقدیر کو رو آئے

۱٦٥

پھر کچھ اک دل کو بیقراری ہے
سینہ جویائے زخمِ کاری ہے

پھر جگر کھودنے لگا ناخن
آمدِ فصلِ لالہ کاری ہے

قبلۂ مقصدِ نگاہِ نیاز
پھر وہی پردۂ عماری ہے

जल्लाद से डरते हैं, न वा'ग्रिज़ से झगड़ते
हम समझे हुये हैं उसे, जिस भेस में जो आये

हाँ अहल-ए-तलब, कौन सुने ता'नः-ए-नायाफ़्त
देखा, कि वह मिलता नहीं, अपने ही को खो आये

अपना नहीं वह शेवः, कि आराम से बैठें
उस दर प नहीं बार, तो का'बे ही को हो आये

की हमनफ़्सों ने असर-ए-गिरियः में तक़रीर
अच्छे रहे आप उस से, मगर मुझको डुबो आये

उस अंजुमन-ए-नाज़ की क्या बात है, ग़ालिब
हम भी गये वाँ, और तिरी तक़दीर को रो आये

१६५

फिर कुछ इक दिल की बेक़रारी है
सीनः जोया-ए-ज़ख़्म-ए-कारी है

फिर जिगर खोदने लगा नाख़ुन
आमद-ए-फ़स्ल-ए-लालः कारी है

क़िबलः-ए-मक़्सद-ए-निगाह-ए-नियाज़
फिर वही पर्दः-ए-'अमारी है

چشم، دلالِ جنسِ رسوائی
دل خریدارِ ذوقِ خواری ہے

وہی صد رنگ نالہ فرسائی
وہی صد گونہ اشک باری ہے

دل ہوائے خرامِ ناز سے، پھر
محشرستانِ بے قراری ہے

جلوہ پھر عرضِ ناز کرتا ہے
روز بازارِ جاں سپاری ہے

پھر اُسی بے وفا پہ مرتے ہیں
پھر وہی زندگی ہماری ہے

قطعہ

پھر کھلا ہے درِ عدالتِ ناز
گرم بازارِ فوجداری ہے

ہو رہا ہے جہان میں اندھیر
زُلف کی پھر سرشتہ داری ہے

پھر دیا پارۂ جگر نے سوال
ایک فریاد و آہ و زاری ہے

चश्म दल्लाल-ए-जिन्स-ए-रुसवाई
दिल ख़रीदार-ए-ज़ौक़-ए-ख़्वारी है

वही सदरँग नालः फ़रसाई
वही सदगूनाः अश्क बारी है

दिल हवा-ए-ख़िराम-ए-नाज़ से, फिर
महशरिस्तान -ए- बेक़रारी है

जल्वः फिर अर्ज़-ए-नाज़ करता है
रोज़ बाज़ार-ए-जाँसुपारी है

फिर उसी बेवफ़ा प मरते हैं
फिर वही जिन्दगी हमारी है

क़त'अः

फिर खुला है दर-ए-'अदालत-ए-नाज़
गर्म बाज़ार-ए-फ़ौजदारी है

हो रहा है जहान में अँधेर
जुल्फ़ की फिर सरिश्तःदारी है

फिर दिया पारः-ए-जिगर ने सवाल
एक फ़रियाद-ओ-आह-ओ-ज़ारी है

پھر ہوئے ہیں گواہِ عشق طلب
اشک باری کا حکم جاری ہے

دل و مژگاں کا جو مقدمہ تھا
آج پھر اس کی روبکاری ہے

بے خودی بے سبب نہیں، غالب
کچھ تو ہے، جس کی پردہ داری ہے

۱٦٦

جنوں تہمت کشِ تسکیں نہ ہو، گر شادمانی کی
نمک پاشِ خراشِ دل ہے، لذت زندگانی کی

کشاکش ہائے ہستی سے کرے کیا سعیِ آزادی
ہوئی زنجیر، موجِ آب کو فرصت روانی کی

پس از مُردن بھی، دیوانہ زیارت گاہِ طفلاں ہے
شرارِ سنگ نے تربت پہ میری گل فشانی کی

۱٦٧

نکوہش ہے سزا، فریادیِ بیدادِ دلبر کی
مبادا خندۂ دنداں نما ہو صبح محشر کی

फिर हुये हैं गवाह-ए-'अिश्क़ तलब
अश्क बारी का हुक्म जारी है

दिल-ओ-मिशगाँ का जो मुक़द्दमः था
आज फिर उसकी रूबकारी है

बेख़ुदी बे सबब नहीं, ग़ालिब
कुछ तो है, जिस की पर्दःदारी है

१६६

जुनूँ तोह्मत कश-ए-तस्कीं न हो, गर शाद्मानी की
नमक पाश-ए-ख़राश-ए-दिल है, लज़्ज़त जिन्दगानी की

कशाकशहा-ए-हस्ती से करे क्या स'अि-ए-आज़ादी
हुई ज़ंजीर, मौज-ए-आब को फ़ुर्सत रवानी की

पस अज़ मुर्दन भी, दीवानः जियारत गाह-ए-तिफ़्लाँ है
शरार-ए-सँग ने तुर्बत प मेरी गुल फ़िशानी की

१६७

निकोहिश है सजा, फ़रियादि-ए-बेदाद-ए-दिलबर की
मबादा ख़न्दः-ए-दन्दाँ नुमा हो सुब्ह महशर की

رگِ لیلیٰ کو خاکِ دشتِ مجنوں، ریشگی بخشے
اگر بو دے بجائے دانہ دہقاں، نوک نشتر کی

پرِ پروانہ، شاید بادبانِ کشتیِ مے تھا
ہوئی مجلس کی گرمی سے روانی دورِ ساغر کی

کروں بے دادِ ذوقِ پَر فشانی عرض، کیا قدرت
کہ طاقت اُڑ گئی، اُڑنے سے پہلے، میرے شہپر کی

کہاں تک روؤں اسکے خیمے کے پیچھے قیامت ہے
مری قسمت میں، یارب، کیا نہ تھی دیوار پتھر کی

۱٦۸

بے اعتدالیوں سے، سبک سب میں ہم ہوئے
جتنے زیادہ ہو گئے، اُتنے ہی کم ہوئے

پنہاں تھا دام سخت، قریب آشیان کے
اُڑنے نہ پائے تھے، کہ گرفتار ہم ہوئے

ہستی ہماری، اپنی فنا پر دلیل ہے
یاں تک مٹے، کہ آپ ہم اپنی قسم ہوئے

سختی کشانِ عشق کی، پوچھے ہے کیا خبر
وہ لوگ رفتہ رفتہ سراپا الم ہوئے

रग-ए-लैला को ख़ाक-ए-दश्त-ए-मजनूँ, रेशगी बख़्शे
अगर बोदे बजाये दानः देहक़ाँ, नोक नश्तर की

पर-ए-परवानः, शायद बादबान-ए-कश्ति-ए-मै था
हुई मज्लिस की गर्मी से रवानी दौर-ए-साग़र की

करूँ बेदाद-ए-ज़ौक़-ए-परफ़िशानी 'अर्ज़, क्या क़ुदरत
कि ताक़त उड़ गई, उड़ने से पहले, मेरे शहपर की

कहाँ तक रोऊँ उसके ख़ेमे के पीछे, क़यामत है
मिरी क़िस्मत में, यारब, क्या न थी दीवार पत्थर की

१६८

बे ए'तिदालियों से, सुबुक सब में हम हुये
जितने ज़ियादः हो गये, उतने ही कम हुये

पिन्हाँ था दाम-ए-सख़्त, क़रीब आशियान के
उड़ने न पाये थे, कि गिरफ़्तार हम हुये

हस्ती हमारी, अपनी फ़ना पर दलील है
याँ तक मिटे, कि आप हम अपनी क़सम हुये

सख़्ती कशान-ए-'इश्क़ की, पूछे है क्या ख़बर
वह लोग रफ़्तः रफ़्तः सरापा अलम हुये

تیری وفا سے کیا ہو تلافی، کہ دہر میں
تیرے سوا بھی، ہم پہ بہت سے ستم ہوئے

لکھتے رہے، جنوں کی حکایاتِ خوں چکاں
ہر چند اس میں ہاتھ ہمارے قلم ہوئے

اللہ ری تیری تندیِ خُو، جس کے بیم سے
اجزاے نالہ دل میں مرے رزقِ ہم ہوئے

اہلِ ہوس کی فتح ہے، ترکِ نبردِ عشق
جو پانو اُٹھ گئے، وہی اُن کے علم ہوئے

نالے عدم میں چند ہمارے سپرد تھے
جو واں نہ کھِچ سکے، سو وہ یاں آکے دم ہوئے

چھوڑی، اسد، نہ ہم نے گدائی میں دل لگی
سائل ہوئے، تو عاشقِ اہلِ کرم ہوئے

۱۶۹

جو نہ نقدِ داغِ دل کی، کرے شعلہ پاسبانی
تو فسردگی نہاں ہے، بہ کمینِ بے زبانی

مجھے اُس سے کیا توقع، بہ زمانۂ جوانی
کبھی کودکی میں جس نے، نہ سنی مری کہانی

तेरी वफ़ा से क्या हो तलाफ़ी, कि दह्र में
तेरे सिवा भी, हम प बहुत से सितम हुये

लिखते रहे, जुनूँ की हिकायात-ए-ख़ूँ चकाँ
हरचन्द इस में हाथ हमारे क़लम हुये

अल्लाह री तेरी तुन्दि-ए-ख़ू, जिस के बीम से
अज्ज़ा-ए-नालः दिल में मिरे रिज़्क़-ए-हम हुये

अहल-ए-हवस की फ़त्ह है, तर्क-ए-नबर्द-ए-'अिश्क़
जो पाँव उठ गये, वही उनके 'अलम हुये

नाले 'अदम में चन्द हमारे सिपुर्द थे
जो वाँ न खिंच सके, सो वह याँ आके दम हुये

छोड़ी, असद न हमने गदाई में दिल्लगी
साइल हुये, तो 'आशिक़-ए-अहल-ए-करम हुये

१६९

जो न नक़्द-ए-दाग़-ए-दिल की, करे शो'लः पासबानी
तो फ़सुर्दगी निहाँ है, ब कमीन-ए-बेज़बानी

मुझे उस से क्या तवक़्क़ो'अ, ब ज़मानः-ए-जवानी
कभी कोदकी में जिसने, न सुनी मिरी कहानी

یوں ہی دُکھ کسی کو دینا نہیں خوب، ورنہ کہتا
کہ، مرے عدو کو، یارب، ملے میری زندگانی

۱۷۰

ظلمت کدے میں میرے، شبِ غم کا جوش ہے
اک شمع ہے دلیلِ سحر، سو خموش ہے

نے مژدۂ وصال، نہ نظارۂ جمال
مدت ہوئی، کہ آشتیِ چشم و گوش ہے

مے نے کیا ہے، حسنِ خود آرا کو، بے حجاب
اے شوق، یاں اجازتِ تسلیمِ ہوش ہے

گوہر کو عقدِ گردنِ خوباں میں دیکھنا
کیا اَوج پر ستارۂ گوہر فروش ہے

دیدار بادہ، حوصلہ ساقی، نگاہ مست
بزمِ خیال، مے کدۂ بے خروش ہے

قطعہ

اے تازہ واردانِ بساطِ ہوائے دل
زنہار، اگر تمہیں ہوسِ نائے و نوش ہے

यों ही दुख किसी को देना नहीं ख़ूब, वर्नः कहता
कि मिरे 'अदू को, यारब, मिले मेरी ज़िन्दगानी

१७०

ज़ुल्मत कदे में मेरे, शब-ए-ग़म का जोश है
इक शम्'अ है दलील-ए-सहर, सो ख़मोश है

ने मुश़्दः-ए-विसाल, न नज़्ज़ारः-ए-जमाल
मुद्दत हुई, कि आश्ति-ए-चश्म-ओ-गोश है

मै ने किया है, हुस्न-ए-ख़ुदआरा को, बेहिजाब
अय शौक़, याँ इजाज़त-ए-तस्लीम-ए-होश है

गौहर को 'अिक़्द-ए-गर्दन-ए-ख़ूबाँ में देखना
क्या औज पर सितारः-ए-गौहर फ़रोश है

दीदार बादः, हौसलः साक़ी, निगाह मस्त
बज़्म-ए-ख़याल, मैकदः-ए-बेख़रोश है

क़त'अः

अय ताज़ः वारिदान-ए-बिसात-ए-हवा-ए-दिल
ज़िन्हार, अगर तुम्हें हवस-ए-नाय-ओ-नोश है

دیکھو مجھے، جو دیدۂ عبرت نگاہ ہو
میری سنو، جو گوشِ نصیحت نیوش ہے

ساقی، بہ جلوہ، دشمنِ ایمان و آگہی
مطرب، بہ نغمہ، رہزنِ تمکین و ہوش ہے

یا شب کو دیکھتے تھے، کہ ہر گوشۂ بساط
دامانِ باغبان و کفِ گل فروش ہے

لطفِ خرامِ ساقی و ذوقِ صدائے چنگ
یہ جنتِ نگاہ، وہ فردوسِ گوش ہے

یا صبح دم جو دیکھیے آکر، تو بزم میں
نے وہ سرور و سوز، نہ جوش و خروش ہے

داغِ فراقِ صحبتِ شب کی جلی ہوئی
اک شمع رہ گئی ہے، سو وہ بھی خموش ہے

آتے ہیں غیب سے، یہ مضامیں خیال میں
غالب، صریرِ خامہ نوائے سروش ہے

۱۷۱

آ، کہ مری جان کو قرار نہیں ہے
طاقتِ بے دادِ انتظار نہیں ہے

देखो मुझे, जो दीदः-ए-'अिब्रत निगाह हो
मेरी सुनो, जो गोश-ए-नसीहत नियोश है

साक़ी, ब जलवः दुश्मन-ए-ईमान-ओ-आगही
मुतरिब, ब नग़्मः, रहज़न-ए-तम्कीन-ओ-होश है

या शब को देखते थे, कि हर गोशः-ए-बिसात
दामान-ए-बाग़बान-ओ-कफ़-ए-गुलफ़रोश है

लुत्फ़-ए-ख़िराम ए-साक़ि-ओ-ज़ौक़-ए-सदा-ए-चँग
यह जन्नत-ए-निगाह, वह फ़िर्दौस-ए-गोश है

या सुब्ह दम जो देखिये आकर, तो बज़्म में
ने वह सुरूर-ओ-सोज़, न जोश-ओ-ख़रोश है

दाग़-ए-फ़िराक़-ए-सोह्बत-ए-शब की जली हुई
इक शम्'अ रह गई है, सो वह भी ख़मोश है

आते हैं ग़ैब से, यह मज़ामीं ख़याल में
ग़ालिब, सरीर-ए-ख़ाम: नवा-ए-सरोश है

१७१

आ, कि मिरी जान को क़रार नहीं है
ताक़त-ए-बेदाद-ए-इन्तिज़ार नहीं है

دیتے ہیں جنت، حیاتِ دہر کے بدلے
نشہ بہ اندازۂ خمار نہیں ہے

گریہ نکالے ہے تری بزم سے، مجھ کو
ہائے، کہ رونے پہ اختیار نہیں ہے

ہم سے، عبث ہے، گمانِ رنجشِ خاطر
خاک میں عُشاق کی غبار نہیں ہے

دل سے اُٹھا لطفِ جلوہ ہائے معانی
غیرِ گل، آئینۂ بہار نہیں ہے

قتل کا میرے کیا ہے عہد تو بارے
وائے، اگر عہد استوار نہیں ہے

تو نے قسم میکشی کی کھائی ہے، غالب
تیری قسم کا کچھ اعتبار نہیں ہے

۱۷۲

ہجومِ غم سے، یاں تک سرنگونی مجھ کو حاصل ہے
کہ تارِ دامن و تارِ نظر میں فرق مشکل ہے

رفوئے زخم سے مطلب ہے لذت زخمِ سوزن کی
سمجھیو مت، کہ پاسِ درد سے، دیوانہ غافل ہے

देते हैं जन्नत, हयात-ए-दह्र के बदले
नश्शः ब अन्दाज़ः-ए-ख़ुमार नहीं है

गिरियः निकाले है तिरी बज़्म से, मुझको
हाय, कि रोने प इख़्तियार नहीं है

हम से, 'अबस है, गुमान-ए-रँजिश-ए-ख़ातिर
ख़ाक में 'उश्शाक़ की ग़ुबार नहीं है

दिल से उठा लुत्फ़-ए-जल्वःहा-ए-म'आनी
ग़ैर-ए-गुल, आईनः-ए-बहार नहीं है

क़त्ल का मेरे किया है 'अह्द तो बारे
वाय, अगर 'अह्द उस्तुवार नहीं है

तू ने क़सम मैकशी की खाई है, ग़ालिब
तेरी क़सम का कुछ ए'तिबार नहीं है

१७२

हुजूम-ए-ग़म से, याँ तक सरनिगूनी मुझको हासिल है
कि तार-ए-दामन-ओ-तार-ए-नज़र में फ़र्क़ मुश्किल है

रफ़ू-ए-ज़ख़्म से मतलब है लज़्ज़त ज़ख़्म-ए-सोज़न की
समझियो मत, कि पास-ए-दर्द से, दीवानः ग़ाफ़िल है

وہ گل جس گلستاں میں جلوہ فرمائی کرے، غالب
چٹکنا غنچۂ گل کا، صدائے خندۂ دل ہے

۱۷۳

پا بہ دامن ہو رہا ہوں، بس کہ میں صحرا نورد
خارِ پا ہیں جوہرِ آئینۂ زانو مجھے
دیکھنا حالت مرے دل کی، ہم آغوشی کے وقت
ہے نگاہِ آشنا، تیرا سرِ ہر مُو، مجھے
ہوں سراپا سازِ آہنگِ شکایت، کچھ نہ پوچھ
ہے یہی بہتر، کہ لوگوں میں نہ چھیڑے تُو مجھے

۱۷٤

جس بزم میں، تُو ناز سے، گفتار میں آوے
جاں، کالبدِ صورتِ دیوار میں آوے
سایے کی طرح ساتھ پھریں سرو و صنوبر
تُو اس قدِ دلکش سے، جو گلزار میں آوے
تب نازِ گراں مایگیِ اشک بجا ہے
جب لختِ جگر دیدۂ خونبار میں آوے

वह गुल जिस गुलसिताँ में जल्वः फ़रमाई करे, ग़ालिब
चिटकना ग़ुँचः-ए-गुल का, सदा-ए-ख़न्दः-ए-दिल है

१७३

पा ब दामन हो रहा हूँ, बसकि मैं सहरा नवर्द
ख़ार-ए-पा हैं, जौहर-ए-आईनः-ए-ज़ानू मुझे

देखना हालत मिरे दिल की, हमआग़ोशी के वक़्त
है निगाह-ए-आश्ना, तेरा सर-ए-हर मू, मुझे

हूँ सरापा साज़-ए-आहँग-ए-शिकायत, कुछ न पूछ
है यही बेहतर, कि लोगों में न छेड़े तू मुझे

१७४

जिस बज़्म में, तू नाज़ से, गुफ़्तार में आवे
जाँ, काल्बुद-ए-सूरत-ए-दीवार में आवे

साये की तरह साथ फिरें सर्व-ओ-सनोबर
तू इस क़द-ए-दिलकश से, जो गुलज़ार में आवे

तब नाज़-ए-गिराँ मायगि-ए-अश्क बजा है
जब लख़्त-ए-जिगर दीदः-ए-ख़ूँबार में आवे

دے مجھ کو شکایت کی اجازت، کہ ستم گر
کچھ تجھ کو مزا بھی مرے آزار میں آوے

اُس چشمِ فسوں‌گر کا، اگر پائے اشارا
طوطی کی طرح آئینہ گفتار میں آوے

کانٹوں کی زباں سوکھ گئی پیاس سے، یارب
اک آبلہ پا وادیِ پُرخار میں آوے

مر جاؤں نہ کیوں رشک سے، جب وہ تنِ نازک
آغوشِ خمِ حلقۂ زُنار میں آوے

غارت گرِ ناموس نہ ہو، گر ہوسِ زر
کیوں شاہدِ گل، باغ سے بازار میں آوے

تب چاکِ گریباں کا مزا ہے، دل ناداں
جب اک نفَس اُلجھا ہوا ہر تار میں آوے

آتش کدہ ہے سینہ مرا، رازِ نہاں سے
اے وائے، اگر معرضِ اظہار میں آوے

گنجینۂ معنی کا طلسم اُس کو سمجھیے
جو لفظ کہ غالب، مرے اشعار میں آوے

दे मुझको शिकायत की इजाज़त, कि सितमगर
कुछ तुझको मज़ा भी मिरे आज़ार में आवे

उस चश्म-ए-फ़ुसूँगर का, अगर पाये इशारा
तूती की तरह आइनः गुफ़्तार में आवे

काँटों की ज़बाँ सूख गई प्यास से, यारब
इक आब्लः पा वादि-ए-पुरख़ार में आवे

मरजाऊँ न क्यों रश्क से, जब वह तन-ए-नाज़ुक
आग़ोश-ए-ख़म-ए-हल्क़ः-ए-ज़ुन्नार में आवे

ग़ारतगर-ए-नामूस न हो, गर हवस-ए-ज़र
क्यों शाहिद-ए-गुल, बाग़ से बाज़ार में आवे

तब चाक-ए-गरीबाँ का मज़ा है, दिल-ए-नादाँ
जब इक नफ़स उलझा हुआ, हर तार में आवे

आतशकदः है सीनः मिरा, राज़-ए-निहाँ से
अय वाय, अगर मा'रिज़-ए-इज़्हार में आवे

गँजीनः-ए-मा'नी का तिलिस्म उसको समझिये
जो लफ़्ज़ कि ग़ालिब, मिरे अश'आर में आवे

۱۷۵

حسنِ مہ، گرچہ بہ ہنگامِ کمال، اچھا ہے
اُس سے میرا مہِ خورشید جمال اچھا ہے

بوسہ دیتے نہیں، اور دل پہ ہے ہر لحظہ نگاہ
جی میں کہتے ہیں، کہ مفت آئے تو مال اچھا ہے

اور بازار سے لے آئے، اگر ٹوٹ گیا
ساغرِ جم سے مرا جامِ سفال اچھا ہے

بے طلب دیں، تو مزا اُس میں سوا ملتا ہے
وہ گدا، جس کو نہ ہو خوے سوال، اچھا ہے

اُن کے دیکھے سے، جو آ جاتی ہے منھ پر رونق
وہ سمجھتے ہیں، کہ بیمار کا حال اچھا ہے

دیکھیے، پاتے ہیں عشاق، بتوں سے کیا فیض
اک برہمن نے کہا ہے، کہ یہ سال اچھا ہے

ہم سخن تیشے نے فرہاد کو، شیریں سے کیا
جس طرح کا کہ کسی میں ہو کمال، اچھا ہے

قطرہ دریا میں جو مل جائے، تو دریا ہو جائے
کام اچھا ہے وہ، جس کا کہ مآل اچھا ہے

१७५

हुस्न-ए- मह, गरचे: ब हँगाम-ए-कमाल, अच्छा है
उससे मेरा मह-ए-ख़ुर्शीद जमाल अच्छा है

बोसः देते नहीं, और दिल प है हर लह्ज़ः निगाह
जी में कहते हैं, कि मुफ़्त आये, तो माल अच्छा है

और बाज़ार से ले आये, अगर टूट गया
साग़र-ए-जम से मिरा जाम-ए-सिफ़ाल अच्छा है

बेतलब दें तो मज़ा उसमें सिवा मिलता है
वह गदा, जिसको न हो ख़ू-ए-सवाल, अच्छा है

उनके देखे से, जो आजाती है मुँह पर रौनक़
वह समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है

देखिये, पाते हैं 'उश्शाक़, बुतों से क्या फ़ैज़
इक ब्रह्मन ने कहा है, कि यह साल अच्छा है

हम सुख़न तेशे ने फ़रहाद को, शीरीं से किया
जिस तरह का कि किसी में हो कमाल, अच्छा है

क़तरः दरिया में जो मिल जाय, तो दरिया हो जाय
काम अच्छा है वह, जिसका कि मआल अच्छा है

خضر سلطاں کو رکھے، خالقِ اکبر سرسبز
شاہ کے باغ میں، یہ تازہ نہال اچھا ہے

ہم کو معلوم ہے، جنت کی حقیقت، لیکن
دل کے خوش رکھنے کو، غالب، یہ خیال اچھا ہے

۱۷۶

نہ ہوئی گر مرے مرنے سے تسلی، نہ سہی
امتحاں اور بھی باقی ہو، تو یہ بھی نہ سہی

خار خارِ المِ حسرتِ دیدار تو ہے
شوق، گلچینِ گلستانِ تسلی نہ سہی

مے پرستاں، خمِ مے منہ سے لگائے ہی بنے
ایک دن گر نہ ہوا بزم میں ساقی، نہ سہی

نفسِ قیس، کہ ہے چشم و چراغِ صحرا
گر نہیں شمعِ سیہ خانۂ لیلی، نہ سہی

ایک ہنگامے پہ موقوف ہے گھر کی رونق
نوحۂ غم ہی سہی، نغمۂ شادی نہ سہی

نہ ستایش کی تمنا، نہ صلے کی پروا
گر نہیں ہیں مرے اشعار میں معنی، نہ سہی

ख़िज़्र सुलताँ को रखे, ख़ालिक़-ए-अकबर सरसब्ज़
शाह के बाग़ में, यह ताज़ः निहाल अच्छा है

हम को मा'लूम है, जन्नत की हक़ीक़त, लेकिन
दिल के ख़ुश रखने को, ग़ालिब, यह ख़याल अच्छा है

१७६

न हुई गर मिरे मरने से तसल्ली, न सही
इम्तिहाँ और भी बाक़ी हो, तो यह भी न सही

ख़ार ख़ार-ए-अलम-ए-हस्रत-ए-दीदार तो है
शौक़, गुलचीन-ए-गुलिस्तान-ए-तसल्ली न सही

मै परस्ताँ, ख़ुम-ए-मै मुँह से लगाये ही बने
एक दिन गर न हुआ बज़्म में साक़ी, न सही

नफ़स-ए-क़ैस, कि है चश्म-ओ-चराग़-ए-सह्‌रा
गर नहीं शम'-ए-सियहख़ानः-ए-लैला, न सही

एक हँगामे प मौक़ूफ़, है घर की रौनक़
नौहः-ए-ग़म ही सही, नग़्मः-ए-शादी न सही

न सताइश की तमन्ना, न सिले की परवा
गर नहीं हैं मिरे अश'आर में मा'नी न सही

عشرتِ صحبتِ خوباں ہی غنیمت سمجھو
نہ ہوئی، غالب، اگر عمرِ طبیعی، نہ سہی

۱۷۷

عجب نشاط سے، جلاد کے، چلے ہیں ہم، آگے
کہ اپنے سایے سے سر، پانو سے ہے دو قدم آگے

قضا نے تھا مجھے چاہا، خرابِ بادۂ اُلفت
فقط، خراب، لکھا، بس نہ چل سکا قلم آگے

غمِ زمانہ نے جھاڑی، نشاطِ عشق کی مستی
وگرنہ ہم بھی اُٹھاتے تھے لذتِ الم، آگے

خدا کے واسطے، داد اس جنونِ شوق کی دینا
کہ اُس کے در پہ پہنچتے ہیں نامہ بر سے ہم، آگے

یہ عمر بھر جو پریشانیاں اُٹھائی ہیں، ہم نے
تمہارے آئیو، اے طرہ ہائے خم بہ خم، آگے

دل و جگر میں پر افشاں، جو ایک موجۂ خوں ہے
ہم اپنے زعم میں سمجھے ہوئے تھے اِسکو، دم آگے

قسم جنازے پہ آنے کی میرے کھاتے ہیں، غالب
ہمیشہ کھاتے تھے جو، میری جان کی قسم، آگے

'अिश्रत-ए-सोह्बत-ए-ख़ूबाँ ही ग़नीमत समझो
न हुई, ग़ालिब, अगर 'अुम्र-ए-तबी'अी, न सही

१७७

'अजब नशात से, जल्लाद के, चले हैं हम, आगे
कि अपने साये से सर, पाँव से है दो क़दम आगे

क़ज़ा ने था मुझे चाहा, ख़राब-ए-बाद:-ए-उल्फ़त
फ़क़त ख़राब लिखा, बस न चल सका क़लम आगे

ग़म-ए-ज़मान: ने झाड़ी, नशात-ए-'अिश्क़ की मस्ती
वगरन: हम भी उठाते थे लज़्ज़त-ए-अलम, आगे

ख़ुदा के वास्ते, दाद इस जुनून-ए-शौक़ की देना
कि उसके दर प पहुँचते हैं नाम:बर से हम, आगे

यह 'अुम्र भर जो परीशानियाँ उठाई हैं, हम ने
तुम्हारे आइयो, अय तुर्र:हा-ए-ख़म ब ख़म, आगे

दिल-ओ-जिगर में परअफ़शाँ, जो एक मौज:-ए-ख़ूँ है
हम अपने ज़ा'म में समझे हुये थे इसको, दम आगे

क़सम जनाज़े प आने की मेरे खाते हैं, ग़ालिब
हमेश: खाते थे जो, मेरी जान की क़सम, आगे

۱۷۸

شکوے کے نام سے، بے مہر خفا ہوتا ہے
یہ بھی مت کہہ، کہ جو کہیے، تو گلا ہوتا ہے

پُر ہوں میں شکوے سے یوں، راگ سے جیسے باجا
اک ذرا چھیڑیے، پھر دیکھیے، کیا ہوتا ہے

گو سمجھتا نہیں، پر حسنِ تلافی دیکھو
شکوۂ جور سے، سرگرمِ جفا ہوتا ہے

عشق کی راہ میں، ہے چرخِ مکوکب کی وہ چال
سست رو جیسے کوئی آبلہ پا ہوتا ہے

کیوں نہ ٹھہریں ہدفِ ناوکِ بیداد، کہ ہم
آپ اُٹھا لاتے ہیں، گر تیر خطا ہوتا ہے

خوب تھا، پہلے سے ہوتے جو ہم اپنے بدخواہ
کہ بھلا چاہتے ہیں اور بُرا ہوتا ہے

نالہ جاتا تھا، پرے عرش سے میرا، اور اب
لب تک آتا ہے، جو ایسا ہی رسا ہوتا ہے

१७८

शिक्वे के नाम से, बेमेह्र ख़फ़ा होता है
यह भी मत कह, कि जो कहिये, तो गिला होता है

पुर हूँ मैं शिक्वे से यों, राग से जैसे बाजा
इक ज़रा छेड़िये, फिर देखिये, क्या होता है

गो समझता नहीं, पर हुस्न-ए-तलाफ़ी देखो
शिक्वः-ए-जौर से, सरगर्म-ए-जफ़ा होता है

'अिश्क़ की राह में, है चर्ख़-ए-मकौकब की वह चाल
सुस्त रौ जैसे कोई आबलः पा होता है

क्यों न ठहरें हदफ़-ए-नावक-ए-बेदाद, कि हम
आप उठा लाते हैं, गर तीर ख़ता होता है

ख़ूब था, पहले से होते जो हम अपने बदख़्वाह
कि भला चाहते हैं और बुरा होता है

नालः जाता था, परे 'अर्श से मेरा, और अब
लब तक आता है जो ऐसा ही रसा होता है

قطعہ

خامہ میرا، کہ وہ ہے باربَدِ بزمِ سخن
شاہ کی مدح میں، یوں نغمہ سرا ہوتا ہے

اے شہنشاہِ کواکب سپہ و مہر علم
تیرے اکرام کا حق، کس سے ادا ہوتا ہے

سات اِقلیم کا حاصل جو فراہم کیجے
تو وہ لشکر کا ترے نعل بہا ہوتا ہے

ہر مہینے میں، جو یہ بدر سے ہوتا ہے ہلال
آستاں پر ترے مہ ناصیہ سا ہوتا ہے

میں جو گستاخ ہوں آئینِ غزل خوانی میں
یہ بھی تیرا ہی کرم ذوق فزا ہوتا ہے

رکھیو، غالب، مجھے اس تلخنوائی میں معاف
آج کچھ درد میرے دل میں سوا ہوتا ہے

۱۷۹

ہر ایک بات پہ کہتے ہو تم، کہ تو کیا ہے
تمہیں کہو کہ یہ اندازِ گفتگو کیا ہے

क़त'अ:

ख़ामः मेरा, कि वह है बारबद-ए-बज़्म-ए-सुख़न
शाह की मद्ह में, यों नग़्मः सरा होता है

अय शहनशाह-ए-क्वाकिब सिपह-ओ-मेह्र 'अलम
तेरे इक्राम का हक़, किस से अदा होता है

सात इक़्लीम का हासिल जो फ़राहम कीजे
तो वह लश्कर का तिरे ना'ल बहा होता है

हर महीने में, जो यह बद्र से होता है हिलाल
आस्ताँ पर तिरे मह नासियः सा होता है

मैं जो गुस्ताख़ हूँ आईन-ए-ग़ज़ल ख़्वानी में
यह भी तेरा ही करम ज़ौक़ फ़िज़ा होता है

रखियो, ग़ालिब, मुझे इस तल्ख़नवाई में मु'आफ़
आज कुछ दर्द मेरे दिल में सिवा होता है

१७९

हर एक बात प कहते हो तुम, कि तू क्या है
तुम्हीं कहो कि यह अन्दाज़-ए-गुफ़्तुगू क्या है

نہ شعلے میں یہ کرشمہ، نہ برق میں یہ ادا
کوئی بتاؤ، کہ وہ شوخِ تُند خُو کیا ہے

یہ رشک ہے، کہ وہ ہوتا ہے ہم سخن تم سے
وگرنہ خوفِ بدآموزیِ عدو کیا ہے

چپک رہا ہے بدن پر، لہو سے، پیراہن
ہماری جیب کو اب حاجتِ رفو کیا ہے

جلا ہے جسم جہاں، دل بھی جل گیا ہوگا
کریدتے ہو جو اب راکھ، جستجو کیا ہے

رگوں میں دوڑتے پھرنے کے ہم نہیں قائل
جب آنکھ سے ہی نہ ٹپکا، تو پھر لہو کیا ہے

وہ چیز، جس کے لئے ہم کو ہو، بہشت عزیز
سوائے بادۂ گلفامِ مشک بو، کیا ہے

پیوں شراب، اگر خُم بھی دیکھ لوں دوچار
یہ شیشہ و قدح و کوزہ و سبو کیا ہے

رہی نہ طاقتِ گفتار، اور اگر ہو بھی
تو کس اُمید پہ کہیے کہ آرزو کیا ہے

ہوا ہے شہ کا مصاحب، پھرے ہے اِتراتا
وگرنہ شہر میں غالب کی آبرو کیا ہے

न शो'ले में यह करिश्मः न बर्क़ में यह अदा
कोई बताओ, कि वह शोख़-ए-तुन्द ख़ू क्या है

यह रश्क है, कि वह होता है हमसुख़न तुमसे
वगरनः ख़ौफ़-ए-बद आमोज़ि-ए-'अदू क्या है

चिपक रहा है बदन पर, लहू से, पैराहन
हमारी जैब को अब हाजत-ए-रफ़ू क्या है

जला है जिस्म जहाँ, दिल भी जल गया होगा
कुरेदते हो जो अब राख, जुस्तुजू क्या है

रगों में दौड़ते फिरने के, हम नहीं क़ाइल
जब आँख ही से न टपका, तो फिर लहू क्या है

वह चीज़, जिसके लिये हमको हो, बिहिश्त 'अज़ीज़
सिवाये बादः-ए-गुलफ़ाम-ए-मुश्क बू क्या है

पियूँ शराब, अगर ख़ुम भी देख लूँ दो चार
यह शीशः-ओ-क़दह-ओ-कूज़ः-ओ-सुबू क्या है

रही न ताक़त-ए-गुफ़्तार, और अगर हो भी
तो किस उमीद प कहिये कि आरज़ू क्या है

हुआ है शह का मुसाहिब, फिरे है इतराता
वगरनः शहर में ग़ालिब की आबरू क्या है

۱۸۰

میں اُنہیں چھیڑوں، اور کچھ نہ کہیں
چل نکلتے، جو مے پیے ہوتے

قہر ہو، یا بلا ہو، جو کچھ ہو
کاش کے، تم مرے لیے ہوتے

میری قسمت میں غم گر اتنا تھا
دل بھی، یارب، کئی دیے ہوتے

آ ہی جاتا وہ راہ پر، غالب
کوئی دن اور بھی جیے ہوتے

۱۸۱

غیر لیں محفل میں، بوسے جام کے
ہم رہیں یوں تشنہ لب، پیغام کے

خستگی کا تم سے کیا شکوہ، کہ یہ
ہتھکنڈے ہیں چرخِ نیلی فام کے

خط لکھیں گے، گرچہ مطلب کچھ نہ ہو
ہم تو عاشق ہیں، تمہارے نام کے

१८०

मैं उन्हें छेड़ूँ, और कुछ न कहें
चल निकलते, जो मै पिये होते

क़ेहर हो, या बला हो, जो कुछ हो
काशके, तुम मिरे लिये होते

मेरी क़िस्मत में ग़म गर इतना था
दिल भी, यारब, कई दिये होते

आ ही जाता वह राह पर, ग़ालिब
कोई दिन और भी जिये होते

१८१

ग़ैर लें महफ़िल में, बोसे जाम के
हम रहें यों तश्नः लब, पैग़ाम के

ख़स्तगी का तुमसे क्या शिकवः कि यह
हथकण्डे हैं चर्ख़-ए-नीली फ़ाम के

ख़त लिखेंगे, गरचेः मतलब कुछ न हो
हम तो 'आशिक़ हैं, तुम्हारे नाम के

رات پی زمزم پہ مے اور صبح دم
دھوئے دھبے جامۂ اِحرام کے

دل کو آنکھوں نے پھنسایا، کیا مگر
یہ بھی حلقے ہیں تمہارے دام کے

شاہ کے ہے غسلِ صحت کی خبر
دیکھیے، کب دن پھریں حمام کے

عشق نے، غالب، نکما کر دیا
ورنہ ہم بھی آدمی تھے کام کے

۱۸۲

پھر اس انداز سے بہار آئی
کہ ہوئے مہر و مہ تماشائی

دیکھو، اے ساکنانِ خطۂ خاک
اِس کو کہتے ہیں عالم آرائی

کہ زمیں ہوگئی ہے، سر تا سر
رُوکشِ سطحِ چرخِ مینائی

سبزے کو جب کہیں جگہ نہ ملی
بن گیا رُوے آب پر کائی

रात पी ज़मज़म प मै और सुबह दम
धोये धब्बे जामः-ए-एहराम के

दिल को आँखों ने फँसाया, क्या मगर
यह भी हल्क़े हैं तुम्हारे दाम के

शाह के हैं ग़ुस्ल-ए-सेहत की ख़बर
देखिये, कब दिन फिरें हम्माम के

'अिश्क़ ने, ग़ालिब निकम्मा कर दिया
वर्नः हम भी आदमी थे काम के

१८२

फिर इस अन्दाज़ से बहार आई
कि हुये मेह्र-ओ-मह तमाशाई

देखो, अय साकिनान-ए-ख़ित्तः-ए-ख़ाक
इस को कहते हैं 'आलम आराई

कि जमीं हो गई है सर ता सर
रूकश -ए- सतह -ए- चर्ख़ -ए- मीनाई

सब्जे को जब कहीं जगह न मिली
बन गया रू-ए-आब पर काई

سبزہ و گل کے دیکھنے کے لیے
چشمِ نرگس کو دی ہے بینائی

ہے ہوا میں شراب کی تاثیر
بادہ نوشی ہے باد پیمائی

کیوں نہ دنیا کو ہو خوشی، غالب
شاہِ دیندار نے شفا پائی

۱۸۳

تغافل دوست ہوں، میرا دماغِ عجز عالی ہے
اگر پہلو تہی کیجے، تو جا میری بھی خالی ہے

رہا آباد عالم، اہلِ ہمت کے نہ ہونے سے
بھرے ہیں جس قدر جام و سبو، میخانہ خالی ہے

۱۸۴

کب وہ سنتا ہے کہانی میری
اور پھر وہ بھی زبانی میری

خلشِ غمزۂ خونریز نہ پوچھ
دیکھ خونابہ فشانی میری

सब्ज़ः-ओ-गुल के देखने के लिये
चश्म-ए-नर्गिस को दी है बीनाई

है हवा में शराब की तासीर
बादः नोशी है बाद पैमाई

क्यों न दुनिया को हो ख़ुशी, ग़ालिब
शाह-ए-दींदार ने शिफ़ा पाई

१८३

तग़ाफ़ुल दोस्त हूँ, मेरा दिमाग़-ए-'अिज्ज़ 'आली है
अगर पहलूतिही कीजे, तो जा मेरी भी ख़ाली है

रहा आबाद 'आलम, अह्ल-ए-हिम्मत के न होने से
भरे हैं जिस क़दर जाम-ओ-सुबू, मैख़ानः ख़ाली है

१८४

कब वह सुनता है कहानी मेरी
और फिर वह भी ज़बानी मेरी

ख़लिश-ए-ग़मज़ः-ए-ख़ूँरेज़ न पूछ
देख ख़ूँनाबः फ़िशानी मेरी

کیا بیاں کر کے مرا، روئیں گے یار
مگر آشفتہ بیانی میری

ہوں زخود رفتۂ بیدائے خیال
بھول جانا ہے، نشانی میری

متقابل ہے، مقابل میرا
رُک گیا، دیکھ روانی میری

قدرِ سنگِ سرِ رہ رکھتا ہوں
سخت ارزاں ہے، گرانی میری

گرد بادِ رہِ بے تابی ہوں
صرصرِ شوق ہے بانی میری

دہن اُس کا، جو نہ معلوم ہوا
کھل گئی ہیچ مدانی میری

کر دیا ضعف نے عاجز، غالب
ننگِ پیری ہے، جوانی میری

۱۸۵

نقشِ نازِ بتِ طناز، بہ آغوشِ رقیب
پائے طاؤس پے خامۂ مانی مانگے

क्या बयाँ करके मिरा, रोयेंगे यार
मगर आशुफ़्तः बयानी मेरी

हूँ ज़िख़ुद रफ़्तः-ए-बैदा-ए-ख़याल
भूल जाना है, निशानी मेरी

मुतक़ाबिल है, मुक़ाबिल मेरा
रुक गया, देख रवानी मेरी

क़द्र-ए-सँग-ए-सर-ए-रह रखता हूँ
सख़्त अरज़ाँ है, गिरानी मेरी

गर्द बाद-ए-रह-ए-बेताबी हूँ
सरसर-ए-शौक़ है, बानी मेरी

दहन उसका, जो न मा'लूम हुआ
खुल गई हेच मदानी मेरी

कर दिया ज़ो'फ़ ने 'आजिज़, ग़ालिब
नँग-ए-पीरी है, जवानी मेरी

१८५

नक़्श-ए-नाज़-ए-बुत-ए-तन्नाज़, ब आग़ोश-ए-रक़ीब
पा-ए-ताऊस पै-ए-ख़ाम:-ए-मानी माँगे

تو وہ بد خو، کہ تحیّر کو تماشا جانے
غم وہ افسانہ، کہ آشفتہ بیانی مانگے

وہ تپِ عشقِ تمنا ہے، کہ پھر صورتِ شمع
شعلہ تا نبضِ جگر ریشہ دوانی مانگے

۱۸۶

گلشن کو تری صحبت، از بس کہ خوش آئی ہے
ہر غنچہ کا گل ہونا، آغوش کشائی ہے

واں کنگرِ استغنا، ہر دم ہے بلندی پر
یاں نالے کو اور اُلٹا، دعوائے رسائی ہے

از بسکہ سکھاتا ہے غم، ضبط کے اندازے
جو داغ نظر آیا اک چشم نمائی ہے

۱۸۷

جس زخم کی ہو سکتی ہو تدبیر، رفو کی
لکھ دیجیو، یارب، اسے قسمت میں عدو کی

اچھا ہے سر انگشتِ حنائی کا تصور
دل میں نظر آتی تو ہے، اک بوند لہو کی

तू वह बदख़ू, कि तहय्युर को तमाशा जाने
ग़म वह अफ़सानः, कि आशुफ़्तः बयानी माँगे

वह तप-ए-'अिश्क़-ए-तमन्ना है, कि फिर सूरत-ए-शम्'अ
शो'लः ता नब्ज़-ए-जिगर रेशः दवानी माँगे

१८६

गुलशन को तिरी सोह्बत, अज़ बसकि ख़ुश आई है
हर ग़ुंचे का गुल होना, आग़ोश कुशाई है

वाँ कुँगुर-ए-इस्तिग़ना, हर दम है बलन्दी पर
याँ नाले को और उल्टा, दा'वा-ए-रसाई है

अज़ बसकि सिखाता है ग़म, ज़ब्त के अन्दाज़े
जो दाग़ नज़र आया, इक चश्म नुमाई है

१८७

जिस ज़ख़्म की हो सकती हो तद्बीर, रफ़ू की
लिख दीजियो, यारब, उसे क़िस्मत में 'अदू की

अच्छा है सर अँगुश्त-ए-हिनाई का तसव्वुर
दिल में नज़र आती तो है, इक बूँद लहू की

کیوں ڈرتے ہو، عشاق کی بے حوصلگی سے
یاں تو کوئی سنتا نہیں فریاد کسو کی

دشنے نے کبھی منھ نہ لگایا ہو جگر کو
خنجر نے کبھی بات نہ پوچھی ہو گلو کی

صد حیف وہ ناکام، کہ اک عمر سے، غالب
حسرت میں رہے ایک بتِ عربدہ جُو کی

۱۸۸

سیماب پشت گرمیِ آئینہ دے ہے، ہم
حیراں کئے ہوئے ہیں دلِ بے قرار کے

آغوشِ گل کشودہ برائے وداع ہے
اے عندلیب، چل، کہ چلے دن بہار کے

۱۸۹

ہے وصل ہجر، عالمِ تمکین و ضبط میں
معشوقِ شوخ و عاشقِ دیوانہ چاہیے

اُس لب سے مل ہی جائیگا بوسہ کبھی تو، ہاں
شوقِ فضول و جرأتِ رندانہ چاہیے

क्यों डरते हो, 'अुश्शाक़ की बे हौसलगी से
याँ तो कोई सुनता नहीं फ़रियाद किसू की

दश्ने ने कभी मुँह न लगाया हो जिगर को
ख़ंजर ने कभी बात न पूछी हो गुलू की

सद हैफ़ वह नाकाम, कि इक 'अुम्र से, ग़ालिब
हस्रत में रहे एक बुत-ए-'अरबदः जू की

१८८

सीमाब पुश्त गर्मि-ए-आईनः दे हैं, हम
हैराँ किये हुये हैं दिल-ए-बेक़रार के

आग़ोश-ए-गुल कुशूदः बराये विदा'अ है
अय 'अन्दलीब, चल, कि चले दिन बहार के

१८९

है वस्ल हिज्र, 'आलम-ए-तम्कीन-ओ-ज़ब्त में
मा'शूक़-ए-शोख़-ओ-'आशिक़-ए-दीवानः चाहिये

उस लब से मिल ही जायगा बोसः कभी तो, हाँ
शौक़-ए-फ़ुज़ूल-ओ-जुरअत-ए-रिन्दानः चाहिये

۱۹۰

چاہیے اچھوں کو جتنا چاہیے
یہ اگر چاہیں، تو پھر کیا چاہیے

صحبتِ رنداں سے، واجب ہے حذر
جاے مے اپنے کو کھینچا چاہیے

چاہنے کو تیرے کیا سمجھا تھا دل
بارے، اب اِس سے بھی سمجھا چاہیے

چاک مت کر جیب، بے ایامِ گل
کچھ اُدھر کا بھی اشارا چاہیے

دوستی کا پردہ، ہے بیگانگی
منھ چھپانا ہم سے چھوڑا چاہیے

دشمنی نے میری کھویا غیر کو
کس قدر دشمن ہے، دیکھا چاہیے

اپنی رُسوائی میں کیا چلتی ہے سعی
یار ہی ہنگامہ آرا چاہیے

منحصر مرنے پہ ہو، جس کی اُمید
نااُمیدی اُس کی، دیکھا چاہیے

१९०

चाहिये अच्छों को जितना चाहिये
यह अगर चाहें, तो फिर क्या चाहिये

सोहबत-ए-रिन्दाँ से वाजिब है हज़र
जा-ए-मै अपने को खेंचा चाहिये

चाहने को तेरे क्या समझा था दिल
बारे, अब इस से भी समझा चाहिये

चाक मत कर जैब बे अय्याम-ए-गुल
कुछ उधर का भी इशारा चाहिये

दोस्ती का पर्दः, है बेगानगी
मुँह छुपाना हम से छोड़ा चाहिये

दुश्मनी ने मेरी खोया ग़ैर को
किस क़दर दुश्मन है, देखा चाहिये

अपनी रुस्वाई में क्या चलती है स'यि
यार ही हँगामः आरा चाहिये

मुनहसिर मरने प हो, जिसकी उमीद
नाउमीदी उस की, देखा चाहिये

غافل، ان مہ طلعتوں کے واسطے
چاہنے والا بھی اچھا چاہیے

چاہتے ہیں خوبرویوں کو اسد
آپ کی صورت تو دیکھا چاہیے

۱۹۱

ہر قدم دوریِ منزل ہے نمایاں مجھ سے
میری رفتار سے بھاگے ہے، بیاباں مجھ سے

درسِ عنوانِ تماشا، بہ تغافل خوشتر
ہے نگہ رشتۂ شیرازۂ مژگاں مجھ سے

وحشتِ آتشِ دل سے، شبِ تنہائی میں
صورتِ دُود، رہا سایہ گریزاں مجھ سے

غمِ عُشاق نہ ہو، سادگی آموزِ بُتاں
کس قدر خانۂ آئینہ ہے ویراں مجھ سے

اثرِ آبلہ سے، جادۂ صحرائے جنوں
صورتِ رشتۂ گوہر ہے چراغاں مجھ سے

بے خودی بسترِ تمہیدِ فراغت ہو جو
پُر ہے سائے کی طرح، میرا شبستاں مجھ سے

ग़ाफ़िल, इन मह तल्'अतों के वास्ते
चाहने वाला भी अच्छा चाहिये

चाहते हैं ख़ूबरुओं को असद
आप की सूरत तो देखा चाहिये

१९१

हर क़दम दूरि-ए-मंज़िल है नुमायाँ मुझसे
मेरी रफ़्तार से भागे है, बयाबाँ मुझसे

दर्स-ए-'उन्वान-ए-तमाशा, ब तग़ाफ़ुल ख़ुश्तर
है निगह रिश्तः-ए-शीराज़ः-ए-मिश़गाँ मुझसे

वहशत-ए-आतश-ए-दिल से, शब-ए-तन्हाई में
सूरत-ए-दूद, रहा सायः गुरेज़ाँ मुझसे

ग़म-ए-'उश्शाक़ न हो, सादगी आमोज़-ए-बुताँ
किस क़दर ख़ानः-ए-आईनः है वीराँ मुझसे

असर-ए-आबलः से, जादः-ए-सहरा-ए-जुनूँ
सूरत-ए-रिश्तः-ए-गौहर है चराग़ाँ मुझसे

बेख़ुदी बिस्तर-ए-तम्हीद-ए-फ़राग़त हूजो
पुर है साये की तरह, मेरा शबिस्ताँ मुझसे

شوقِ دیدار میں، گر تو مجھے گردن مارے
ہو نگہ، مثلِ گلِ شمع، پریشاں مجھ سے

بے کسی ہائے شبِ ہجر کی وحشت، ہے، ہے
سایہ خورشیدِ قیامت میں ہے پنہاں مجھ سے

گردشِ ساغرِ صد جلوۂ رنگیں، تجھ سے
آئینہ داریِ یک دیدۂ حیراں، مجھ سے

نگہِ گرم سے اک آگ ٹپکتی ہے، اسد
ہے چراغاں، خس و خاشاکِ گلستاں مجھ سے

۱۹۲

نکتہ چیں ہے، غمِ دل اُس کو سنائے نہ بنے
کیا بنے بات، جہاں بات بنائے نہ بنے

میں بلاتا تو ہوں اُس کو، مگر اے جذبۂ دل
اُس پہ بن جائے کچھ ایسی، کہ بن آئے نہ بنے

کھیل سمجھا ہے کہیں چھوڑ نہ دے، بھول نہ جائے
کاش، یوں بھی ہو، کہ بِن میرے ستائے نہ بنے

غیر پھرتا ہے، لیے یوں ترے خط کو، کہ اگر
کوئی پوچھے، کہ یہ کیا ہے، تو چھپائے نہ بنے

शौक़-ए-दीदार में, गर तू मुझे गर्दन मारे
हो निगह, मिस्ल-ए-गुल-ए-शम्'अ, परीशाँ मुझसे

बेकसीहा-ए-शब-ए-हिज्र की वहशत, हय, हय
सायः ख़ुर्शीद-ए-क़यामत में है पिन्हाँ मुझसे

गर्दिश-ए-साग़र-ए-सद् जल्वः-ए-रँगीं, तुझसे
आइनःदारि-ए-यक दीदः-ए-हैराँ, मुझसे

निगह-ए-गर्म से इक आग टपकती है, असद
है चराग़ाँ, ख़स-ओ-ख़ाशाक-ए-गुलिस्ताँ मुझसे

१९२

नुक्तःचीं है, ग़म-ए-दिल उसको सुनाये न बने
क्या बने बात, जहाँ बात बनाये न बने

मैं बुलाता तो हूँ उसको, मगर अय जज़्बः-ए-दिल
उस प बन जाये कुछ ऐसी, कि बिन आये न बने

खेल समझा है, कहीं छोड़ न दे, भूल न जाये
काश, यों भी हो, कि बिन मेरे सताये न बने

ग़ैर फिरता है, लिये यों तिरे ख़त को, कि अगर
कोई पूछे, कि यह क्या है, तो छुपाये न बने

اِس نزاکت کا بُرا ہو، وہ بھلے ہیں، تو کیا
ہاتھ آویں، تو اُنہیں ہاتھ لگائے نہ بنے

کہہ سکے کون، کہ یہ جلوہ گری کس کی ہے
پردہ چھوڑا ہے وہ اُس نے، کہ اُٹھائے نہ بنے

موت کی راہ نہ دیکھوں، کہ بِن آئے نہ رہے
تم کو چاہوں، کہ نہ آؤ، تو بلائے نہ بنے

بوجھ وہ سر سے گرا ہے، کہ اٹھائے نہ اُٹھے
کام وہ آن پڑا ہے، کہ بنائے نہ بنے

عشق پر زور نہیں، ہے یہ وہ آتش، غالب
کہ لگائے نہ لگے اور بُجھائے نہ بنے

۱۹۳

چاک کی خواہش، اگر وحشت بہ عریانی کرے
صبح کی مانند، زخمِ دم گریبانی کرے

جلوے کا تیرے وہ عالم ہے، کہ گر کیجے خیال
دیدۂ دل کو زیارت گاہِ حیرانی کرے

ہے شکستن سے بھی دل نومید، یارب، کب تلک
آبگینہ کوہ پر عرضِ گراں جانی ہے

इस नज़ाकत का बुरा हो, वह भले हैं, तो क्या
हाथ आवें, तो उन्हें हाथ लगाये न बने

कह सके कौन, कि यह जल्वःगरी किसकी है
पर्दः छोड़ा है वह उसने, कि उठाये न बने

मौत की राह न देखूँ, कि बिन आये न रहे
तुम को चाहूँ, कि न आओ, तो बुलाये न बने

बोझ वह सर से गिरा है, कि उठाये न उठे
काम वह आन पड़ा है, कि बनाये न बने

'अिश्क़ पर ज़ोर नहीं, है यह वह आतश, ग़ालिब
कि लगाये न लगे और बुझाये न बने

१९३

चाक की ख़्वाहिश, अगर वहशत ब 'अुरियानी करे
सुबह की मानिन्द, ज़ख़्म-ए-दिल गरीबानी करे

जल्वे का तेरे वह 'आलम है, कि गर कीजे ख़याल
दीदः-ए-दिल को जियारत गाह-ए-हैरानी करे

है शिकस्तन से भी दिल नौमीद, यारब, कब तलक
आबगीनः कोह पर 'अर्ज़-ए-गिराँ जानी करे

میکدہ گر چشمِ مستِ ناز سے پاوے شکست
مُوے شیشہ دیدۂ ساغر کی مژگانی کرے

خطِ عارض سے، لکھا ہے زلف کو اُلفت نے، عہد
یک قلم منظور ہے، جو کچھ پریشانی کرے

۱۹٤

وہ آکے خواب میں، تسکینِ اضطراب تو دے
ولے مجھے تپشِ دل مجالِ خواب تو دے

کرے ہے قتل، لگاوٹ میں تیرا رو دینا
تری طرح کوئی تیغِ نگہ کو آب تو دے

دکھا کے جنبشِ لب ہی، تمام کر ہم کو
نہ دے جو بوسہ، تو منہ سے کہیں جواب تو دے

پلا دے اوک سے، ساقی جو ہم سے نفرت ہے
پیالہ گر نہیں دیتا، نہ دے، شراب تو دے

اسد، خوشی سے مرے ہاتھ پانو پھول گئے
کہا جو اُس نے، ذرا میرے پانو داب تو دے

मैकद: गर चश्म-ए-मस्त-ए-नाज़ से पावे शिकस्त
मू-ए-शीश: दीद:-ए-साग़र की मिश़गानी करे

ख़त्त-ए-'आरिज़ से, लिखा है ज़ुल्फ़ को उल्फ़त ने 'अह्द
यक क़लम मंज़ूर है, जो कुछ परीशानी करे

१९४

वह आके ख़्वाब में, तस्कीन-ए-इज़्तिराब तो दे
वले मुझे तपिश-ए-दिल मजाल-ए-ख़्वाब तो दे

करे है क़त्ल, लगावट में तेरा रो देना
तिरी तरह कोई तेग़-ए-निगह को आब तो दे

दिखा के जुँबिश-ए-लब ही, तमाम कर हम को
न दे जो बोस:, तो मुँह से कहीं जवाब तो दे

पिलादे ओक से, साक़ी, जो हम से नफ़रत है
पियाल: गर नहीं देता, न दे, शराब तो दे

असद, ख़ुशी से मिरे हाथ पाँव फूल गये
कहा जो उसने, ज़रा मेरे पाँव दाब तो दे

۱۹۵

تپش سے میری، وقفِ کشمکش، ہر تارِ بستر ہے
مرا سر رنجِ بالیں ہے، مرا تن بارِ بستر ہے

سرشکِ سر بہ صحرا دادہ، نورالعینِ دامن ہے
دلِ بے دست و پا افتادہ، برخوردارِ بستر ہے

خوشا اقبالِ رنجوری، عیادت کو تم آئے ہو
فروغِ شمعِ بالیں، طالعِ بیدارِ بستر ہے

بہ طوفاں گاہِ جوشِ اضطرابِ شامِ تنہائی
شعاعِ آفتابِ صبحِ محشر تارِ بستر ہے

ابھی آتی ہے بو، بالش سے، اُس کی زلفِ مشکیں کی
ہماری دید کو، خوابِ زلیخا، عارِ بستر ہے

کہوں کیا، دل کی کیا حالت ہے، ہجرِ یار میں، غالب
کہ بے تابی سے، ہر اک تارِ بستر خارِ بستر ہے

۱۹۶

خطر ہے، رشتۂ اُلفت رگِ گردن نہ ہو جاوے
غرورِ دوستی آفت ہے، تُو دشمن نہ ہو جاوے

१९५

तपिश से मेरी, वक़्फ़-ए-कशमकश, हर तार-ए-बिस्तर है
मिरा सर रँज-ए-बालीं है, मिरा तन बार-ए-बिस्तर है

सरश्क-ए-सर बसहरा दादः, नूरुल'ऐन-ए-दामन है
दिल-ए-बेदस्त-ओ-पा उफ़्तादः, बर्ख़ुर्दार-ए-बिस्तर है

ख़ुशा इक़्बाल-ए-रँजूरी, 'अयादत को तुम आये हो
फ़रोग़-ए-शम्'-ए-बालीं, ताले'-ए-बेदार-ए-बिस्तर है

ब तूफ़ाँ गाह-ए-जोश-ए-इज़्तिराब-ए-शाम-ए-तन्हाई
शु'आ'-ए-आफ़ताब-ए-सुब्ह-ए-महशर तार-ए-बिस्तर है

अभी आती है बू, बालिश से, उसकी ज़ुल्फ़-ए-मिश्कीं की
हमारी दीद को, ख़्वाब-ए-ज़ुलैख़ा, 'आर-ए-बिस्तर है

कहूँ क्या, दिल की क्या हालत है, हिज्र-ए-यार में, ग़ालिब
कि बेताबी से, हर इक तार-ए-बिस्तर ख़ार-ए-बिस्तर है

१९६

ख़तर है, रिश्तः-ए-उल्फ़त रग-ए-गर्दन न हो जावे
ग़ुरूर-ए-दोस्ती आफ़त है, तू दुश्मन न हो जावे

سمجھ اِس فصل میں کوتاہیِ نشو و نما، غالب
اگر گُل، سرو کے قامت پہ، پیراہن نہ ہو جاوے

۱۹۷

فریاد کی کوئی لَے نہیں ہے
نالہ پابندِ نَے نہیں ہے

کیوں بوتے ہیں باغبان تونبے
گر باغ گدائے مے نہیں ہے

ہر چند ہر ایک شے میں تو ہے
پر تجھ سی تو کوئی شے نہیں ہے

ہاں، کھائیو مت فریبِ ہستی
ہر چند کہیں کہ، ہے، نہیں ہے

شادی سے گزر، کہ غم نہ ہووے
اُردی جو نہ ہو، تو دَے نہیں ہے

کیوں ردِّ قدح کرے ہے، زاہد
مے ہے، یہ مگس کی قے نہیں ہے

ہستی ہے، نہ کچھ عدم ہے، غالب
آخر تُو کیا ہے، اے، نہیں ہے

समझ इस फ़स्ल में कोताहि-ए-नश्व-ओ-नुमा, ग़ालिब
अगर गुल, सर्व के क़ामत प, पैराहन न हो जावे

१९७

फ़रियाद की कोई लै नहीं है
नालः पाबन्द-ए-नै नहीं है

क्यों बोते हैं बाग़बान तूँबे
गर बाग़ गदा-ए-मै नहीं है

हर चन्द हर एक शै में तू है
पर तुझसी तो कोई शै नहीं है

हाँ, खाइयो मत फ़रेब-ए-हस्ती
हर चन्द कहें, कि है, नहीं है

शादी से गुज़र, कि ग़म न होवे
उर्दी जो न हो, तो दै नहीं है

क्यों रद्द-ए-क़दह करे है, ज़ाहिद
मै है, यह मगस की क़ै नहीं है

हस्ती है, न कुछ 'अदम है, ग़ालिब
आख़िर तू क्या है, अय, नहीं है

۱۹۸

نہ پوچھ نسخۂ مرہم، جراحتِ دل کا
کہ اُس میں ریزۂ الماس جزوِ اعظم ہے

بہت دنوں میں تغافل نے تیرے پیدا کی
وہ اک نگہ، کہ بظاہر نگاہ سے کم ہے

۱۹۹

ہم رشک کو اپنے بھی، گوارا نہیں کرتے
مرتے ہیں، ولے اُن کی تمنا نہیں کرتے

در پردہ اُنہیں غیر سے ہے ربطِ نہانی
ظاہر کا یہ پردا ہے، کہ پردا نہیں کرتے

یہ باعثِ نومیدیِ اربابِ ہوس ہے
غالب کو بُرا کہتے ہو، اچھا نہیں کرتے

۲۰۰

کرے ہے بادہ، ترے لب سے، کسبِ رنگِ فروغ
خطِ پیالہ سراسر نگاہِ گلچیں ہے

१९८

न पूछ नुस्ख़ः-ए-मरहम, जराहत-ए-दिल का
कि उस में रेज़ः-ए-अल्मास जुज़्व-ए-आ'ज़म है

बहुत दिनों में तग़ाफ़ुल ने तेरे पैदा की
वह इक निगह, कि बज़ाहिर निगाह से कम है

१९९

हम रश्क को अपने भी, गवारा नहीं करते
मरते हैं, वले उन की तमन्ना नहीं करते

दर पर्दः उन्हें ग़ैर से, है रब्त-ए-निहानी
ज़ाहिर का यह पर्दा है, कि पर्दा नहीं करते

यह बा'यिस-ए-नौमीदि-ए-अर्बाब-ए-हवस है
ग़ालिब को बुरा कहते हो, अच्छा नहीं करते

२००

करे है बादः, तिरे लब से कस्ब-ए-रँग-ए-फ़रोग़
ख़त-ए-पियालः सरासर निगाह-ए-गुलचीं है

کبھی تو اِس دلِ شوریدہ کی بھی داد ملے
کہ ایک عمر سے حسرت پرستِ بالیں ہے

بجا ہے، گر نہ سنے، نالہ ہاے بلبلِ زار
کہ گوشِ گل، نمِ شبنم سے، پنبہ آگیں ہے

اسد ہے نزع میں، چل بے وفا، براے خدا
مقامِ ترکِ حجاب و وداعِ تمکیں ہے

۲۰۱

کیوں نہ ہو چشمِ بتاں محوِ تغافل، کیوں نہ ہو
یعنی اس بیمار کو نظارے سے پرہیز ہے

مرتے مرتے، دیکھنے کی آرزو رہ جائے گی
واے ناکامی، کہ اُس کافر کا خنجر تیز ہے

عارضِ گل دیکھ، روے یار یاد آیا، اسد
جوششِ فصلِ بہاری اشتیاق انگیز ہے

۲۰۲

دیا ہے دل اگر اُس کو، بشر ہے، کیا کہیے
ہوا رقیب، تو ہو، نامہ بر ہے، کیا کہیے

कभी तो इस दिल-ए-शोरीदः की भी दाद मिले
कि एक 'ग्रुम्र से हस्रत परस्त-ए-बालीं है

बजा है, गर न सुने, नालःहा-ए-बुलबुल-ए-ज़ार
कि गोश-ए-गुल, नम-ए-शबनम से, पँबः ग्रागीं हैं

ग्रसद है नज़'ग्र में, चल बेवफ़ा, बराय ख़ुदा
मक़ाम-ए-तर्क-ए-हिजाब-ग्रो-विदा'-ए-तम्कीं है

२०१

क्यों न हो चश्म-ए-बुताँ महव-ए-तग़ाफ़ुल, क्यों न हो
या'नी इस बीमार को नज़्ज़ारे से परहेज़ है

मरते मरते, देखने की ग्रारज़ू रह जायगी
वाय नाकामी, कि उस काफ़िर का ख़ंजर तेज़ है

'ग्रारिज़-ए-गुल देख, रू-ए-यार याद ग्राया, ग्रसद
जोशिश-ए-फ़स्ल-ए-बहारी इश्तियाक़ ग्रँगेज़ है

२०२

दिया है दिल ग्रगर उस को, बशर है, क्या कहिये
हुग्रा रक़ीब, तो हो, नामःबर है, क्या कहिये

یہ ضد، کہ آج نہ آوے اور آئے بِن نہ رہے
قضا سے شکوہ ہمیں کس قدر ہے، کیا کہیے

رہے ہے یوں گہ و بے گہ، کہ کوے دوست کو اب
اگر نہ کہیے کہ دشمن کا گھر ہے، کیا کہیے

زہے کرشمہ، کہ یوں دے رکھا ہے ہم کو فریب
کہ بِن کہے ہی اُنہیں سب خبر ہے، کیا کہیے

سمجھ کے کرتے ہیں، بازار میں وہ، پرسشِ حال
کہ یہ کہے، کہ سرِ رہ گزر ہے، کیا کہیے

تمہیں نہیں ہے سرِ رشتۂ وفا کا خیال
ہمارے ہاتھ میں کچھ ہے، مگر ہے کیا، کہیے

اُنہیں سوال پہ زعمِ جنوں ہے، کیوں لڑیے
ہمیں جواب سے قطعِ نظر ہے، کیا کہیے

حسد، سزاے کمالِ سخن ہے، کیا کیجے
ستم، بہاے متاعِ ہنر ہے، کیا کہیے

کہا ہے کس نے، کہ غالب بُرا نہیں، لیکن
سواے اِس کے، کہ آشفتہ سر ہے، کیا کہیے

यह ज़िद, कि आज न आवे और आये बिन न रहे
क़ज़ा से शिकवः हमें किस क़दर है, क्या कहिये

रहे है यों गह-ओ-बे गह, कि कू-ए-दोस्त को अब
अगर न कहिये कि दुश्मन का घर है, क्या कहिये

ज़िहे करिश्मः, कि यों दे रखा है हम को फ़रेब
कि बिन कहे ही उन्हें सब ख़बर है, क्या कहिये

समझ के करते हैं, बाज़ार में वह, पुरसिश-ए-हाल
कि यह कहे, कि सर-ए-रहगुज़र है, क्या कहिये

तुम्हें नहीं है सर-ए-रिश्तः-ए-वफ़ा का ख़याल
हमारे हाथ में कुछ है, मगर है क्या, कहिये

उन्हें सवाल प ज़ा'म-ए-जुनूँ है, क्यों लड़िये
हमें जवाब से क़त'-ए-नज़र है, क्या कहिये

हसद, सज़ा-ए-कमाल-ए-सुख़न है, क्या कीजे
सितम, बहा-ए-मता'-ए-हुनर है, क्या कहिये

कहा है किसने, कि ग़ालिब बुरा नहीं, लेकिन
सिवाये इसके, कि आशुफ़्तःसर है, क्या कहिये

دیکھ کر در پردہ گرمِ دامن افشانی مجھے
کر گئی وابستۂ تن مــــیری عُریانی مجھے

بن گیــا تیغِ نگاہِ یار کا سنگِ فســاں
مرحبا میں، کیا مبارک ہے گراں جانی مجھے

کیوں نہ ہو بے التفاتی، اُس کی خاطر جمع ہے
جــانتا ہے محوِ پُرسش ہاے پنہــانی مجھے

میرے غمخانے کی قسمت جب رقم ہونے لگی
لکھ دیا منجملۂ اسبــابِ ویرانی، مجھے

بد گماں ہوتا ہے وہ کافر، نہ ہوتا، کاش کے
اِس قدر ذوقِ نواے مرغِ بستانی مجھے

واے، واں بھی شورِ محشر نے نہ دم لینے دیا
لے گیا تھا گور میں، ذوقِ تن آسانی مجھے

وعــدہ آنے کا وفــا کیجے، یہ کیا انداز ہے
تم نے کیوں سونپی ہے، میرے گھر کی دربانی، مجھے

ہاں نشــاطِ آمــدِ فصلِ بہــاری، واہ، واہ
پھر ہوا ہے تازہ سوداے غزل خوانی مجھے

देख कर दर पर्दः गर्म-ए-दामन अफ़शानी मुझे
कर गई वाबस्तः-ए-तन मेरी 'उरियानी मुझे

बन गया तेग़-ए-निगाह-ए-यार का सँग-ए-फ़साँ
मरहबा मैं, क्या मुबारक है गिराँ जानी मुझे

क्यों न हो बेइल्तिफ़ाती, उस की ख़ातिर जम्'अ है
जानता है मह्व-ए-पुरसिशहा-ए-पिन्हानी मुझे

मेरे ग़म ख़ाने की क़िस्मत जब रक़म होने लगी
लिख दिया मिंजुमलः-ए-अस्बाब-ए-वीरानी, मुझे

बदगुमाँ होता है वह काफ़िर, न होता, काशके
इस क़दर ज़ौक़-ए-नवा-ए-मुर्ग़-ए-बुस्तानी मुझे

वाय, वाँ भी शोर-ए-महशर ने न दम लेने दिया
ले गया था गोर में, ज़ौक़-ए-तन आसानी मुझे

वा'दः आने का वफ़ा कीजे, यह क्या अन्दाज़ है
तुम ने क्यों सौंपी है, मेरे घर की दरबानी, मुझे

हाँ नशात-ए-आमद-ए-फ़स्ल-ए-बहारी, वाह, वाह
फिर हुआ है ताज़ः सौदा-ए-ग़ज़ल ख़्वानी मुझे

دی مرے بھائی کو حق نے ، از سرِ نو زندگی
میرزا یوسف، ہے غالب، یوسفِ ثانی مجھے

۲۰٤

یاد ہے شادی میں بھی ، ہنگامۂ یارب ، مجھے
سُبحۂ زاہد ہوا ہے، خندہ زیرِ لب مجھے

ہے کشادِ خاطرِ وابستہ در، رہنِ سخن
تھا طلسمِ قفلِ ابجد، خانۂ مکتب مجھے

یارب، اِس آشفتگی کی داد کس سے چاہیے
رشک، آسایش پہ ہے زندانیوں کی ، اب مجھے

طبع ہے مشتاقِ لذت ہائے حسرت، کیا کروں
آرزو سے ، ہے شکستِ آرزو مطلب مجھے

دل لگا کر آپ بھی غالب مجھی سے ہو گئے
عشق سے آتے تھے مانع ، میرزا صاحب مجھے

۲۰۵

حضورِ شاہ میں، اہلِ سخن کی آزمایش ہے
چمن میں، خوش نوایانِ چمن کی آزمایش ہے

दी मिरे भाई को हक़ ने, अज़ सर-ए-नौ ज़िन्दगी
मीरज़ा यूसुफ़, है ग़ालिब, यूसुफ़-ए-सानी मुझे

२०४

याद है शादी में भी हँगामः-ए-यारब, मुझे
सुब्हः-ए-ज़ाहिद हुआ है, ख़न्दः ज़ेर-ए-लब मुझे

है कुशाद-ए-ख़ातिर-ए-वाबस्तः दर रह्न-ए-सुख़न
था तिलिस्म-ए-क़ुफ़्ल-ए-अबजद, ख़ानः-ए-मक्तब मुझे

यारब, इस आशुफ़्तगी की दाद किस से चाहिये
रश्क, आसाइश प है ज़िन्दानियों की, अब मुझे

तब'अ है मुश्ताक़-ए-लज़्ज़तहा-ए-हस्रत, क्या करूँ
आरज़ू से, है शिकस्त-ए-आरज़ू मतलब मुझे

दिल लगा कर आप भी ग़ालिब मुझी से हो गये
'अिश्क़ से आते थे माने'अ, मीरज़ा साहब मुझे

२०५

हुज़ूर-ए-शाह में, अह्ल-ए-सुख़न की आज़माइश है
चमन में, ख़ुश नवायान-ए-चमन की आज़माइश है

قد و گیسو میں، قیس و کوہ کن کی آزمایش ہے
جہاں ہم ہیں، وہاں دار و رسن کی آزمایش ہے

کریں گے کوہ کن کے حوصلے کا امتحاں آخر
ہنوز اُس خستہ کے نیروے تن کی آزمایش ہے

نسیمِ مصر کو کیا پیرِ کنعاں کی ہوا خواہی
اُسے یوسف کی بوے پیرہن کی آزمایش ہے

وہ آیا بزم میں، دیکھو، نہ کہیو پھر، کہ غافل تھے
شکیب و صبرِ اہلِ انجمن کی آزمایش ہے

رہے دل ہی میں تیر، اچھا، جگر کے پار ہو، بہتر
غرض شستِ بتِ ناوک فگن کی آزمایش ہے

نہیں کچھ سُبحہ و زنار کے پھندے میں گیرائی
وفاداری میں شیخ و برہمن کی آزمایش ہے

پڑا رہ، اے دلِ وابستہ، بیتابی سے کیا حاصل
مگر پھر تابِ زُلفِ پُر شکن کی آزمایش ہے

رگ و پَے میں جب اُترے زہرِ غم، تب دیکھیے کیا ہو
ابھی تو تلخیِ کام و دہن کی آزمایش ہے

وہ آویں گے مرے گھر، وعدہ کیسا، دیکھنا، غالب
نئے فتنوں میں اب چرخِ کہن کی آزمایش ہے

क़द-ओ-गेसू में, क़ैस-ओ-कोहकन की आज़माइश है
जहाँ हम हैं वहाँ दार-ओ-रसन की आज़माइश है

करेंगे कोहकन के हौसले का इम्तिहाँ आख़िर
हनोज़ उस ख़स्तः के नीरू-ए-तन की आज़माइश है

नसीम-ए-मिस्र को क्या पीर-ए-कन'आँ की हवाख़्वाही
उसे यूसुफ़ की बू-ए-पैरहन की आज़माइश है

वह आया बज़्म में देखो न कहियो फिर कि ग़ाफ़िल थे
शिकेब-ओ-सब्र-ए-अह्ल-ए-अंजुमन की आज़माइश है

रहे दिल ही में तीर, अच्छा, जिगर के पार हो, बेहतर
ग़रज़ शिस्त-ए-बुत-ए-नावक फ़िगन की आज़माइश है

नहीं कुछ सुब्हः-ओ-ज़ुन्नार के फन्दे में गीराई
वफ़ादारी में शैख़-ओ-बर्हमन की आज़माइश है

पड़ा रह अय दिल-ए-वाबस्तः बेताबी से क्या हासिल
मगर फिर ताब-ए-ज़ुल्फ़-ए-पुरशिकन की आज़माइश है

रग-ओ-पै में जब उतरे ज़हर-ए-ग़म तब देखिये क्या हो
अभी तो तल्ख़ि-ए-काम-ओ-दहन की आज़माइश है

वह आवेंगे मिरे घर, वा'दः कैसा, देखना, ग़ालिब
नये फ़ितनों में अब चर्ख़-ए-कुहन की आज़माइश है

۲۰۶

کبھی نیکی بھی اُس کے جی میں، گر آجائے ہے، مجھ سے
جفائیں کر کے اپنی یاد، شرما جائے ہے، مجھ سے

خدایا، جذبۂ دل کی مگر تاثیر اُلٹی ہے
کہ جتنا کھینچتا ہوں اور کھچتا جائے ہے مجھ سے

وہ بد خُو، اور میری داستانِ عشق طولانی
عبارت مختصر، قاصد بھی گھبرا جائے ہے مجھ سے

اُدھر وہ بدگمانی ہے، اِدھر یہ ناتوانی ہے
نہ پوچھا جائے ہے اُس سے، نہ بولا جائے ہے مجھ سے

سنبھلنے دے مجھے، اے نا اُمیدی، کیا قیامت ہے
کہ دامانِ خیالِ یار، چُھوٹا جائے ہے مجھ سے

تکلف بر طرف، نظارگی میں بھی سہی، لیکن
وہ دیکھا جائے، کب یہ ظلم دیکھا جائے ہے مجھ سے

ہوئے ہیں پانوٗ ہی پہلے، نبردِ عشق میں زخمی
نہ بھاگا جائے ہے مجھ سے، نہ ٹھہرا جائے ہے مجھ سے

قیامت ہے، کہ ہووے مدعی کا ہم سفر، غالب
وہ کافر، جو خدا کو بھی نہ سونپا جائے ہے مجھ سے

२०६

कभी नेकी भी उसके जी में गर आ जाये है मुझसे
जफ़ायें कर के अपनी याद शर्मा जाये है मुझसे

खुदाया, जज़्बः-ए-दिल की मगर तासीर उल्टी है
कि जितना खेंचता हूँ और खिचता जाये है मुझसे

वह बदख़ू, और मेरी दास्तान-ए-'अिश्क़ तूलानी
'अिबारत मुख़्तसर, क़ासिद भी घबरा जाये है मुझसे

उधर वह बदगुमानी है, इधर यह नातवानी है
न पूछा जाये है उससे, न बोला जाये है मुझसे

सँभलने दे मुझे, अय नाउमीदी, क्या क़यामत है
कि दामान-ए-ख़याल-ए-यार, छूटा जाये है मुझसे

तकल्लुफ़ बरतरफ़, नज़्ज़ारगी में भी सही, लेकिन
वह देखा जाये, कब यह ज़ुल्म देखा जाये है मुझसे

हुये हैं पाँव ही पहले, नबर्द-ए-'अिश्क़ में ज़ख़्मी
न भागा जाये है मुझसे, न ठहरा जाये है मुझसे

क़यामत है, कि होवे मुद्द'अी का हमसफ़र, ग़ालिब
वह काफ़िर, जो ख़ुदा को भी न सौंपा जाये है मुझसे

۲۰۷

زبسکہ مشقِ تماشا، جنوں علامت ہے
کشاد و بستِ مژہ، سیلیِ ندامت ہے

نہ جانوں، کیونکہ مٹے داغِ طعنِ بدعہدی
تجھے کہ آئینہ بھی ورطۂ ملامت ہے

بہ پیچ وتابِ ہوس، سلکِ عافیت مت توڑ
نگاہِ عجز سرِ رشتۂ سلامت ہے

وفا مقابل و دعوائے عشق بے بنیاد
جنونِ ساختہ و فصلِ گل قیامت ہے

۲۰۸

لاغر اِتنا ہوں، کہ گر تُو بزم میں جا دے مجھے
میرا ذمّہ، دیکھ کر گر کوئی بتلا دے مجھے

کیا تعجب ہے، کہ اُس کو دیکھ کر آجائے رحم
واں تلک کوئی کسی حیلے سے پہنچا دے مجھے

منھ نہ دکھلاوے، نہ دکھلا، پر بہ اندازِ عتاب
کھول کر پردہ، ذرا آنکھیں ہی دکھلا دے مجھے

२०७

ज़िबस कि मश्क़-ए-तमाशा, जुनूँ 'अलामत है
कुशाद-ओ-बस्त-ए-मिश़:, सेलि-ए-नदामत है

न जानूँ, क्योंकि मिटे दाग़-ए-ता'न-ए-बद 'अह्दी
तुझे कि आइन: भी वरत:-ए-मलामत है

ब पेच-ओ-ताब-ए-हवस, सिल्क-ए-'आफ़ियत मत तोड़
निगाह-ए-'अिज्ज़ सर-ए-रिश्त:-ए-सलामत है

वफ़ा मुक़ाबिल-ओ-दा'वा-ए-'अिश्क़ बे बुनियाद
जुनूँन-ए-साख़्त:-ओ-फ़स्ल-ए-गुल क़यामत है

२०८

लाग़र इतना हूँ, कि गर तू बज़्म में जा दे मुझे
मेरा जिस्म:, देखकर गर कोई बतला दे मुझे

क्या त'अज्जुब है, कि उसको देखकर आजाये रह्म
वाँ तलक कोई किसी हीले से पहुँचा दे मुझे

मुँह न दिखलावे, न दिखला, पर ब अन्दाज़-ए-'अिताब
खोलकर परद:, ज़रा आँखें ही दिखला दे मुझे

یاں تلک میری گرفتاری سے وہ خوش ہے، کہ میں
زلف گر بن جاؤں، تو شانے میں اُلجھا دے مجھے

۲۰۹

بازیچۂ اطفال ہے دنیا، مرے آگے
ہوتا ہے شب و روز تماشا، مرے آگے

ایک کھیل ہے اورنگِ سلیماں، مرے نزدیک
ایک بات ہے اعجازِ مسیحا، مرے آگے

جُز نام، نہیں صورتِ عالم مجھے منظور
جز وہم، نہیں ہستیِ اشیا مرے آگے

ہوتا ہے نہاں گرد میں صحرا، مرے ہوتے
گھستا ہے جبیں خاک پہ دریا، مرے آگے

مت پوچھ، کہ کیا حال ہے میرا، ترے پیچھے
تو دیکھ، کہ کیا رنگ ہے تیرا، مرے آگے

سچ کہتے ہو، خودبین و خودآرا ہوں، نہ کیوں ہوں
بیٹھا ہے بتِ آئینہ سیما، مرے آگے

پھر دیکھیے، اندازِ گل افشانیِ گفتار
رکھ دے کوئی، پیمانۂ و صہبا مرے آگے

याँ तलक मेरी गिरफ़्तारी से वह ख़ुश है, कि मैं
ज़ुल्फ़ गर बन जाऊँ, तो शाने में उलझा दे मुझे

२०९

बाज़ीचः-ए-अत्फ़ाल है दुनिया, मिरे आगे
होता है शब-ओ-रोज़ तमाशा, मिरे आगे

इक खेल है औरंग-ए-सुलैमाँ, मिरे नज़दीक
इक बात है एʻजाज़-ए-मसीहा, मिरे आगे

जुज़ नाम, नहीं सूरत-ए-ʻआलम मुझे मंज़ूर
जुज़ वह्म, नहीं हस्ति-ए-अशिया मिरे आगे

होता है निहाँ गर्द में सहरा, मिरे होते
घिसता है जबीं ख़ाक प दरिया, मिरे आगे

मत पूछ, कि क्या हाल है मेरा, तिरे पीछे
तू देख, कि क्या रँग है तेरा, मिरे आगे

सच कहते हो, ख़ुदबीन-ओ-ख़ुदआरा हूँ, न क्यों हूँ
बैठा है बुत-ए-आइनः सीमा मिरे आगे

फिर देखिये, अन्दाज़-ए-गुल अफ़शानि-ए-गुफ़्तार
रख दे कोई, पैमानः-ओ-सहबा मिरे आगे

نفرت کا گماں گزرے ہے، میں رشک سے گزرا
کیوں کر کہوں، لو نام نہ اُن کا مرے آگے

ایماں مجھے روکے ہے، تو کھینچے ہے مجھے کفر
کعبہ مرے پیچھے ہے، کلیسا مرے آگے

عاشق ہوں، پہ معشوق فریبی ہے مرا کام
مجنوں کو بُرا کہتی ہے لیلا، مرے آگے

خوش ہوتے ہیں، پر وصل میں یوں مر نہیں جاتے
آئی شبِ ہجراں کی تمنا، مرے آگے

ہے موجزن اک قلزمِ خوں، کاش، یہی ہو
آتا ہے، ابھی دیکھیے، کیا کیا، مرے آگے

گو ہاتھ کو جنبش نہیں، آنکھوں میں تو دم ہے
رہنے دو ابھی ساغر و مینا مرے آگے

ہم پیشہ و ہم مشرب وہم راز ہے میرا
غالب کو بُرا کیوں کہو، اچھا، مرے آگے

۲۱۰

کہوں جو حال، تو کہتے ہو، مدعا کہیے
تمہیں کہو، کہ جو تم یوں کہو، تو کیا کہیے

नफ़रत का गुमाँ गुज़रे है, मैं रश्क से गुज़रा
क्योंकर कहूँ, लो नाम न उनका मिरे आगे

ईमाँ मुझे रोके है, तो खेंचे है मुझे कुफ़्र
का'बः मिरे पीछे है, कलीसा मिरे आगे

'आशिक़ हूँ, प मा'शूक़ फ़रेबी है मिरा काम
मजनूँ को बुरा कहती है लैला, मिरे आगे

ख़ुश होते हैं, पर वस्ल में यों मर नहीं जाते
आई शब-ए-हिज्राँ की तमन्ना, मिरे आगे

है मौजज़न इक क़ुल्ज़ुम-ए-ख़ूँ, काश, यही हो
आता है, अभी देखिये, क्या क्या, मिरे आगे

गो हाथ को जुँबिश नहीं, आँखों में तो दम है
रहने दो अभी साग़र-ओ-मीना मिरे आगे

हम पेशः-ओ-हम मश्रब-ओ-हम राज़ है मेरा
ग़ालिब को बुरा क्यों कहो, अच्छा, मिरे आगे

२१०

कहूँ जो हाल, तो कहते हो, मुद्द'आ कहिये
तुम्हीं कहो, कि जो तुम यों कहो, तो क्या कहिये

نہ کہیو طعن سے پھر تم، کہ ہم ستمگر ہیں
مجھے تو خُو ہے، کہ جو کچھ کہو، بجا، کہیے

وہ نیشتر سہی، پر دل میں جب اُتر جاوے
نگاہِ ناز کو پھر کیوں نہ آشنا کہیے

نہیں ذریعۂ راحت، جراحتِ پیکاں
وہ زخمِ تیغ ہے، جس کو کہ دل کشا کہیے

جو مدّعی بنے، اُس کے نہ مدّعی بنیے
جو نا سزا کہے، اُس کو نہ ناسزا کہیے

کہیں حقیقتِ جاں کاہیِ مرض لکھیے
کہیں مصیبتِ ناسازیِ دوا کہیے

کبھی شکایتِ رنجِ گراں نشیں کیجے
کبھی حکایتِ صبرِ گریز پا کہیے

رہے نہ جان، تو قاتل کو خوں بہا دیجے
کٹے زبان، تو خنجر کو مرحبا کہیے

نہیں نگار کو اُلفت، نہ ہو، نگار تو ہے
روانیِ روشِ و مستیِ ادا کہیے

نہیں بہار کو فرصت، نہ ہو، بہار تو ہے
طراوتِ چمن و خوبیِ ہوا کہیے

न कहियो ता'न से फिर तुम, कि, हम सितमगर हैं
मुझे तो ख़ू है, कि जो कुछ कहो, बजा, कहिये

वह नेश्तर सही, पर दिल में जब उतर जावे
निगाह-ए-नाज़ को फिर क्यों न आश्ना कहिये

नहीं ज़रि'अः-ए-राहत, जराहत-ए-पैकाँ
वह ज़ख़्म-ए-तेग़ है, जिसको कि दिलकुशा कहिये

जो मुद्द'ई बने, उसके न मुद्द'ई बनिये
जो नासज़ा कहे, उस को न नासज़ा कहिये

कहीं हक़ीक़त-ए-जाँकाहि-ए-मरज़ लिखिये
कहीं मुसीबत-ए-नासाज़ि-ए-दवा कहिये

कभी शिकायत-ए-रँज-ए-गिराँ नशीं कीजे
कभी हिकायत-ए-सब्र-ए-गुरेज़ पा कहिये

रहे न जान, तो क़ातिल को ख़ूँ बहा दीजे
कटे ज़बान, तो ख़ंजर को मर्हबा कहिये

नहीं निगार को उल्फ़त, न हो, निगार तो है
रवानि-ए-रविश-ओ-मस्ति-ए-अदा कहिये

नहीं बहार को फ़ुर्सत, न हो, बहार तो है
तरावत-ए-चमन-ओ-ख़ूबि-ए-हवा कहिये

سفینہ جب کہ کنارے پہ آ لگا، غالب
خدا سے کیا ستم وجورِ ناخدا کہیے

۲۱۱

رونے سے اور عشق میں بیباک ہو گئے
دھوئے گئے ہم ایسے، کہ بس پاک ہو گئے

صرفِ بہائے مے ہوئے، آلاتِ مے کشی
تھے یہ ہی دو حساب، سو یوں پاک ہو گئے

رُسوائے دہر گو ہوئے، آوارگی سے تم
بارے طبیعتوں کے تو چالاک ہو گئے

کہتا ہے کون نالۂ بلبل کو، بے اثر
پردے میں گل کے لاکھ جگر چاک ہو گئے

پوچھے ہے کیا وجود و عدم اہلِ شوق کا
آپ اپنی آگ کے خس و خاشاک ہو گئے

کرنے گئے تھے اُس سے تغافل کا ہم گلا
کی ایک ہی نگاہ، کہ بس خاک ہو گئے

اِس رنگ سے اُٹھائی کل اُس نے اسد کی لاش
دشمن بھی جس کو دیکھ کے غمناک ہو گئے

सफ़ीनः जबकि कनारे प आ लगा, ग़ालिब
ख़ुदा से क्या सितम-ओ-जौर-ए-नाख़ुदा कहिये

२११

रोने से और 'अिश्क़ में बेबाक हो गये
धोये गये हम ऐसे, कि बस पाक हो गये

सर्फ़-ए-बहा-ए-मै हुये, आलात-ए-मैकशी
थे यह ही दो हिसाब, सो यों पाक हो गये

रुस्वा-ए-दह्‌र गो हुये, आवारगी से तुम
बारे तबी'अतों के तो चालाक हो गये

कहता है कौन नालः-ए-बुलबुल को, बे असर
पर्दे में गुल के लाख जिगर चाक हो गये

पूछे है क्या वुजूद-ओ-'अदम अह्‌ल-ए-शौक़ का
आप अपनी आग के ख़स-ओ-ख़ाशाक हो गये

करने गये थे उससे, तग़ाफ़ुल क़ा हम गिला
की एक ही निगाह, कि बस ख़ाक हो गये

इस रँग से उठाई कल उसने असद की लाश
दुश्मन भी जिसको देख के ग़मनाक हो गये

۲۱۲

نشہ ہا شادابِ رنگ و ساز ہا مستِ طرب
شیشۂ مے سروِ سبزِ جوئبارِ نغمہ ہے

ہمنشیں مت کہہ، کہ برہم کر نہ بزمِ عیشِ دوست
واں تو میرے نالے کو بھی اعتبارِ نغمہ ہے

۲۱۳

عرضِ نازِ شوخیِ دنداں، برائے خندہ ہے
دعوٰئے جمعیتِ احباب، جائے خندہ ہے

ہے عدم میں، غنچہ محوِ عبرتِ انجامِ گل
یک جہاں زانو تامّل در قفائے خندہ ہے

کلفتِ افسردگی کو عیشِ بے تابی حرام
ورنہ دنداں در دل افشردن بنائے خندہ ہے

سوزشِ باطن کے ہیں احباب منکر، ورنہ یاں
دل محیطِ گریہ و لب آشنائے خندہ ہے

२१२

नश्शःहा शादाब-ए-रँग-ओ-साज़हा मस्त-ए-तरब
शीशः-ए-मै सर्व-ए-सब्ज़-ए-जूइबार-ए-नग़्मः है

हमनशीं मत कह, कि, बरहम कर न बज़्मे 'ऐश-ए-दोस्त
वाँ तो मेरे नाले को भी एतिबार-ए-नग़्मः है

२१३

अर्ज़-ए-नाज़-ए-शोख़ि-ए-दँदाँ, बराय ख़न्दः है
दा'वः-ए-जम'इयत-ए-अह्बाब, जा-ए-ख़न्दः है

है 'अदम में, ग़ुंचः महव-ए-'इब्रत-ए-अंजाम-ए-गुल
यक जहाँ ज़ानू तअम्मुल दर क़फ़ा-ए-ख़न्दः है

कुल्फ़त-ए-अफ़सुर्दगी को 'ऐश-ए-बेताबी हराम
वर्नः दँदाँ दरदिल अफ़शुर्दन बिना-ए-ख़न्दः है

सोज़िश-ए-बातिन के हैं अह्बाब मुंकिर, वर्नः याँ
दिल मुहीत-ए-गिरियः-ओ-लब आश्ना-ए-ख़न्दः है

۲۱٤

حسن بے پروا خریدارِ متاعِ جلوہ ہے
آئینہ زانوے فکرِ اختراعِ جلوہ ہے

تا کجا، اے آگہی، رنگِ تماشا باختن
چشمِ وا گردیدہ آغوشِ وداعِ جلوہ ہے

۲۱٥

جب تک دہانِ زخم نہ پیدا کرے کوئی
مشکل، کہ تجھ سے راہِ سخن وا کرے کوئی

عالم غبارِ وحشتِ مجنوں ہے سر بسر
کب تک خیالِ طرۂ لیلا کرے کوئی

افسردگی نہیں طرب انشاے التفات
ہاں، درد بن کے دل میں مگر جا کرے کوئی

رونے سے، اے ندیم، ملامت نہ کر مجھے
آخر کبھی تو عقدۂ دل وا کرے کوئی

چاکِ جگر سے، جب رہِ پرسش نہ وا ہوئی
کیا فائدہ، کہ جیب کو رُسوا کرے کوئی

२१४

हुस्न-ए-बेपरवा ख़रीदार-ए-मता'-ए-जल्वः है
आइनः ज़ानु-ए-फ़िक्र-ए-इख़्तिरा'-ए-जल्वः है

ता कुजा, अय आगही, रँग-ए-तमाशा बाख़्तन
चश्म-ए-वा गर्दीदः आग़ोश-ए-विदा'-ए-जल्वः है

२१५

जब तक दहान-ए-ज़ख़्म न पैदा करे कोई
मुश्किल, कि तुझसे राह-ए-सुख़न वा करे कोई

'आलम ग़ुबार-ए-वह्शत-ए-मजनूँ है सरबसर
कब तक ख़याल-ए-तुर्रः-ए-लैला करे कोई

अफ़्सुर्दगी नहीं तरब इंशा-ए-इल्तिफ़ात
हाँ, दर्द बन के दिल में मगर जा करे कोई

रोने से, अय नदीम, मलामत न कर मुझे
आख़िर कभी तो, 'उक़्दः-ए-दिल वा करे कोई

चाक-ए-जिगर से, जब रह-ए-पुरसिश न वा हुई
क्या फ़ायदः, कि जैब को रुस्वा करे कोई

لختِ جگر سے ہے رگِ ہر خار، شاخِ گل
تا چند باغبانیِ صحرا کرے کوئی

ناکامیِ نگاہ ہے برقِ نظارہ سوز
تو وہ نہیں، کہ تجھ کو تماشا کرے کوئی

ہر سنگ و خشت ہے صدفِ گوہرِ شکست
نقصاں نہیں، جنوں سے جو سودا کرے کوئی

سر بر ہوئی نہ وعدۂ صبر آزما سے عمر
فرصت کہاں، کہ تیری تمنا کرے کوئی

ہے وحشتِ طبیعتِ ایجاد یاس خیز
یہ درد وہ نہیں، کہ نہ پیدا کرے کوئی

بے کاریِ جنوں کو ہے سر پیٹنے کا شغل
جب ہاتھ ٹوٹ جائیں، تو پھر کیا کرے کوئی

حسنِ فروغِ شمعِ سخن دور ہے، اسد
پہلے دلِ گداختہ پیدا کرے کوئی

۲۱٦

ابنِ مریم ہوا کرے کوئی
میرے دکھ کی دوا کرے کوئی

लख़्त-ए-जिगर से है रग-ए-हर ख़ार, शाख़-ए-गुल
ता चन्द बाग़बानि-ए-सहरा करे कोई

नाकामि-ए-निगाह है बर्क़-ए-नज़ार: सोज़
तू वह नहीं, कि तुझको तमाशा करे कोई

हर सँग-ओ-ख़िश्त है सदफ़-ए-गौहर-ए-शिकस्त
नुक़साँ नहीं, जुनूँ से जो सौदा करे कोई

सरबर हुई न वा'द:-ए-सब्र आज़मा से 'उम्र
फ़ुर्सत कहाँ, कि तेरी तमन्ना करे कोई

है वह्शत-ए-तबी'अत-ए-ईजाद यास ख़ेज़
यह दर्द वह नहीं, कि न पैदा करे कोई

बेकारि-ए-जुनूँ को है सर पीटने का शग़्ल
जब हाथ टूट जायें, तो फिर क्या करे कोई

हुस्न-ए-फ़रोग़-ए-शम्'-ए-सुख़न दूर है, असद
पहले दिल-ए-गुदाख़्ता पैदा करे कोई

२१६

इब्न-ए-मरियम हुआ करे कोई
मेरे दुख की दवा करे कोई

شرع و آئین پر مدار سہی
ایسے قاتل کا کیا کرے کوئی

چال، جیسے کڑی کمان کا تیر
دل میں ایسے کے جا کرے کوئی

بات پر واں زبان کٹتی ہے
وہ کہیں اور سنا کرے کوئی

بک رہا ہوں جنوں میں کیا کیا کچھ
کچھ نہ سمجھے، خدا کرے، کوئی

نہ سنو، گر بُرا کہے کوئی
نہ کہو، گر بُرا کرے کوئی

روک لو، گر غلط چلے کوئی
بخش دو، گر خطا کرے کوئی

کون ہے، جو نہیں ہے حاجتمند
کس کی حاجت روا کرے کوئی

کیا کیا خضر نے سکندر سے
اب کسے رہنما کرے کوئی

جب توقع ہی اُٹھ گئی، غالب
کیوں کسی کا گِلا کرے کوئی

शर'-ओ-आईन पर मदार सही
ऐसे क़ातिल का क्या करे कोई

चाल, जैसे कड़ी कमान का तीर
दिल में ऐसे के जा करे कोई

बात पर वाँ ज़बान कटती है
वह कहें और सुना करे कोई

बक रहा हूँ जुनूँ में क्या क्या कुछ
कुछ न समझे, ख़ुदा करे, कोई

न सुनो, गर बुरा कहे कोई
न कहो, गर बुरा करे कोई

रोक लो, गर ग़लत चले कोई
बख़्श दो, गर ख़ता करे कोई

कौन है, जो नहीं है हाजतमन्द
किस की हाजत रवा करे कोई

क्या किया ख़िज़्र ने सिकन्दर से
अब किसे रहनुमा करे कोई

जब तवक़्क़ो'अ ही उठ गई, ग़ालिब
क्यों किसी का गिला करे कोई

۲۱۷

بہت سہی غمِ گیتی، شراب کم کیا ہے
غلامِ ساقیِ کوثر ہوں، مجھ کو غم کیا ہے

تمہاری طرز و روش، جانتے ہیں ہم، کیا ہے
رقیب پر ہے اگر لطف، تو ستم کیا ہے

سخن میں خامۂ غالب کی آتش افشانی
یقیں ہے ہم کو بھی، لیکن اب اُس میں دم کیا ہے

۲۱۸

بباغ پا کر خفقانی، یہ ڈراتا ہے مجھے
سایۂ شاخِ گل، افعی نظر آتا ہے مجھے

جوہرِ تیغ بہ سر چشمۂ دیگر معلوم
ہوں میں وہ سبزہ، کہ زہراب اُگاتا ہے مجھے

مدعا محوِ تماشاے شکستِ دل ہے
آئینہ خانے میں کوئی لیے جاتا ہے مجھے

نالہ سرمایۂ یک عالم و عالم کفِ خاک
آسماں بیضۂ قمری نظر آتا ہے مجھے

२१७

बहुत सही ग़म-ए-गेती, शराब कम क्या है
ग़ुलाम-ए-साक़ि-ए-कौसर हूँ, मुझको ग़म क्या है

तुम्हारी तर्ज़-ओ-रविश, जानते हैं हम, क्या है
रक़ीब पर है अगर लुत्फ़, तो सितम क्या है

सुख़न में ख़ाम:-ए-ग़ालिब की आतश अफ़शानी
यक़ीं है हमको भी, लेकिन अब उसमें दम क्या है

२१८

बाग़ पाकर ख़फ़क़ानी, यह डराता है मुझे
साय:-ए-शाख़-ए-गुल, अफ़'ई नज़र आता है मुझे

जौहर-ए-तेग़ बसर चश्म:-ए-दीगर मा'लूम
हूँ मैं वह सब्ज़:, कि ज़हराब उगाता है मुझे

मुद्'आ महव-ए-तमाशा-ए-शिकस्त-ए-दिल है
आइन:ख़ाने में कोई लिये जाता है मुझे

नाल: सरमाय:-ए-यक 'आलम-ओ-'आलम कफ़-ए-ख़ाक
आस्माँ बैज़:-ए-क़ुम्री नज़र आता है मुझे

زندگی میں تو وہ محفل سے اُٹھا دیتے تھے
دیکھوں، اب مر گئے پر، کون اُٹھاتا ہے مجھے

۲۱۹

رَوندی ہوئی ہے، کوکبۂ شہریار کی
اِترائے کیوں نہ خاک، سرِ رہ گزار کی

جب اُس کے دیکھنے کے لیے آئیں بادشاہ
لوگوں میں کیوں نمود نہ ہو لالہ زار کی

بھوکے نہیں ہیں سیرِ گلستاں کے ہم، ولے
کیوں کر نہ کھائیے، کہ ہوا ہے بہار کی

۲۲۰

ہزاروں خواہشیں ایسی، کہ ہر خواہش پہ دم نکلے
بہت نکلے مرے ارمان، لیکن پھر بھی کم نکلے

ڈرے کیوں میرا قاتل، کیا رہے گا اُس کی گردن پر
وہ خوں، جو چشمِ تر سے، عمر بھر یوں دم بدم نکلے

نکلنا خُلد سے آدم کا سنتے آئے تھے، لیکن
بہت بے آبرو ہوکر ترے کوچے سے ہم نکلے

जिन्दगी में तो वह महफ़िल से उठा देते थे
देखूँ, अब मर गये पर, कौन उठाता है मुझे

२१९

रौंदी हुई है, कौकबः-ए-शहरियार की
इतराये क्यों न ख़ाक, सर-ए-रहगुज़ार की

जब उसके देखने के लिये आयें बादशाह
लोगों में क्यों नुमूद न हो, लालःज़ार की

भूके नहीं हैं सैर-ए-गुलिस्ताँ के हम, वले
क्योंकर न खाइये, कि हवा है बहार की

२२०

हज़ारों ख़्वाहिशें ऐसी, कि हर ख़्वाहिश प दम निकले
बहुत निकले मिरे अर्मान, लेकिन फिर भी कम निकले

डरे क्यों मेरा क़ातिल, क्या रहेगा उसकी गर्दन पर
वह ख़ूँ, जो चश्म-ए-तर से 'अ़म्र भर यों दम बदम निकले

निकलना ख़ुल्द से आदम का सुनते आये थे, लेकिन
बहुत बे आबरू होकर तिरे कूचे से हम निकले

بھرم کھل جائے، ظالم، تیرے قامت کی درازی کا
اگر اِس طرۂ پُر پیچ و خم کا پیچ و خم نکلے

مگر لکھوائے کوئی اُس کو خط، تو ہم سے لکھوائے
ہوئی صبح، اور گھر سے کان پر رکھ کر قلم نکلے

ہوئی اِس دور میں منسوب مجھ سے بادہ آشامی
پھر آیا وہ زمانہ، جو جہاں میں جامِ جم نکلے

ہوئی جن سے توقع، خستگی کی داد پانے کی
وہ ہم سے بھی زیادہ خستۂ تیغِ ستم نکلے

محبت میں نہیں ہے فرق، جینے اور مرنے کا
اُسی کو دیکھ کر جیتے ہیں، جس کافر پہ دم نکلے

کہاں مے خانے کا دروازہ، غالب، اور کہاں واعظ
پر اتنا جانتے ہیں، کل وہ جاتا تھا، کہ ہم نکلے

۲۲۱

کوہ کے ہوں بارِ خاطر، گر صدا ہوجائیے
بے تکلف، اے شرارِ جستہ، کیا ہوجائیے

بیضہ آسا، تنگ بال و پر پہ ہے کنجِ قفس
از سرِ نو زندگی ہو، گر رِہا ہوجائیے

भरम खुल जाये, ज़ालिम, तेरे क़ामत की दराज़ी का
अगर इस तुर्रः-ए-पुर पेच-ओ-ख़म का पेच-ओ-ख़म निकले

मगर लिखवाये कोई उसको ख़त, तो हम से लिखवाये
हुई सुब्ह, और घर से कान पर रख कर क़लम निकले

हुई इस दौर में मंसूब मुझसे बादः आशामी
फिर आया वह ज़मानः, जो जहाँ में जाम-ए-जम निकले

हुई जिन से तवक़्क़ो'अ, ख़स्तगी की दाद पाने की
वह हम से भी ज़ियादः ख़स्तः-ए-तेग़-ए-सितम निकले

महब्बत में नहीं है फ़र्क़, जीने और मरने का
उसी को देख कर जीते हैं, जिस काफ़िर प दम निकले

कहाँ मैख़ाने का दरवाज़ः, ग़ालिब, और कहाँ वा'इज़
पर इतना जानते हैं, कल वह जाता था, कि हम निकले

२२१

कोह के हों बार-ए-ख़ातिर, गर सदा हो जाइये
बेतकल्लुफ़, अय शरार-ए जस्तः, क्या हो जाइये

बैज़ः आसा, तँग बाल-ओ-पर प है कुँज-ए-क़फ़स
अज़ सर-ए-नौ ज़िन्दगी हो, गर रिहा हो जाइये

۲۲۲

مستی بہ ذوقِ غفلتِ ساقی ہلاک ہے
موجِ شراب یک مژۂ خواب ناک ہے

جز زخمِ تیغِ ناز، نہیں دل میں آرزو
جیبِ خیال بھی ترے ہاتھوں سے چاک ہے

جوشِ جنوں سے کچھ نظر آتا نہیں، اسد
صحرا ہماری آنکھ میں یک مشتِ خاک ہے

۲۲۳

لبِ عیسیٰ کی جنبش کرتی ہے گہوارہ جنبانی
قیامت کشتۂ لعلِ بتاں کا خوابِ سنگیں ہے

۲۲٤

آمدِ سیلاب طوفانِ صدائے آب ہے
نقشِ پا جو کان میں رکھتا ہے اُنگلی جادہ سے

بزمِ مے، وحشت کدہ ہے، کس کی چشمِ مست کا
شیشے میں نبضِ پری، پنہاں ہے موجِ بادہ سے

२२२

मस्ती ब ज़ौक़-ए-ग़फ़्लत-ए-साक़ी हलाक है
मौज-ए-शराब यक मिशः-ए-ख़्वाबनाक है

जुज़ ज़ख़्म-ए-तेग़-ए-नाज़, नहीं दिल में आरज़ू
जैब-ए-ख़याल भी तिरे हाथों से चाक है

जोश-ए-जुनूँ से कुछ नज़र आता नहीं, असद
सहरा हमारी आँख में यक मुश्त-ए-ख़ाक है

२२३

लब-ए-'ईसा की जुँबिश करती है गहवारः जुँबानी
क़यामत कुश्तः-ए-ला'ल-ए-बुताँ का ख़्वाब-ए-सँगीं है

२२४

आमद-ए-सैलाब तूफ़ान-ए-सदा-ए-आब है
नक़्श-ए-पा जो कान में रखता है उँगली जादः से

बज़्म-ए-मै, वह्शतकदः है, किसकी चश्म-ए-मस्त का
शीशे में नब्ज़-ए-परी, पिन्हाँ है मौज-ए-बादः से

۲۲۵

ہوں میں بھی تماشائیِ نیرنگِ تمنا
مطلب نہیں کچھ اِس سے، کہ مطلب ہی بر آوے

۲۲۶

سیاہی جیسے گر جاوے دمِ تحریر کاغذ پر
مری قسمت میں یوں تصویر ہے شبہائے ہجراں کی

۲۲۷

ہجومِ نالہ، حیرت، عاجزِ عرضِ یک افغاں ہے
خموشی، ریشۂ صد نیستاں سے خس بدنداں ہے

تکلف برطرف، ہے جاں ستاں تر، لطفِ بد خویاں
نگاہِ بے حجابِ ناز، تیغِ تیزِ عُریاں ہے

ہوئی یہ کثرتِ غم سے تلف، کیفیتِ شادی
کہ صبحِ عید مجھ کو بدتر از چاکِ گریباں ہے

دل و دیں نقد لا، ساقی سے گر سودا کیا چاہے
کہ اِس بازار میں، ساغر متاعِ دست گرداں ہے

२२५

हूँ मैं भी तमाशाइ-ए-नैरँग-ए-तमन्ना
मतलब नहीं कुछ इससे, कि मतलब ही बर आवे

२२६

सियाही जैसे गिर जावे दम-ए-तह्रीर काग़ज़ पर
मिरी क़िस्मत में यों तस्वीर है शबहा-ए-हिज्राँ की

२२७

हुजूम-ए-नालः, हैरत, 'आजिज़-ए-'अर्ज़-ए-यक अफ़्शाँ है
ख़मोशी, रेशः-ए-सद् नैसिताँ से ख़स ब दन्दाँ है

तकल्लुफ़ बर तरफ़, है जाँसिताँ तर, लुत्फ़-ए-बद्ख़ूयाँ
निगाह-ए-बेहिजाब-ए-नाज़, तेग़-ए-तेज़-ए-'उरियाँ है

हुई यह कस्रत-ए-ग़म से तलफ़, कैफ़ियत-ए-शादी
कि सुबूह-ए-'ईद मुझको बदतर अज़ चाक-ए-गरीबाँ है

दिल-ओ-दीं नक़्द ला, साक़ी से गर सौदा किया चाहे
कि इस बाज़ार में, साग़र मता'-ए-दस्त गरदाँ है

غم آغوشِ بلا میں پرورش دیتا ہے، عاشق کو
چراغِ روشن اپنا، قلزمِ صرصر کا مرجاں ہے

۲۲۸

خموشیوں میں تماشا ادا نکلتی ہے
نگاہ، دل سے ترے، سرمہ سا نکلتی ہے

فشارِ تنگیِ خلوت سے بنتی ہے شبنم
صبا جو غنچے کے پردے میں جا نکلتی ہے

نہ پوچھ سینۂ عاشق سے آبِ تیغِ نگاہ
کہ زخمِ روزنِ در سے ہوا نکلتی ہے

۲۲۹

جس جا نسیم شانہ کشِ زلفِ یار ہے
نافہ دماغ آہوے دشتِ تتار ہے

کس کا سراغِ جلوہ ہے حیرت کو، اے خدا
آئینہ فرشِ ششِ جہتِ انتظار ہے

ہے ذرہ ذرہ تنگیِ جا سے غبارِ شوق
گر دام یہ ہے، وسعتِ صحرا شکار ہے

ग़म आग़ोश-ए-बला में परवरिश देता है, 'आशिक़ को
चराग़-ए-रौशन अपना, क़ुल्ज़ुम-ए-सरसर का मरजाँ है

२२८

ख़मोशियों में तमाशा अदा निकलती है
निगाह, दिल से तिरे, सुर्मः सा निकलती है

फ़िशार-ए-तँगि-ए-ख़ल्वत से बनती है शबनम
सबा जो ग़ुंचे के पर्दे में जा निकलती है

न पूछ सीनः-ए-'आशिक़ से आब-ए-तेग़-ए-निगाह
कि ज़ख़्म-ए-रौज़न-ए-दर से हवा निकलती है

२२९

जिस जा नसीम शानः कश-ए-ज़ुल्फ़-ए-यार है
नाफ़ः दिमाग़ आहू-ए-दश्त-ए-ततार है

किसका सुराग़-ए-जल्वः है हैरत को, अय ख़ुदा
आईनः फ़र्श-ए-शश जिहत-ए-इन्तिज़ार है

है ज़र्रः ज़र्रः तँगि-ए-जा से ग़ुबार-ए-शौक़
गर दाम यह है, वुस'अत-ए-सह्रा शिकार है

دل مدعی و دیدہ بنا مدعا علیہ
نظارے کا مقدمہ پھر روبکار ہے

چھڑکے ہے شبنم آئینۂ برگِ گل پر آب
اے عندلیب، وقتِ وداعِ بہار ہے

پچ آ پڑی ہے وعدۂ دلدار کی مجھے
وہ آئے یا نہ آئے پہ یاں اِنتظار ہے

بے پردہ سُوے وادیِ مجنوں گزر نہ کر
ہر ذرے کے نقاب میں دل بیقرار ہے

اے عندلیب، یک کفِ خس بہرِ آشیاں
طوفانِ آمد آمدِ فصلِ بہار ہے

دل مت گنوا، خبر نہ سہی، سیر ہی سہی
اے بے دماغ، آئینہ تمثال دار ہے

غفلت کفیلِ عمر و اسد ضامنِ نشاط
اے مرگِ ناگہاں، تجھے کیا اِنتظار ہے

۲۳۰

آئینہ کیوں نہ دوں، کہ تماشا کہیں جسے
ایسا کہاں سے لاؤں، کہ تجھ سا کہیں جسے

दिल मुद्द'अि-ओ-दीदः बना मुद्द'आ 'अलैह
नज़्ज़ारे का मुक़द्दमः फिर रू ब कार है

छिड़के है शबनम आईनः-ए-बर्ग-ए-गुल पर आब
अय 'अन्दलीब, वक़्त-ए-विदा'-ए-बहार है

पच आ पड़ी है वा'दः-ए-दिलदार की मुझे
वह आये या न आये प याँ इन्तिज़ार है

बेपर्दः सू-ए-वादि-ए-मजनूँ गुज़र न कर
हर ज़र्रे के निक़ाब में दिल बेक़रार है

अय 'अन्दलीब यक कफ़-ए-ख़स बहर-ए-आशियाँ
तूफ़ान-ए-आमद आमद-ए-फ़स्ल-ए-बहार है

दिल मत गँवा, ख़बर न सही, सैर ही सही
अय बे दिमाग़, आइनः तिम्साल दार है

ग़फ़्लत कफ़ील-ए-'अ़ुम्र-ओ-असद ज़ामिन-ए-नशात
अय मर्ग-ए-नागहाँ, तुझे क्या इन्तिज़ार है

२३०

आईनः क्यों न दूँ, कि तमाशा कहें जिसे
ऐसा कहाँ से लाऊँ, कि तुझ सा कहें जिसे

حسرت نے لا رکھا، تری بزمِ خیال میں
گلدستۂ نگاہ، سویدا کہیں جسے

پھونکا ہے کس نے گوشِ محبت میں، اے خدا
افسونِ انتظار، تمنا کہیں جسے

سر پر ہجومِ دردِ غریبی سے، ڈالیے
وہ ایک مشتِ خاک، کہ صحرا کہیں جسے

ہے چشمِ تر میں حسرتِ دیدار سے نہاں
شوقِ عناں گسیختہ، دریا کہیں جسے

درکار ہے، شگفتنِ گلہائے عیش کو
صبحِ بہار، پنبۂ مینا کہیں جسے

غالب، بُرا نہ مان، جو واعظ بُرا کہے
ایسا بھی کوئی ہے، کہ سب اچھا کہیں جسے

۲۳۱

شبنم بہ گلِ لالہ، نہ خالی ز ادا ہے
داغِ دلِ بے درد، نظر گاہِ حیا ہے

دل خوں شدۂ کشمکشِ حسرتِ دیدار
آئینہ بہ دستِ بتِ بدمستِ حنا ہے

हस्रत ने ला रखा, तिरी बज़्म-ए-ख़याल में
गुल्दस्तः-ए-निगाह, सुवैदा कहें जिसे

फूँका है किसने गोश-ए-महब्बत में, अय ख़ुदा
अफ़्सून-ए-इन्तिज़ार, तमन्ना कहें जिसे

सर पर हुजूम-ए-दर्द-ए-ग़रीबी से, डालिये
वह एक मुश्त-ए-ख़ाक, कि सह्रा कहें जिसे

है चश्म-ए-तर में हस्रत-ए-दीदार से निहाँ
शौक़े 'अिनाँ गुसेख़्तः, दरिया कहें जिसे

दरकार है, शिगुफ़्तन-ए-गुलहा-ए-'ऐश को
सुब्ह-ए-बहार, पँबः-ए-मीना कहें जिसे

ग़ालिब, बुरा न मान, जो वा'अिज़ बुरा कहे
ऐसा भी कोई है, कि सब अच्छा कहें जिसे

२३१

शबनम ब गुल-ए-लालः न ख़ाली जि अदा है
दाग़-ए-दिल-ए-बे दर्द नज़र गाह-ए-हया है

दिल ख़ूँ शुदः-ए-कश्मकश-ए-हस्रत-ए-दीदार
आईनः बदस्त-ए-बुत-ए-बदमस्त-ए-हिना है

شعلے سے نہ ہوتی، ہوسِ شعلہ نے جو کی
جی کس قدر افسردگیِ دل پہ جلا ہے

تمثال میں تیری، ہے وہ شوخی، کہ بصد ذوق
آئینہ، بہ اندازِ گل، آغوش کشا ہے

قمری کفِ خاکستر و بلبل قفسِ رنگ
اے نالہ، نشانِ جگرِ سوختہ کیا ہے

خو نے تری افسردہ کیا، وحشتِ دل کو
معشوقی و بے حوصلگی، طرفہ بلا ہے

مجبوری و دعوائے گرفتاریِ اُلفت
دستِ تہِ سنگ آمدہ پیمانِ وفا ہے

معلوم ہوا حالِ شہیدانِ گزشتہ
تیغِ ستم آئینۂ تصویر نما ہے

اے پرتوِ خورشیدِ جہاں تاب، اِدھر بھی
سایے کی طرح ہم پہ عجب وقت پڑا ہے

ناکردہ گناہوں کی بھی حسرت کی ملے داد
یارب، اگر ان کردہ گناہوں کی سزا ہے

بیگانگیِ خلق سے بے دل نہ ہو، غالب
کوئی نہیں تیرا، تو میری جان، خدا ہے

शो'ले से न होती, हवस-ए-शो'लः ने जो की
जी किस क़दर अफ़्सुर्दगि-ए-दिल प जला है

तिम्साल में तेरी, है वह शोख़ी, कि बसद ज़ौक़
आईनः ब अन्दाज़-ए-गुल, आग़ोश कुशा है

क़ुम्री कफ़-ए-ख़ाकिस्तर-ओ-बुलबुल क़फ़स-ए-रँग
अय नालः, निशान-ए-जिगर-ए-सोख़्तः क्या है

ख़ू ने तिरी अफ़सुर्दः किया, वह्शत-ए-दिल को
मा'शूक़ि-ओ-बेहौसलगी, तुरफ़ः बला है

मजबूरि-ओ-दा'वा-ए-गिरफ़्तारि-ए-उल्फ़त
दस्त-ए-तह-ए-सँग आमदः पैमान-ए-वफ़ा है

मा'लूम हुआ हाल-ए-शहीदान-ए-गुज़श्तः
तेग़-ए-सितम आईनः-ए-तस्वीर नुमा है

अय परतव-ए-ख़ुर्शीद-ए-जहाँ ताब, इधर भी
साये की तरह हम प 'अजब वक़्त पड़ा है

नाकरदः गुनाहों की भी हस्रत की मिले दाद
यारब, अगर इन करदः गुनाहों की सज़ा है

बेगानगि-ए-ख़ल्क़ से बेदिल न हो, ग़ालिब
कोई नहीं तेरा, तो मिरी जान, ख़ुदा है

منظور تھی یہ شکل، تجلّی کو نور کی
قسمت کھلی ترے قد و رُخ سے ظہور کی

اک خونچکاں کفن میں کروڑوں بناؤ ہیں
پڑتی ہے آنکھ، تیرے شہیدوں پہ، حور کی

واعظ نہ تم پیو، نہ کسی کو پلا سکو
کیا بات ہے تمہاری شرابِ طہور کی

لڑتا ہے مجھ سے حشر میں قاتل، کہ کیوں اُٹھا
گویا، ابھی سنی نہیں آواز صور کی

آمد بہار کی ہے، جو بلبل ہے نغمہ سنج
اُڑتی سی اک خبر ہے، زبانی طیور کی

گو واں نہیں، پہ واں کے نکالے ہوئے تو ہیں
کعبے سے اِن بتوں کو بھی نسبت ہے دور کی

کیا فرض ہے، کہ سب کو ملے ایک سا جواب
آؤ نہ، ہم بھی سیر کریں کوہِ طور کی

گرمی سہی کلام میں، لیکن نہ اِس قدر
کی جس سے بات، اُس نے شکایت ضرور کی

२३२

मंज़ूर थी यह शक्ल, तजल्ली को नूर की
क़िस्मत खुली तिरे क़द-ओ-रुख़ से ज़ुहूर की

इक ख़ूँ चकाँ कफ़न में करोड़ों बनाव हैं
पड़ती है आँख, तेरे शहीदों प, हूर की

वा'इज़ न तुम पियो, न किसी को पिला सको
क्या बात है तुम्हारी शराब-ए-तुहूर की

लड़ता है मुझसे हश्र में क़ातिल, कि क्यों उठा
गोया, अभी सुनी नहीं आवाज़ सूर की

आमद बहार की है, जो बुलबुल है नग़्मः सँज
उड़ती सी इक ख़बर है, ज़बानी तुयूर की

गो वाँ नहीं, प वाँ के निकाले हुये तो हैं
का'बे से इन बुतों को भी निस्बत है दूर की

क्या फ़र्ज़ है, कि सब को मिले एक सा जवाब
आओ न, हम भी सैर करें कोह-ए-तूर की

गर्मी सही कलाम में, लेकिन न इस क़दर
की जिससे बात, उसने शिकायत ज़ुरूर की

غالب، گر اِس سفر میں مجھے ساتھ لے چلیں
حج کا ثواب نذر کروں گا حضور کی

۲۳۳

غم کھانے میں بودا، دلِ ناکام، بہت ہے
یہ رنج، کہ کم ہے مے گلفام، بہت ہے

کہتے ہوئے ساقی سے حیا آتی ہے، ورنہ
ہے یوں، کہ مجھے دُردِ تہِ جام بہت ہے

نے تیر کماں میں ہے، نہ صیاد کمیں میں
گوشے میں قفس کے، مجھے آرام بہت ہے

کیا زُہد کو مانوں، کہ نہ ہو گرچہ ریائی
پاداشِ عمل کی طمع خام بہت ہے

ہیں اہلِ خرد کس روشِ خاص پہ نازاں
پابستگیِ رسم و رہِ عام بہت ہے

زمزم ہی پہ چھوڑو، مجھے کیا طوفِ حرم سے
آلودہ بہ مے، جامۂ احرام، بہت ہے

ہے قہر گر اب بھی نہ بنے بات، کہ اُن کو
اِنکار نہیں اور مجھے اِبرام بہت ہے

ग़ालिब, गर इस सफ़र में मुझे साथ ले चलें
हज का सवाब नज़्र करूँगा हुज़ूर की

२३३

ग़म खाने में बोदा, दिल-ए-नाकाम, बहुत है
यह रँज, कि कम है मै-ए-गुल्फ़ाम, बहुत है

कहते हुये साक़ी से हया आती है, वर्नः
है यों, कि मुझे दुर्द-ए-तह-ए-जाम बहुत है

ने तीर कमाँ में है, न सय्याद कमीं में
गोशे में क़फ़स के, मुझे आराम बहुत है

क्या ज़ोह्द को मानूँ, कि न हो गरचेः रियाई
पादाश-ए-'अमल की तम'-ए-ख़ाम बहुत है

हैं अहल-ए-ख़िरद किस रविश-ए-ख़ास प नाज़ाँ
पा बस्तगि-ए-रस्म-ओ-रह-ए-'आम बहुत है

ज़मज़म ही प छोड़ो, मुझे क्या तौफ़-ए-हरम से
आलूदः ब मै जामः-ए-एह्राम, बहुत है

है क़ेह्र गर अब भी न बने बात, कि उनको
इंकार नहीं और मुझे इब्राम बहुत है

خوں ہو کے جگر آنکھ سے ٹپکا نہیں، اے مرگ
رہنے دے مجھے یاں، کہ ابھی کام بہت ہے

ہوگا کوئی ایسا بھی، کہ غالب کو نہ جانے
شاعر تو وہ اچھا ہے، پہ بدنام بہت ہے

۲۳٤

مدت ہوئی ہے، یار کو مہماں کیے ہوئے
جوشِ قدح سے، بزم چراغاں کیے ہوئے

کرتا ہوں جمع پھر، جگرِ لخت لخت کو
عرصہ ہوا ہے دعوتِ مژگاں کیے ہوئے

پھر وضعِ احتیاط سے رُکنے لگا ہے دم
برسوں ہوئے ہیں چاک گریباں کیے ہوئے

پھر گرمِ نالہ ہائے شرر بار ہے نفس
مدت ہوئی ہے سیرِ چراغاں کیے ہوئے

پھر پرسشِ جراحتِ دل کو چلا ہے عشق
سامانِ صد ہزار نمکداں کیے ہوئے

پھر بھر رہا ہے خامۂ مژگاں، بہ خونِ دل
سازِ چمن طرازیِ داماں کیے ہوئے

ख़ूँ होके जिगर आँख से टपका नहीं, अय मर्ग
रहने दे मुझे याँ, कि अभी काम बहुत है

होगा कोई ऐसा भी, कि ग़ालिब को न जाने
शा'अिर तो वह अच्छा है, प बदनाम बहुत है

२३४

मुद्दत हुई है यार को मेह्माँ किये हुये
जोश-ए-क़दह से, बज़्म चराग़ाँ किये हुये

करता हूँ जम'अ फिर, जिगर-ए-लख़्त लख़्त को
'अरसः हुआ है दा'वत-ए-मिश्गाँ किये हुये

फिर वज़'-ए-एहतियात से रुकने लगा है दम
बरसों हुये हैं चाक गरीबाँ किये हुये

फिर गर्म-ए-नालःहा-ए-शरर बार है नफ़स
मुद्दत हुई है सैर-ए-चराग़ाँ किये हुये

फिर पुरसिश-ए-जराहत-ए-दिल को चला है 'अिश्क़
सामान-ए-सद हज़ार नमकदाँ किये हुये

फिर भर रहा है ख़ामः-ए-मिश्गाँ, बख़ून-ए-दिल
साज़-ए-चमन तराज़ि-ए-दामाँ किये हुये

باہم دگر ہوئے ہیں دل و دیدہ پھر رقیب
نظارہ و خیال کا ساماں کیے ہوئے

دل پھر طوافِ کوے ملامت کو جائے ہے
پندار کا صنم کدہ ویراں کیے ہوئے

پھر شوق کررہا ہے خریدار کی طلب
عرضِ متاعِ عقل و دل و جاں کیے ہوئے

دوڑے ہے پھر ہر ایک گل و لالہ پر خیال
صد گلستاں نگاہ کا ساماں کیے ہوئے

پھر چاہتا ہوں نامۂ دلدار کھولنا
جاں نذرِ دل فریبیِ عنواں کیے ہوئے

مانگے ہے پھر، کسی کو لبِ بام پر، ہوس
زلفِ سیاہ رُخ پہ پریشاں کیے ہوئے

چاہے ہے پھر، کسی کو مقابل میں، آرزو
سُرمے سے تیز دشنۂ مژگاں کیے ہوئے

اک نوبہارِ ناز کو تاکے ہے پھر، نگاہ
چہرہ فروغِ مے سے گلستاں کیے ہوئے

پھر، جی میں ہے کہ در پہ کسی کے پڑے رہیں
سر زیرِ بارِ منتِ درباں کیے ہوئے

बाहम दिगर हुये हैं दिल-ओ-दीद: फिर रक़ीब
नज़्ज़ार:-ओ-ख़याल का सामाँ किये हुये

दिल फिर तवाफ़-ए-कू-ए-मलामत को जाये है
पिन्दार का सनमकद: वीराँ किये हुये

फिर शौक़ कर रहा है ख़रीदार की तलब
'अर्ज़-ए-मता'-ए-'अक़्ल-ओ-दिल-ओ-जाँ किये हुये

दौड़े है फिर हर एक गुल-ओ-लाल: पर ख़याल
सद गुलसिताँ निगाह का सामाँ किये हुये

फिर चाहता हूँ नाम:-ए-दिलदार खोलना
जाँ नज़र-ए-दिल फ़रेबि-ए-'उन्वाँ किये हुये

माँगे है फिर, किसी को लब-ए-बाम पर, हवस
ज़ुल्फ़-ए-सियाह रुख़ प परीशाँ किये हुये

चाहे है फिर किसी को मुक़ाबिल में आरज़ू
सुरमे से तेज़ दश्न:-ए-मिश़गाँ किये हुये

इक नौबहार-ए-नाज़ को ताके है फिर, निगाह
चेह्र: फ़रोग़-ए-मै से गुलिस्ताँ किये हुये

फिर, जी में है कि दर प किसी के पड़े रहें
सर ज़ेर-ए-बार-ए-मिन्नत-ए-दरबाँ किये हुये

جی ڈھونڈتا ہے پھر وہی فرصت، کہ رات دن
بیٹھے رہیں تصورِ جاناں کیے ہوئے

غالب، ہمیں نہ چھیڑ کہ پھر جوشِ اشک سے
بیٹھے ہیں ہم تہیۂ طوفاں کیے ہوئے

۲۳۵

نویدِ امن ہے، بے دادِ دوست، جاں کے لیے
رہی نہ طرزِ ستم کوئی آسماں کے لیے

بلا سے گر مژۂ یار تشنۂ خوں ہے
رکھوں کچھ اپنی بھی مژگانِ خوں فشاں کے لیے

وہ زندہ ہم ہیں، کہ ہیں روشناسِ خلق، اے خضر
نہ تم، کہ چور بنے عمرِ جاوداں کے لیے

رہا بلا میں بھی میں مبتلائے آفتِ رشک
بلائے جاں ہے ادا تیری اک جہاں کے لیے

فلک نہ دور رکھ اُس سے مجھے، کہ میں ہی نہیں
درازدستیِ قاتل کے امتحاں کے لیے

مثال یہ مری کوشش کی ہے، کہ مرغِ اسیر
کرے قفس میں فراہم خس آشیاں کے لیے

जी ढूण्डता है फिर वही फ़ुर्सत, कि रात दिन
बैठे रहें तसव्वुर-ए-जानाँ किये हुये

ग़ालिब, हमें न छेड़ कि फिर जोश-ए-अश्क से
बैठे हैं हम तहय्यः-ए-तूफ़ाँ किये हुये

२३५

नवेद-ए-अम्न है बेदाद-ए-दोस्त, जाँ के लिये
रही न तर्ज़-ए-सितम कोई आस्माँ के लिये

बला से गर मिश़ः-ए-यार तश्नः-ए-ख़ूँ है
रखूँ कुछ अपनी भी मिश़गान-ए-ख़ूँ फ़िशाँ के लिये

वह ज़िन्दः हम हैं, कि हैं रूशनास-ए-ख़ल्क़, अय ख़िज़्र
न तुम, कि चोर बने 'अुम्र-ए-जाविदाँ के लिये

रहा बला में भी मैं मुब्तिला-ए-आफ़त-ए-रश्क
बला-ए-जाँ है अदा तेरी इक जहाँ के लिये

फ़लक न दूर रख उस से मुझे, कि मैं ही नहीं
दराज़ दस्ति-ए-क़ातिल के इम्तिहाँ के लिये

मिसाल यह मिरी कोशिश की है, कि मुर्ग़-ए-असीर
करे क़फ़स में फ़राहम ख़स आशियाँ के लिये

گدا سمجھ کے وہ چپ تھا، مری جو شامت آئے
اُٹھا، اور اُٹھ کے قدم، میں نے پاسباں کے لیے

بہ قدرِ شوق نہیں، ظرفِ تنگنائے غزل
کچھ اور چاہیے وسعت، مرے بیاں کے لیے

دیا ہے خلق کو بھی، تا اُسے نظر نہ لگے
بنا ہے عیش تجمل حسین خاں کے لیے

زباں پہ بارِ خدایا، یہ کس کا نام آیا
کہ میرے نطق نے بوسے مری زباں کے لیے

نصیرِ دولت و دیں، اور معینِ ملت و ملک
بنا ہے چرخِ بریں جس کے آستاں کے لیے

زمانہ عہد میں اُس کے ہے محوِ آرائش
بنیں گے اور ستارے اب آسماں کے لیے

ورق تمام ہوا اور مدح باقی ہے
سفینہ چاہیے اس بحرِ بیکراں کے لیے

ادائے خاص سے غالب ہوا ہے نکتہ سرا
صلائے عام ہے یارانِ نکتہ داں کے لیے

गदा समझके वह चुप था, मिरी जो शामत आये
उठा, और उठके क़दम, मैं ने पास्बाँ के लिये

बक़द्र -ए- शौक़ नहीं, ज़र्फ़ -ए- तँगना -ए- ग़ज़ल
कुछ और चाहिये वुस'अत, मिरे बयाँ के लिये

दिया है ख़ल्क़ को भी, ता उसे नज़र न लगे
बना है 'ऐश तजम्मुल हुसैन खाँ के लिये

ज़बाँ प बार-ए-ख़ुदाया, यह किसका नाम आया
कि मेरे नुत्क़ ने बोसे मिरी ज़बाँ के लिये

नसीर-ए-दौलत-ओ-दीं, और मु'ईन-ए-मिल्लत-ओ-मुल्क
बना है चर्ख़-ए-बरीं जिसके आस्ताँ के लिये

ज़मान: 'अहद में उसके है महव-ए-आराइश
बनेंगे और सितारे अब आस्माँ के लिये

वरक़ तमाम हुआ और मद्ह बाक़ी है
सफ़ीन: चाहिये इस बह्र-ए-बेकराँ के लिये

अदा-ए-ख़ास से ग़ालिब हुआ है नुक्त:सरा
सलाये आम है यारान-ए-नुक्त:दाँ के लिये

ضمیمہ

۱

قطعہ

گئے وہ دن ، کہ نادانستہ غیروں کی وفاداری
کیا کرتے تھے تم تقریر، ہم خاموش رہتے تھے

بس، اب بگڑے پہ کیا شرمندگی، جانے دو، مل جاؤ
قسم لو ہم سے، گر یہ بھی کہیں، کیوں ہم نہ کہتے تھے

ज़मीम :

१

क़त'ऋ :

गये वह दिन, कि नादानिस्तः ग़ैरों की वफ़ादारी
किया करते थे तुम तक़रीर, हम ख़ामोश रहते थे

बस, अब बिगड़े प क्या शर्मिन्दगी, जाने दो मिल जाओ
क़सम लो हमसे, गर यह भी कहें, क्यों हम न कहते थे

۲

قطعہ

کلکتے کا جو ذکر کیا تو نے ہم نشیں
اک تیر میرے سینے میں مارا، کہ ہائے ہائے

وہ سبزہ زار ہائے مطرا، کہ ہے غضب
وہ نازنیں بتانِ خودآرا، کہ ہائے ہائے

صبر آزما وہ اُن کی نگاہیں، کہ حف نظر
طاقت رُبا وہ اُن کا اشارا، کہ ہائے ہائے

وہ میوہ ہائے و تازہ و شیریں کہ واہ واہ
وہ بادہ ہائے ناب و گوارا، کہ ہائے ہائے

۳

اپنا احوالِ دلِ زار کہوں یا نہ کہوں
ہے حیا مانعِ اظہار کہوں یا نہ کہوں

نہیں کرنے کا میں تقریر، ادب سے باہر
میں بھی ہوں واقفِ اسرار، کہوں یا نہ کہوں

२

क़त'अ:

क्लकत्ते का जो ज़िक्र किया तू ने हमनशीं
इक तीर मेरे सीने में मारा, कि हाय हाय

वह सब्ज़:ज़ारहा-ए-मुतर्र:, कि है ग़ज़ब
वह नाज़नीं बुतान-ए-ख़ुदआरा, कि हाय हाय

सब्र आज़मा वह उनकी निगाहें, कि हफ़ नज़र
ताक़त रुबा वह उनका इशारा, कि हाय हाय

वह मेव:हा-ए-ताज़:-ओ-शीरीं कि वाह वाह
वह बाद:हा-ए-नाब-ओ-गवारा, कि हाय हाय

३

अपना अह्वाल-ए-दिल-ए-ज़ार कहूँ या न कहूँ
है हया माने'-ए-इज़्हार कहूँ या न कहूँ

नहीं करने का मैं तक़रीर, अदब से बाहर
मैं भी हूँ वाक़िफ़-ए-असार, कहूँ या न कहूँ

شکوہ سمجھو اسے، یا کوئی شکایت سمجھو
اپنی ہستی سے ہوں بیزار، کہوں یا نہ کہوں

اپنے دل ہی سے میں احوالِ گرفتاریِ دل
جب نہ پاؤں کوئی غم‌خوار، کہوں یا نہ کہوں

دل کے ہاتھوں سے، کہ ہے دشمنِ جانی اپنا
ہوں اک آفت میں گرفتار، کہوں یا نہ کہوں

میں تو دیوانہ ہوں، اور ایک جہاں ہے غماز
گوش ہیں در پسِ دیوار، کہوں یا نہ کہوں

آپ سے وہ مرا احوال نہ پوچھے، تو اسد
حسبِ حال اپنے پھر اشعار، کہوں یا نہ کہوں

٤

ممکن نہیں، کہ بھول کے بھی آرمیدہ ہوں
میں دشتِ غم میں، آہوے صیاد دیدہ ہوں

ہوں دردمند، جبر ہو یا اختیار ہو
گہ نالۂ کشیدہ، گہ اشکِ چکیدہ ہوں

جاں لب پہ آئی، تو بھی نہ شیریں ہوا دہن
از بسکہ، تلخیِ غمِ ہجراں چشیدہ ہوں

शिक्व: समझो इसे, या कोई शिकायत समझो
अपनी हस्ती से हूँ बेज़ार, कहूँ या न कहूँ

अपने दिल ही से मैं अह्वाल-ए-गिरफ़्तारि-ए-दिल
जब न पाऊँ कोई ग़मख़्वार, कहूँ या न कहूँ

दिल के हाथों से, कि है दुश्मन-ए-जानी अपना
हूँ इक आफ़त में गिरफ़्तार, कहूँ या न कहूँ

मैं तो दीवान: हूँ, और एक जहाँ है ग़म्माज़
गोश हैं दर पस-ए-दीवार, कहूँ या न कहूँ

आप से वह मिरा अह्वाल न पूछे, तो असद
हस्ब-ए-हाल अपने फिर अश'आर कहूँ या न कहूँ

४

मुमकिन नहीं, कि भूलके भी आर्मीद: हूँ
मैं दश्त-ए-ग़म में आहू-ए-सय्याद दीद: हूँ

हूँ दर्दमन्द, जब्र हो या इख़्तियार हो
गह नाल:-ए-कशीद:, गह अश्क-ए-चकीद: हूँ

जाँ लब प आई, तो भी न शीरीं हुआ दहन
अज़ बसकि, तल्ख़ि-ए-ग़म-ए-हिजराँ चशीद: हूँ

نے سبحہ سے علاقہ، نہ ساغر سے رابطہ
میں معرضِ مثال میں، دستِ بریدہ ہوں

ہوں خاکسار، پر نہ کسی سے ہے مجھ کو لاگ
نے دانۂ فتادہ ہوں، نے دام چیدہ ہوں

جو چاہیے، نہیں وہ مری قدر و منزلت
میں یوسفِ بقیمتِ اول خریدہ ہوں

ہر گز کسی کے دل میں نہیں ہے مری جگہ
ہوں میں کلامِ نغز، ولے ناشنیدہ ہوں

اہلِ ورع کے حلقے میں ہر چند ہوں ذلیل
پر عاصیوں کے فرقے میں، میں بر گزیدہ ہوں

پانی سے سگ گزیدہ ڈرے جس طرح، اسد
ڈرتا ہوں آئینے سے، کہ مردم گزیدہ ہوں

۵

محفلِ شمع عذاراں میں جو آجاتا ہوں
شمع ساں میں تہِ دامانِ صبا جاتا ہوں

ہووے ہے جادۂ رہ، رشتۂ گوہر ہر گام
جس گزرگاہ میں، میں آبلہ پا جاتا ہوں

ने सुबूह: से 'अिलाक़:, न साग़र से राब्त:
मैं मा'रिज़-ए-मिसाल में, दस्त-ए-बुरीद: हूँ

हूँ ख़ाकसार, पर न किसी से है मुझको लाग
ने दान:-ए-फ़ुताद: हूँ, ने दाम चीद: हूँ

जो चाहिये, नहीं वह मिरी क़द्र-ओ-मंज़िलत
मैं यूसुफ़-ए-बक़ीमत-ए-अव्वल ख़रीद: हूँ

हरगिज़ किसी के दिल में नहीं है मिरी जगह
हूँ मैं कलाम-ए-नग़्ज़, वले नाशुनीद: हूँ

अह्ल-ए-वर'अ के हल्के में हरचन्द हूँ ज़लील
पर 'आसियों के फ़िर्क़े में, मैं बरगुज़ीद: हूँ

पानी से सग गज़ीद: डरे जिस तरह, असद
डरता हूँ आइने से, कि मर्दुम गज़ीद: हूँ

५

मज्लिस-ए-शम्'अ 'अिज़ाराँ में जो आ जाता हूँ
शम्'अ साँ मैं तह-ए-दामान-ए-सबा जाता हूँ

होवे है जाद:-ए-रह, रिश्त:-ए-गौहर हर गाम
जिस गुज़रगाह में, मैं आबल: पा जाता हूँ

سر گراں مجھ سے سبک روکے نہ رہنے سے رہو
کہ بہ یک جنبشِ لب مثلِ صدا جاتا ہوں

٦

میں ہوں مشتاقِ جفا، مجھ پہ جفا اور سہی
تم ہو بیداد سے خوش، اس سے سوا اور سہی

غیر کی مرگ کا غم کس لیے، اے غیرتِ ماہ
ہیں ہوس پیشہ بہت، وہ نہ ہوا، اور سہی

تم ہو بت، پھر تمہیں پندارِ خدائی کیوں ہے
تم خداوند ہی کہلاؤ، خدا اور سہی

حسن میں حور سے بڑھ کر نہیں ہونے کے کبھی
آپ کا شیوہ و انداز و ادا اور سہی

تیرے کوچے کا ہے مائل دلِ مضطر میرا
کعبہ اک اور سہی، قبلہ نما اور سہی

کوئی دنیا میں مگر باغ نہیں ہے، واعظ
خُلد بھی باغ ہے، خیر آب و ہوا اور سہی

کیوں نہ فردوس میں دوزخ کو ملالیں، یارب
سیر کے واسطے تھوڑی سی فضا اور سہی

सरगिराँ मुझसे सुबुक रौ के न रहने से रहो
कि बयक जुँबिश-ए-लब मिस्ल-ए-सदा जाता हूँ

६

मैं हूँ मुश्ताक़-ए-जफ़ा, मुझ प जफ़ा और सही
तुम हो बेदाद से ख़ुश, इस से सिवा और सही

ग़ैर की मर्ग का ग़म किस लिये, अय ग़ैरत-ए-माह
हैं हवस पेशः बहुत, वह न हुआ, और सही

तुम हो बुत, फिर तुम्हें पिन्दार-ए-ख़ुदाई क्यों है
तुम ख़ुदावन्द ही कहलाओ, ख़ुदा और सही

हुस्न में हूर से बढ़कर नहीं होने के कभी
आपका शेवः-ओ-अन्दाज़-ओ-अदा और सही

तेरे कूचे का है माइल दिल-ए-मुज़्तर मेरा
का'बः इक और सही, क़िब्लः नुमा और सही

कोई दुनिया में मगर बाग़ नहीं है, वा'अिज़
ख़ुल्द भी बाग़ है, ख़ैर आब-ओ-हवा और सही

क्यों न फ़िरदौस में दोज़ख़ को मिलालें, यारब
सैर के वास्ते थोड़ी सी फ़ज़ा और सही

مجھ کو وہ دو، کہ جسے کھا کے نہ پانی مانگوں
زہر کچھ اور سہی، آبِ بقا اور سہی

مجھ سے، غالب، یہ علائی نے غزل لکھوائی
ایک بے داد گرِ رنج فزا اور سہی

۷

ہے غنیمت، کہ بامید گزر جائے گی عمر
نہ ملے داد، مگر روزِ جزا ہے تو سہی

دوست گر کوئی نہیں ہے، جو کرے چارہ گری
نہ سہی، ایک تمنائے دوا ہے تو سہی

غیر سے، دیکھیے کیا خوب نبھائی اُس نے
نہ سہی ہم سے، پر اُس بت میں وفا ہے تو سہی

کبھی آجائے گی، کیوں کرتے ہو جلدی، غالب
شہرۂ تیزیِ شمشیرِ قضا ہے تو سہی

۸

ابر روتا ہے، کہ بزمِ طرب آمادہ کرو
برق ہنستی ہے، کہ فرصت کوئی دم ہے ہم کو

मुझको वह दो, कि जिसे खाके न पानी माँगूँ
ज़ह्र कुछ और सही, आब-ए-बक़ा और सही

मुझसे, ग़ालिब, यह 'अलाई ने ग़ज़ल लिखवाई
एक बेदाद गर-ए-रँज फ़िज़ा और सही

७

है ग़नीमत, कि बउम्मीद गुज़र जायगी 'उम्र
न मिले दाद, मगर रोज़-ए-जज़ा है तो सही

दोस्त गर कोई नहीं है, जो करे चारःगरी
न सही, एक तमन्ना-ए-दवा है तो सही

ग़ैर से, देखिये क्या ख़ूब निभाई उसने
न सही हमसे, पर उस बुत में वफ़ा है तो सही

कभी आजायेगी, क्यों करते हो जल्दी, ग़ालिब
शोह्रः-ए-तेज़ि-ए-शमशीर-ए-क़ज़ा है तो सही

८

अब्र रोता है, कि बज़्म-ए-तरब आमादः करो
बर्क़ हँसती है, कि फ़ुर्सत कोई दम है हमको

۹

چند تصویرِ بتاں، چند حسینوں کے خطوط
بعد مرنے کے مرے گھر سے یہ ساماں نکلا

۱۰

دو رنگیاں یہ زمانے کی جیتے جی ہیں سب
کہ مُردوں کو نہ بدلتے ہوئے کفن دیکھا

۱۱

دمِ واپسیں برِ سرِ راہ ہے
عزیزو ، اب اللہ ہی اللہ ہے

۱۲

ہے کہاں ، تمنا کا دوسرا قدم ، یارب
ہم نے دشتِ امکاں کو، ایک نقشِ پا پایا

९

चन्द तस्वीर-ए-बुताँ, चन्द हसीनों के ख़ुतूत
बा'द मरने के मिरे घर से यह सामाँ निकला

१०

दो रँगियाँ यह ज़माने की जीते जी हैं सब
कि मुर्दों को न बदलते हुये कफ़न देखा

११

दम-ए-वापसीं बर सर-ए-राह है
'अज़ीज़ो, अब अल्लाह ही अल्लाह है

१२

है कहाँ, तमन्ना का दूसरा क़दम, यारब
हमने दश्त-ए-इम्काँ को, एक नक़्श-ए-पा पाया

۱۳

اگر آسودگی ہے مدعائے رنجِ بیتابی
نثارِ گردشِ پیمانۂ مے روزگار اپنا

۱٤

اسد، یہ عجز و بے سامانیِ فرعون توام ہے
جسے تو بندگی کہتا ہے، دعویٰ ہے خدائی کا

۱٥

ہم نے وحشت کدۂ بزمِ جہاں میں جوں شمع
شعلۂ عشق کو اپنا سر و ساماں سمجھا

۱٦

بصورت تکلف، بمعنی تاسف
اسد، میں تبسم ہوں پژمردگاں کا

१३

अगर आसूदगी है मुद्द'आ-ए-रँज-ए-बेताबी
निसार-ए-गर्दिश-ए-पैमानः-ए-मै रोज़गार अपना

१४

असद, यह 'अिज्ज़-ओ-बेसामानि-ए-फ़िर'औन तौअम है
जिसे तू बन्दगी कहता है, दा'वा है ख़ुदाई का

१५

हमने वह्शत कद:ए-बज़्म-ए-जहाँ में ज्यों शम्'अ
शो'लः-ए-'अिश्क़ को अपना सर-ओ-सामाँ समझा

१६

बसूरत तकल्लुफ़, बमा'नी तअस्सुफ़
असद, मैं तबस्सुम हूँ पज़मुर्दगाँ का

۱۷

خود پرستی سے رہے باہم دگر، نا آشنا
بیکسی میری شریک، آئینہ تیرا آشنا

ربطِ یک شیرازۂ وحشت ہیں اجزاے بہار
سبزہ بیگانہ، صبا آوارہ، گل نا آشنا

۱۸

پھر وہ سوے چمن آتا ہے، خدا خیر کرے
رنگ اُڑتا ہے گلستاں کے ہوا داروں کا

۱۹

از آنجا کہ حسرت کشِ یار ہیں ہم
رقیبِ تمناے دیدار ہیں ہم

تماشاے گلشن، تمناے چیدن
بہار آفرینا، گنہگار ہیں ہم

نہ ذوقِ گریباں، نہ پرواے داماں
نگہ آشناے گل و خار ہیں ہم

१७

ख़ुद परस्ती से रहे बाहम दिगर, ना आश्ना
बेकसी मेरी शरीक, आईनः तेरा आश्ना

रब्त-ए-यक शीराज़ः-ए-वहशत हैं अज्ज़ा-ए-बहार
सब्ज़ः बेगानः, सबा आवारः, गुल ना आश्ना

१८

फिर वह सू-ए-चमन आता है, ख़ुदा ख़ैर करे
रँग उड़ता है गुलिस्ताँ के हवादारों का

१९

अज़ आँजा कि हस्रत कश-ए-यार हैं हम
रक़ीब-ए-तमन्ना-ए-दीदार हैं हम

तमाशा-ए-गुल्शन, तमन्ना-ए-चीदन
बहार आफ़रीना, गुनहगार हैं हम

न ज़ौक़-ए-गरीबाँ, न परवा-ए-दामाँ
निगह आश्ना-ए-गुल-ओ-ख़ार हैं हम

اسد، شکوہ کفر و دعا ناسپاسی
ہجومِ تمنا سے لاچار ہیں ہم

۲۰

پھر حلقۂ کاکل میں پڑیں دید کی راہیں
جوں دُود فراہم ہوئیں روزن میں نگاہیں

دیر و حرم، آئینۂ تکرارِ تمنا
واماندگیِ شوق تراشے ہے پناہیں

۲۱

ہوں گرمیِ نشاطِ تصور سے نغمہ سنج
میں عندلیبِ گلشنِ نا آفریدہ ہوں

۲۲

اے نواسازِ تماشا، سر بکف جلتا ہوں میں
اک طرف جلتا ہے دل، اور اک طرف جلتا ہوں میں

ہے تماشا گاہِ سوزِ تازہ، ہر یک عضوِ تن
جوں چراغانِ دوالی صف بصف جلتا ہوں میں

असद‘ शिकवः कुफ़्र-ओ-दु‘आ ना सिपासी
हुजूम-ए-तमन्ना से लाचार हैं हम

२०

फिर हल्क़ः-ए-काकुल में पड़ीं दीद की राहें
ज्यों दूद फ़राहम हुईं रौज़न में निगाहें

दैर-ओ-हरम, आईनः-ए-तकरार-ए-तमन्ना
वामान्दगि-ए-शौक़ तराशे है पनाहें

२१

हूँ गर्मि-ए-नशात-ए-तसव्वुर से नग़्मः सँज
मैं ‘अन्दलीब-ए-गुल्शन-ए-ना आफ़रीदः हूँ

२२

अय नवासाज़-ए-तमाशा, सर ब कफ़ जलता हूँ मैं
इक तरफ़ जलता है दिल, और इक तरफ़ जलता हूँ मैं

है तमाशा गाह-ए-सोज़-ए-ताज़ः, हर यक ‘अज़्व-ए-तन
ज्यों चराग़ान-ए-दिवाली सफ़ ब सफ़ जलता हूँ

۲۳

اسد، بزمِ تماشا میں، تغافل پردہ داری ہے
اگر ڈھانپے، تو آنکھیں ڈھانپ، ہم تصویرِ عریاں ہیں

۲٤

فتادگی میں قدم استوار رکھتے ہیں
برنگِ جادہ سرِ کوے یار رکھتے ہیں

جنونِ فرقتِ یارانِ رفتہ ہے، غالب
بسانِ دشت دلِ پُر غبار رکھتے ہیں

۲۵

ہے طلسمِ دہر میں، صد حشرِ پاداشِ عمل
آگہی غافل، کہ یک امروز بے فردا نہیں

۲٦

مجھے معلوم ہے، جو تو نے میرے حق میں سوچا ہے
کہیں ہو جائے جلد، اے گردشِ گردونِ دوں وہ، بھی

२३

असद, बज़्म-ए-तमाशा में, तग़ाफ़ुल पर्दःदारी है
अगर ढाँपे, तो आँखें ढाँप, हम तस्वीर-ए-'अुरियाँ हैं

२४

फ़ुतादगी में क़दम उस्तुवार रखते हैं
बरँग-ए-जादः सर-ए-कू-ए-यार रखते हैं

जुनून-ए-फ़ुर्क़त-ए-यारान-ए-रफ़्तः है, ग़ालिब
बसान-ए-दश्त दिल-ए-पुर ग़ुबार रखते हैं

२५

है तिलिस्म-ए-दैर में, सद हश्र-ए-पादाश-ए-'अमल
आगही ग़ाफ़िल, कि यक इम्रोज़ बे फ़र्दा नहीं

२६

मुझे मा'लूम है, जो तूने मेरे हक़ में सोचा है
कहीं हो जाये जल्द, अय गर्दिश-ए-गर्दून-ए-दूँ वह भी

۲۷

ہے یاس میں اسد کو ساقی سے بھی فراغت
دریا سے خشک گذرے مستوں کی تشنہ کامی

۲۸

گر مصیبت تھی، تو غربت میں اُٹھالیتے، اسد
میری دہلی ہی میں ہونی تھی یہ خواری، ہائے ہائے

۲۹

بے چشمِ دل نہ کر ہوسِ سیرِ لالہ زار
یعنی یہ ہر ورق، ورقِ انتخاب ہے

۳۰

تا چند پست فطرتیِ طبعِ آرزو
یارب، ملے بلندیِ دستِ دعا مجھے

یک بار امتحانِ ہوس بھی ضرور ہے
اے جوشِ عشق، بادۂ مرد آزما مجھے

२७

है यास में असद को साक़ी से भी फ़राग़त
दरिया से ख़ुश्क गुज़रे मस्तों की तश्नःकामी

२८

गर मुसीबत थी, तो ग़ुर्बत में उठा लेते, असद
मेरी देह्ली ही में होनी थी यह ख़्वारी, हाय हाय

२९

बे चश्म-ए-दिल न कर हवस-ए-सैर-ए-लालःज़ार
या'नी यह हर वरक़, वरक़-ए-इन्तिख़ाब है

३०

ता चन्द पस्त फ़ितरति-ए-तब'-ए-आरज़ू
यारब, मिले बलन्दि-ए-दस्त-ए-दु'आ मुझे

यक बार इम्तिहान-ए-हवस भी ज़रूर है
अय जोश-ए-'अिश्क़, बादः-ए-मर्द आज़्मा मुझे

۳۱

اسد، اُٹھنا قیامت قامتوں کا، وقتِ آرایش
لباسِ نظم میں، بالیدنِ مضمونِ عالی ہے

۳۲

ہم مشقِ فکرِ وصل و غمِ ہجر سے، اسد
لائق نہیں رہے ہیں، غمِ روزگار کے

۳۳

اسد، بندِ قبائے یار ہے فردوس کا غنچہ
اگر وا ہو، تو دکھلا دوں، کہ یک عالم گلستاں ہے

۳٤

آتش افروزیِ یک شعلۂ ایماں تجھ سے
چشمک آرائیِ صد شہرِ چراغاں مجھ سے

३१

असद, उठना क़यामत क़ामतों का, वक़्त-ए-आराइश
लिबास-ए-नज़्म में, बालीदन-ए-मज़मून-ए-'आली है

३२

हम मश्क़-ए-फ़िक्र-ए-वस्ल-ओ-ग़म-ए-हिज्र से, असद
लाइक़ नहीं रहे हैं, ग़म-ए-रोज़गार के

३३

असद, बन्द-ए-क़बा-ए-यार है फ़िरदौस का ग़ुंचः
अगर वा हो, तो दिखला दूँ, कि यक 'आलम गुलिस्ताँ है

३४

आतश अफ़रोज़ि-ए-यक शो'लः-ए-ईमाँ तुझसे
चश्मक आराइ-ए-सद शहर-ए-चराग़ाँ मुझसे

۳۵

اسد، بہارِ تماشاے گلستانِ حیات
وصالِ لالہ عذارانِ سر و قامت ہے

۳۶

رشک ہے آسایشِ اربابِ غفلت پر، اسد
پیچ و تابِ دل، نصیبِ خاطرِ آگاہ ہے

۳۷

توڑ بیٹھے، جب کہ ہم جام وسبو، پھر ہم کو کیا
آسماں سے بادۂ گلفام، گو برسا کرے

۳۸

تا چند، نازِ مسجد و بت خانہ کھینچیے
جوں شمع، دل بہ خلوتِ جانانہ کھینچیے

عجز و نیاز سے تو نہ آیا وہ راہ پر
دامن کو اُس کے آج حریفانہ کھینچیے

३५

असद, बहार-ए-तमाशा-ए-गुलिस्तान-ए-हयात
विसाल-ए-लाल: 'अिज़ारान-ए-सर्व क़ामत है

३६

रश्क है आसाइश-ए-अर्बाब-ए-ग़फ़्लत पर, असद
पेच-ओ-ताब-ए-दिल, नसीब-ए-ख़ातिर-ए-आगाह है

३७

तोड़ बैठे, जबकि हम जाम-ओ-सुबू, फिर हमको क्या
आस्माँ से बाद:-ए-गुल्फ़ाम, गो बरसा करे

३८

ता चन्द, नाज़-ए-मस्जिद-ओ-बुतख़ान: खेंचिये
ज्यों शम्'अ, दिल ब ख़ल्वत-ए-जानान: खेंचिये

'अिज़्ज़-ओ-नियाज़ से तो न आया वह राह पर
दामन को उसके आज हरीफ़ान: खेंचिये

ہے ذوقِ گریہ، عزمِ سفر کیجیے، اسد
رختِ جنونِ سیل بہ ویرانہ کھینچیے

۳۹

خود نامہ بن کے جائیے، اُس آشنا کے پاس
کیا فائدہ کہ منتِ بیگانہ کھینچیے

٤٠

جام ہر ذرہ ہے سرشارِ تمنا مجھ سے
کس کا دل ہوں، کہ دو عالم سے لگایا ہے مجھے

٤١

گدائے طاقتِ تقریر ہے زباں تجھ سے
کہ خامشی کو ہے پیرایۂ بیاں تجھ سے

فسردگی میں ہے فریادِ بیدلاں تجھ سے
چراغِ صبح و گلِ موسمِ خزاں تجھ سے

بہارِ حیرتِ نظارہ، سخت جانی سے
حنائے پائے اجل خونِ کشتگاں تجھ سے

है ज़ौक़-ए-गिरियः, 'अज़्म-ए-सफ़र कीजिये, असद
रख़्त-ए-जुनून-ए-सैल ब वीरानः खेंचिये

३९

ख़ुद नामः बन के जाइये, उस आश्ना के पास
क्या फायदः कि मिन्नत-ए-बेगानः खेंचिये

४०

जाम-ए-हर ज़र्रः, है सर्शार-ए-तमन्ना मुझसे
किसका दिल हूँ, कि दो 'आलम से लगाया है मुझे

४१

गदा-ए-ताक़त-ए-तक़रीर है ज़बाँ तुझ से
कि ख़ामुशी को है पैरायः-ए-बयाँ तुझ से

फ़सुर्दगी में है फ़रियाद-ए-बेदिलाँ तुझ से
चराग़ः-ए-सुबह-ओ-गुल-ए-मौसम-ए-ख़ज़ाँ तुझ से

बहार-ए-हैरत-ए-नज़्ज़ारः, सख़्त जानी से
हिना-ए-पा-ए-अजल ख़ून-ए-कुश्तगाँ तुझसे

طراوتِ سحر ایجادیِ اثر، یک سُو
بہار نالہ و رنگینیِ فغاں تجھ سے

چمن چمن گلِ آئینہ در کنارِ ہوس
اُمید محوِ تماشاے گلستاں تجھ سے

نیاز، پردۂ اظہارِ خود پرستی ہے
جبینِ سجدہ فشاں تجھ سے، آستاں تجھ سے

بہانہ جوئیِ رحمت، کمیں گرِ تقریب
وفاے حوصلہ و رنجِ امتحاں تجھ سے

اسد، بہ موسمِ گل در طلسمِ کنجِ قفس
خرام تجھ سے، صبا تجھ سے، گلستاں تجھ سے

तरावत-ए-सहर ईजादि-ए-असर, यकसू
बहार-ए-नालः-ओ-रँगीनि-ए-फ़ुग़ाँ तुझ से

चमन चमन गुल-ए-आईनः दर कनार-ए-हवस
उमीद महव-ए-तमाशा-ए-गुल्सिताँ तुझ से

नियाज़, पर्दः-ए-इज़्हार-ए-ख़ुदपरस्ती है
जबीन-ए-सिज्दः फ़िशाँ तुझसे, आस्ताँ तुझ से

बहानः जूइ-ए-रहमत, कमीं गर-ए-तक़रीब
वफ़ा-ए-हौसलः-ओ-रँज-ए-इम्तिहाँ तुझ से

असद, ब मौसम-ए-गुल दर तिलिस्म-ए-कुँज-ए-क़फ़स
ख़िराम तुझसे, सबा तुझसे, गुल्सिताँ तुझ से

बयाज़

ملنے کے پتے:

قیمت ۲۵ روپے

مکتبہ جامعہ (لمیٹڈ)
پرنسس بلڈنگ
بمبئی ۳

✡

رائٹرس ایمپوریم (پرائیویٹ لمیٹڈ)
پوسٹ بکس ۱۴۱۱
بمبئی ۱

✡

اُردو پبلشرز
۶۳- مورلینڈ روڈ
بمبئی ۸

✡

انجمن ترقئ اُردو (ہند)
علی گڑھ
(یو-پی)

✡

ادبی پرنٹنگ پریس بمبئی ۸ میں چھپا
سنہ ۱۹۵۸ء

मिलने के पते :

मूल्य : २५)

मक्तबः जामि'अः (लिमिटेड)
प्रिन्सेस बिल्डिंग
बम्बई ३.
✡

राइटर्स एम्पोरियम (पराइवेट लिमिटेड)
पोस्ट बॉक्स १४११
बम्बई १.
✡

उर्दू पब्लिशर्स
६३, मोग्लैण्ड रोड
बम्बई ८.
✡

अंजुमन तरक्क़ि-ए-उर्दू (हिन्द)
अलीगढ़
(यू. पी.)
✡

अदबी प्रिंटिंग प्रेस बम्बई ८ में छपा
१९५८